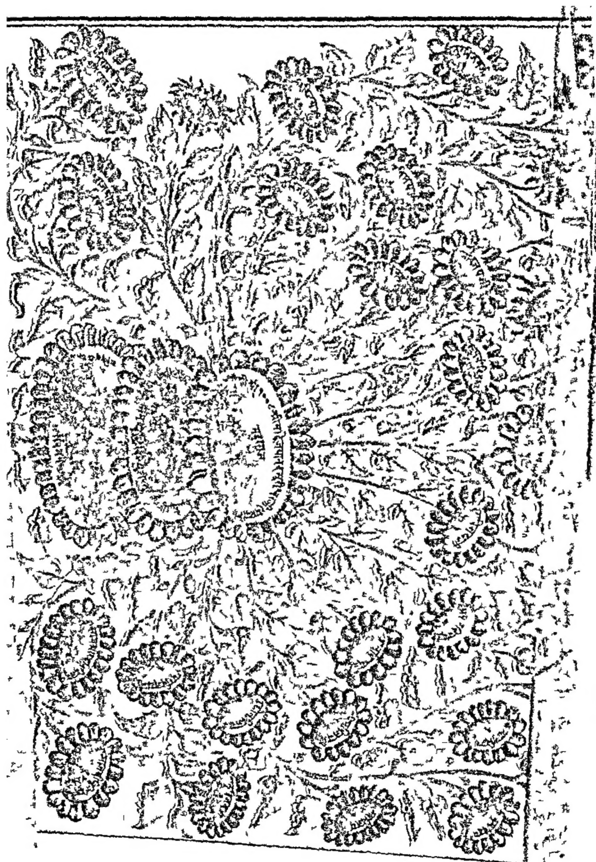


सूचना

+ इस चिन्हवाले श्रावक चले गये व तथा । उत्तावहार हैवे

卐 इस चिन्हवाले स्वर्गवास हुए हैवे

॥ ॐ ॥

प्रसिद्धकर्त्ताकी प्रस्तावना.

इस सृष्टिमें प्राणीमात्रको धर्मका शरण है जैसे सृष्टिमें हरेक प्रकारकी क्रियाका बंधन स्वभाव है, वैसे जन्मसें मरण पर्यंत धर्म प्राणीमात्रका सच्चा है परंतु धर्मके दर्शन, धर्मकी शाखायें इतनी सारी हो गई है, कि सत्य धर्मसें दूसरेको पिछानना एक कठिन सवाल है सब अपने २ धर्मकी तारीफ कर रहे हैं. कोई पुनर्जन्मको मानता है. कोई नहीं मानता, कोई पाप पुण्य कबूल करता है, कोई प्रकृतिके शिवाय सब बातोंका निषेध करता है ऐसें अनेक प्रकारके धर्मको देखके जिज्ञासुको विभ्रमता होती है, कि किसको सच्चा और किसको जूठा माने

सर्व दर्शनके स्वरूपको विस्तारपूर्वक देखा जाय तो जिसका तत्त्वज्ञान, निष्कलंक शंका रहित और सर्वथा मानने योग्य है, वैसा दर्शन केवल एक जिनदर्शन है. जैनमतके लिये कितनेक ईंग्रेजी शिक्षण पाये हुये (नई चमकवाले) आदमीने बहोत गोता खाया है प्राय अंग्रेजी ऐतिहासीकोंने और आधुनिक पंडिताभासोंने कई कल्पना करके जैनधर्मको बौद्धकी शाखा बताई है, और एक नवाही धर्म बताया है और अजितनाथ धर्मनाथ आदि तीर्थंकरोंके नाम भर्तृहरिके समयके मच्छंदरनाथ, गोरखनाथ जैसें नाथकुलके बतलाकर भर्तृहरिके समयसें जैनधर्म चला भी कह देते हैं परंतु कितनेक बडे पाश्चात्य विद्वानोंने परिश्रम करके ऐतिहासिक पुरावे इकठे करके जैनधर्मको बहुत पुराना धर्म सबूत किया है (देखो इस ग्रंथका पृष्ठ ५३५–५८०)

डा० मॅक्स् मुलर इस जमानेमें आर्यविद्याके एक बडे पंडित गिने जाते हैं. उन्होंने कहा है कि सारी दुनियाके पुस्तकोंमें सात पुस्तक श्रेष्ठ है उसमें दूसरे नंबरमें जैनोंका कल्पसूत्र पुस्तक रखा है, और पहेले नंबरमें बाईबल्को रखा है धर्मांधपणाके वश होकर बाईबलको प्रथम पंक्तिम रखा होगा. धर्मकी परीक्षा, न्यायदृष्टीसें होनी चाहिये, अगर इस दृष्टिसें भट्ट मॅक्स् मुलर देखते तो कल्पसूत्रको अवश्य प्रथम पंक्तिमें रखते यह कल्पसूत्र जैनोंका एक पुराना ग्रंथ है पहिले यह रीवाज था कि सूत्र मुखपाठ रखते थे. श्री महावीर स्वामिके पाटधारी श्री भद्रबाहुस्वामी चतुर्दशपूर्वके पाठी वगैरहने नियमोंका अनुक्रम किया बाद देवर्द्धीगणिक्षमाश्रमणने पुस्तकके आकारमें लिखे परंतु जैनधर्मका इतिहास नही जानने-वाले जैनपुस्तकको श्रीभद्रबाहुस्वामी या देवर्द्धीगणिक्षमाश्रमणका बनाया हुवा लिखकर जैनधर्म थोडे कालसें चला है, ऐसी विभ्रमता करे उसमें क्या आश्चर्य है? धर्मके नियम अनादि है, सूत्रोंकी रचना तीर्थंकरोंके वखतमें हुई है

आधुनिक समयके कितनेक पाश्चिमात्य विद्वानोंने यह जाहिर किया है कि वेदधर्म प्राचीन याने ई स पूर्वे ३००० सें लेके ७००० पर्यंतका है. याद करते हैं कि बौद्धधर्म ई स.

पूर्वी ५०० से १००० वर्षतकका पुराना है बाद जैन धर्मकी उत्पत्ति इ स पूर्वी ७०० से ८०० वर्षकी मानते है अभी प्रायः धर्मशिक्षणके अभावसें झट एसा मान देते हैं कि किसी यूरोपियनने लिखा मानु परमेश्वरने कहा

जैनधर्मके प्राचीनपणेके असख्य पुरावे पुस्तकोंद्वारा मिल सकते है इतनाही नहीं परतु इस धर्मके अर्वाचीनपणेके विरुद्धमें बहुत बातें प्रसिद्धीमें आने लगी हैं इस ग्रथके स्तभ ३२ में ग्रथकर्त्ताने बहुतसी सबूतें जैनधर्म प्राचीन होनेकी दि है इ० स० १८९३ में मद्रास प्रेसिडेन्सी कालेजके सस्कृत और कपेरेटीव फाईलोलोजी (भाषाशास्त्र) के प्रोफेसर मि० गुस्ताव ओपर्ट पी एच डी ने शाकटायन व्याकरण प्रसिद्ध किया है जिसपरसें जैनधर्मकी प्राचीनताकी सिद्धिमे बहुतसी ऐसी बातें जाहिरमें आई है कि, जैनधर्मको अर्वाचीन बतानेवाले बहुतसें पडित चकित हो गये है क्योंकि यह शाकटायन व्याकरणके कर्त्ता जैनधर्मानुयायी भये है और उसका अनिवार्य कारण प्रो० मि० ओपर्टकी नीचे लिखी प्रीफेस * (उपोद्घात) देखनेसें मालुम पडेगा

१ शाकटायन व्याकरणका प्रथम मगलाचरण यह है

नम· श्रीवर्धमानाय प्रबुद्धाशेषवस्तवे ॥
येन शब्दार्थसबधास्सार्वेण सुनिरूपिताः ॥ १ ॥

अर्थ —जिस सर्वज्ञ प्रभुने शब्द और अर्थका सबंध निरुपण किया है, जो सब वस्तुके स्वरूपके जानकार है, ऐसे श्री वर्धमान प्रभु (जैनोंके चोवीसमे तीर्थंकर श्री महावीरस्वामि) को नमस्कार हो

२ शाकटायनाचार्य अपने व्याकरणके प्रत्येक पदातमें,

"॥ महाश्रमणसघाधिपते श्रुतकेवलिदेशीयाचार्यस्य शाकटायनस्य ॥"

ऐसा लिखते हैं. उसमें श्रमणसघाधिपति और श्रुतकेवली शब्द ऐसें हैं, जो केवल जैनधर्मके साकेतिक शब्द है, यह शब्द दूसरे धर्मपुस्तकमें नहीं मिलते हैं

---

* PROFESSOR GUSTAV OPPERT PH D, WRITES —

Panini refers to Sákatayana as a previous Grammarian and thus supplies a reason why the latter makes no mention of the former Sákatayana's name occurs also in the Pratisakhyas of the Rigveda and Sukla-Yajurveda, and in Yáska's Nirukta

The Colophon at the end of each Páda of the Sabdanusasana names this Grammar as the work of Sáktayana Srutakevalidesiyacharya, the president of the great Jain assembly महाश्रमणसघाधिपते श्रुतकेवलिदेशीयाचार्यस्य शाकटायनस्य

Panini repeatedly mentions Sáktayana and the places thus alluded to, are also found in the Sábdanusasana Panini III 4, 111 VIII 3 18, and VIII 4 50 correspond respectively to Sakatayana's आद द्विषो हेतुस्वा (pp 35, 9 & 220 -90) पाहुस्याद् (pp 8 12 and 14, 65), and न सयोगे (pp 6 18 and 9, 31)

३ इस व्याकरणकी वहोतसी टीकायें हाथ लगी है. उन टीकाकारोंने भी शाकटायनाचार्यको परम जैनी कहा है उसका मात्र एक दृष्टांत यह है कि टीकाकार यक्षवर्मन कहते हैं कि —

स्वस्तिश्रीसकलज्ञानसाम्राज्यपदमाप्तवान् ॥
महाश्रमणसंघाधिपतिर्यःशाकटायनः ॥

अर्थ—सब ज्ञान प्राप्त करके जिनोंने विद्वानोंमें चक्रवर्ती पद प्राप्त किया है, ऐसे महान साधुओंके संघका अधिपति (जैनाचार्य) शाकटायनाचार्य भये हैं.

४ शाकटायनाचार्य जैनी सिद्धहुये, अब मूल बातपर आके जैनधर्मका प्राचीनपणा मुजको प्रसिद्ध करना चाहीये

प्रसिद्ध वैयाकरण पाणिनी ऋषिके पहिले शाकटायनाचार्य हुवे है, यह बात सिद्ध है, क्योंकि—

त्रिप्रभृतिषु शाकटायनस्य ॥ लङः शाकटायनस्यैव ॥ व्योर्लघु-
प्रयत्नतर शाकटायनस्य ॥

इत्यादि सूत्र पाणिनी ऋषिने अपने व्याकरणमें दाखल किया है. परतु शाकटायन व्याकरणमें पाणिनिका नाम भी नजर नही आता, इससें सिद्ध है कि शाकटायनाचार्य पाणिनि ऋषिके पहिले हुए है

पाणिनि ऋषिने शाकटायनके कितनेही सूत्र कुछ भी फेरफार किये विना अपने व्याकरणमें दाखल किये हैं जैसेकि—

त्वाहौ सौ ॥ यूयवयौ जसि ॥ तुभ्यमह्यौ ङयि ॥ इत्यादि.

पाणिनिव्याकरणके महाभाष्यका कर्ता पतंजली ऋषि भी शाकटायनको याद करते हैं कि—

नामचधातुजमाह व्याकरणे शकटस्यचतोकम् ।
वैयाकरणानां च शाकटायन आह धातुज नामेति ॥

Patanjali in his Mahabhashya refers also to Sâkatayana when he comments on Panini III 4, 111 and III 3, 1 (उणादयो बहुलम्) In the latter place he remarks —

नामचधातुजमाह व्याकरणे शकटस्यचतोकम् । वैयाकरणानां च शाकटायन आह धातुज नामेति ॥

In fact the Unadisutras of Saktayana have found general admission among Grammarians and have been annotated by various commentators such as Ujjvaladatta, Madhava and others

कवि कल्पद्रुमका कर्त्ता वोपदेव भी शाकटायनको प्राचीन वैयाकरण गीनते है

इन्द्रश्चन्द्रकाशकृत्स्नापिशली शाकटायन ।
पाणिन्यमरजैनेंद्रा जयत्यष्टादिशाब्दिका' ॥

अर्थ -इन्द्र, चद्र, काशकृत्स्न, आपिशली, शाकटायन, पाणिनि, अमर और जैनेंद्र यह आठही वैयाकरण प्राचीन है

उक्त प्राचीनाचार्य शाकटायनका नाम ऋग्वेद और शुक्ल यजुर्वेदकी प्रतिशाखा और यस्कराकी निरुक्तिमें भी आता है, इत्यादि लिखना प्रो० आपटेका है विस्तारपूर्वक देखना होवे तो उक्त व्याकरणमें देख लेवें

यह जैनधर्म कि जिसकी प्राचीनता महान विद्वानोंने पुरा खोज करनेके बाद कबूल किई हैं, उसका रहस्य क्या है ? जैनी ईश्वरको कर्त्ता नहीं मानते है, जिस बातका खुलासा इस पुस्तकमें आवेगा यह जैनधर्म कितना बडा दिलवाला है कि केवल एक धर्म, एक जाती, एक प्रजा गिनता है देशाटनके लिये कितनी छूट ! जैनी अनादि सदामुक्त जगत्का कर्त्ता हर्त्ता ऐसा एक ईश्वर नहीं मानते है परतु प्रजासत्ताक राज्य (समानकार्य करनेवाले एक सरिखे हकके भागी) के माफिक, तीर्थकर जिनको जैनी ईश्वर मानते हैं, वे मनुष्य थे आत्माको पिछानके उनोंने कर्मका त्याग किया राग द्वेषरूप दुष्मनोंका क्षमारूप शस्त्रसें पराजय किया केवलज्ञान पाकर सिद्धगतिको प्राप्त भये ईसी रस्ते जानेका मार्ग उन्होंने दूसरोंको दिखाया और ऐसा मार्ग दिखाया कि दूसरोंको

Sáktayana is mentioned as one of the eight principal Grammarians in the well known Sloka found in the Kavikalpadruma of Bopadeva and elsewhere These eight Grammarians thus named are —

Indra, Chandra, Kasakrtsana, Apisali, Saktayana, Panini, Amara, and Jainendra The Sloka runs as follows —

इन्द्रश्चन्द्रकाशकृत्स्नापिशली शाकटायन । पाणिन्यमर जैनेंद्रा जयत्यष्टादिशाब्दिका ॥

Sáktayana mentions in his Sutras only Indra, pp 11, 14 and 34, 92, Siddhanandin, pp 47 15 and 87, 34, and Aryavajra pp 10, 11 and 12, 13 as previous Grammarians

× × × × × × × × × ×

A striking feature of the Sabdanusasana is that it does not treat of the Svaravaidika while Panini pays particular attention to it Vedic words, however, are otherwise much noticed by Saktayana, and in this respect his work is not deficient to Panini

The omission of the Svaravaidika accounts perhaps for the neglect Sáktayana has suffered at the hands of the Brahmans, while it explains the favour with which he is regarded by the Jainas If Saktayana was Jaina this omission must be regarded as intentional &c &c &c &c &c &c

सरल रस्ता मिल सके यदि दूसरें भी ईसी तरह वर्त्ते तो तीर्थंकर होना शक्य है. गत, वर्तमान और अनागत चोवीसीके सब तीर्थंकर चरित्र नीति और गुणमें श्रेष्ठ है उन गुणोंके प्रकाश करनेवाले सूत्रोंको देखनेसें कोई विरुद्ध बात पाई नहीं जाती है चक्रवर्त्तीकी याचना करनेसें वो दूसरेको समान नहीं कर सकता है, श्रीजिनदेवकी भक्ति तो जिनराजही कर देती है

जैन धर्मका रहस्य यह है कि सब जिवोंका रक्षण करना (दया पालनी) सबको समान समजना, भ्रातृभाव रखना, विद्याशाला, औषधालय, पशुशाला स्थापना, साथ मिलकर भक्ति करना, पापका पश्चात्ताप करना, पापकर्मसें छुटनेको धर्मका ज्ञान संपादन करना, पाप नहीं करनेको दृढ निश्चय करना, किसीसें राग द्वेष नहीं करना, अगर भूलसें वा प्रमादके वशसें होगया होवे तो मनमें पश्चात्ताप करकेक्षमाका चाहना, सद्धर्मको फैलाना, प्रवृत्तिमार्गको त्यागके निवृत्तिमार्ग लेना, आत्मज्ञान प्राप्त करना, पापरहित उद्यममें प्रवर्त्तना, मन, वचन, काया, (कर्म)में पवित्र होना, सत्य बोलना, ब्रह्मचर्य पालना, क्रोध, मान, माया, लोभ, आदिका त्याग करना, संयम, मनोनिग्रह और तप करना धर्ममार्गको पुष्टी देनेवाले येह तमाम कार्य हैं. इनको साध्य करनेको और आत्माके कल्याण करनेको निर्लोभी, निर्विकारी, शांत, दांत, संयमी विद्वान सद्गुरुके सदुपदेशकी अतीव आवश्यकता है.

जैनलोक दयाको मुख्यताकरके मानते हैं उसका सबब यह है कि " दया " का अर्थ अंतरंग वृत्तिसें दूसरोंके हितके विषे द्रवित होना "दया" शब्दके वाच्यार्थका अंगिकार आर्यप्रजाके सब दर्शनानुयायिको मान्य है "दया" शब्दका लक्ष्यार्थ समजनेका दावा सब करते है, परंतु दयाका श्रेष्टोत्तम लक्ष्य तो जिस दर्शनशास्त्रमें सर्व आत्माको समान गिनकर स्थावर और जंगम जिवात्माओंका अनेकानेक भेद सूक्ष्मोत्तम प्रकारसें वर्णन किया हो, उस दर्शनके शिवाय कुशाग्रबुद्धिद्वारा अवलोकन करनेवालेको भी प्रायः नजर आता नहीं है.

नैयायिको अपनी शास्त्रीय परिभाषामें दयाका पालना संप्रेम स्वीकारता है परंतु कौनमें कौनसें द्रव्य सचित्त है, किस प्रकारके वर्त्तनसें उनको सक्लिष्टता होगी, ऐसे भेदांतर-सह भिन्न भिन्न प्रकारका विवेचन नैयायिकदर्शनमें दृष्टिगोचर होता नहीं है, तो उस दर्शनके संप्रदायिको तो कहासे समज शके ? सांख्यदर्शनवेत्ता सूक्ष्म पर्यालोचनापूर्वक दयाका रहस्य दिखा सकते है, ऐसा कहना उनके शास्त्रशैलिके अनुभव करते हुए, निष्पक्षपाति शास्त्राभ्यासिको मान्य नहि है. पूर्वमीमांसको यज्ञादिक कर्मोकरके पंचेंद्रियातिर्यक प्राणिका भोग देके धर्म मानते हैं और दयाकी अभिरुचिवाले अपनेको बताते हैं मीमांसको दया शब्दका पारमार्थिक रहस्य समजते नहि है, इतना नहि परंतु दया शब्द शुकवत् वाणी मात्र कह जानते हैं वेदान्तवेत्ताओ पृथ्वी, अप, तेज, वायु, वनस्पति ये सबमें चेतनसत्ता स्विकारके इन ५ तत्त्वोंके जीवात्मा सुषुप्ति अवस्थावाले है, ऐसा समजके उनके प्राण, व्यतिपात करते हुए, पापोद्भव मान्य करतें नहि है याहुदी, जरतोस्ती, महम्मदीय प्रजा स्थावर जगमात्मक सब द्रव्योंमें ईश्वरी सत्ता स्विकारके, जगम जीवोंमें आत्मतत्त्व शास्त्रशैलिसें मान्य रखकर दयाशब्दकी प्रियता बताते है, तो भी भक्ष्याभक्ष्यका लक्ष रखते नहि है क्रिश्चियन धर्मवेत्ताओ मनुष्यके शिवाय अन्य प्राणीओंमें आत्माका अस्तित्व स्विकारते नहि है. अन्य

प्राणीओंमें प्रत्यक्ष प्रमाणसें चेतनाका अनुभव होता है, तो भी कौनसें विशेष प्रबल प्रमाणसें ऐसा कहते है,' यह समजना पक्षपातसें तटस्थ रहकर अवलोकन करनेवालेको कष्टसाध्य है. मनुष्यमें आत्मतत्त्व अंगीकार करके दया करनेका प्रेमपूर्वक सिखाते है ईसी तरह जनसमुदायके अनेकानेक समदायिको दयाका लक्ष्य आपनी भिन्न २ रुचिके अनुसार स्वीकारके वर्त्तन करते है दयाका वाच्यार्थ और लक्ष्यार्थका भिन्न भिन्न स्वरूप सर्व दर्शनाभ्यासियोंको द्रष्टव्य होगा

यदि निरीक्षक उच्चतम बुद्धिशाल निष्पक्षपाती और विचारविवेकसंपन्न होवेगा तो स्वाभाविक रीतिसें दयाका सर्वांशे लक्ष्यका गृहण करनेवाले दर्शनका विजय सिद्ध करके सर्वोपरि दयाके तत्त्वानुवादकी उत्तमोत्तम दिव्य प्रसादिका सुनील आत्मश्रेणीकी प्राप्तिके उत्सुक मुमुक्षुवर्गको रसास्वाद प्राप्त करावेगा यह बात निःसंदेह है. सर्वांशसें दयाका लक्ष्यार्थ प्रतिपादक दर्शन, विनय, क्षमा, ज्ञान, ध्यान, चारित्र, तप, स्वाध्याय, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, सौजन्यता, सुशीलतादिके शुद्ध स्वरूपका तादात्म्य दिखा सके यह स्वाभाविक है क्योंकि दया यह धर्मरूप वृक्षका बीज है, सर्वांगपूर्णबीज बोया जावे और शास्त्रविचाररूप जल योग्य रीतिसें शुद्ध मतिज्ञानरूप भूमिमें सेचन किया होवे तो विनयादि अन्यधर्म लक्षण अनायाससें प्राप्त होवे जिसमें आश्चर्य क्या? जैनदर्शनमें दयाका मार्गसें वर्त्तन करनेके अनेक द्वार है प्रथम शास्त्राधिकारीको भी आकर्षणकारी मनोहर दयामार्ग जैनदर्शनकी भव्यतामें पूज्यता उत्पन्न कराके निरीक्षकको दया मार्गमें रसलुब्ध करनेमें सदाकाल विजयी होगा, ऐसा उत्तम शास्त्राभ्यासियोंका मानना है

जैनदर्शनमें स्थावर प्राणियोंका पृथ्वी, पाणी, अग्नि, वायु, और वनस्पति ऐसे पांच भेद है जंगमके द्वींद्रिय, त्रींद्रिय, चतुरिंद्रिय, पचेंद्रिय, ऐसे चार प्रकार परम विशुद्ध भावनासें प्रतिपादन करके उनर प्राणियोंके लक्षण दिखाकर स्वआत्माकी तरह सर्व प्राणीके आत्माको समजके उनके तरफ समानबुद्धिसें उनके आत्माको किसी प्रकारसें भी क्लेश न हो, ऐसा वर्त्तन करनेको उग्रशब्दज्वालाकी कांति श्रोताके हृदयमंदिरको प्रकाशित करके बोधश्रेणि सुस्थापित करी है कीतनेक धर्मावलंबी किसी प्राणीको रोगादिसें पीडित देखकर उनकी अंतावस्था करनेमें दया मानते हैं, परतु जैनदर्शन अनेक प्रमाणोसें ईस बातको असत्य ठहराकर कहता है कि सब प्राणिको चाहे जैसी दु खी अवस्थामें भी जीवनकी इच्छा तीव्र होती है जीवन कष्टके असंख्य प्रवाहोंमें भी प्राणियोंको प्रीयतम होता है अनेक तीव्र वेदनासें पीडित अंत करणका लक्ष तो जीवन सधि रखनेमेंही परम दृष्टीस्थान अनुभवता है, यह बात सब विचारशील मनुष्यको प्रत्यक्ष अनुभवसें ज्ञेय है यही सिद्धांत प्रबल प्रमाण पूर्वकसर्वज्ञ श्री महावीरने प्रतिपादन किया है स्थावर जीवात्माओंके सूक्ष्म प्रदेशमें असंख्य जीवोंका अस्तित्व स्वीकारते हैं वनस्पतिकायके प्रत्येक और साधारण सूक्ष्म भागमें असंख्य और अनंत जीवात्माओंका अस्तित्व अनेक प्रमाणोसें सिद्ध करके दिखाया है

सब जीव चेतना लक्षणवंत है चेतना होवे वहां सुख दु खका जानपणा नित्य होवे यह निर्विवाद है जंगम जीवोंका सुख दु खका जानपणा स्थूल दृष्टिसें देखनेसें भी लक्षित होता है परंतु स्थावर जीवोंका ज्ञान सूक्ष्म दृष्टि सिवाय समजना दुर्लभ है चेतना

सिवाय वस्तुका बढना, कमी होना हो नहि सकता है. पृथ्वी आदिकी वृद्धि क्षयकी अनेक क्रियाओं अनेक नियमोसें निरंतर होती हैं. इस बातका सबको प्रत्यक्ष अनुभव है यह बात देखते है तो चेतना सर्व द्रव्यमें व्याप्त हो रही है यह स्वीकार करके भी चेतनको अंगसुख दुःखका वेदकपणा होना चाहिये यह समजना सामान्य बुद्धिसें मुश्किल है स्थावर प्राणियोंमें चेतनको अगसुखदुःखका जानपणा विद्यमान है. तीर्थंकरोंने स्थावर प्राणियोंमें चार संज्ञाका आहार, शरीर, इंद्रिय, और श्वासोश्वास ये चार पर्याप्ति अस्तित्व फरमाया है जिनके नाम आहार, भय, मैथुन, और परिग्रह वनस्पतिमें आहार संज्ञा है, जिससें वृद्धि होती है, भय संज्ञा है, जिससें पाषाणादि द्रव्य बीचमें आनेसें दूसरे मार्गसें वृद्धि होती है, मैथुन संज्ञा होनेसें नर जातिको फरशी हुई धूली नारी जातिके वृक्षोंको स्पर्श करनेसें नारी जातिके वृक्ष नवपल्लव होकर फलते हैं *

परिग्रह संज्ञामें नये २ परमाणुको ग्रहणकरके वृद्धि होती है वैसेही पृथ्वी आदिमें आहारादि संज्ञाका अस्तित्व पदार्थ विज्ञानादि शास्त्रोंके अवलोकनसें अनुभवगम्य हो सकता है स्थावर द्रव्योंमें संज्ञाका अस्तित्व स्वीकारनेसें चेतना स्वीकारी जाती है और चेतना स्वीकारनेसें ज्ञानका अस्तित्व स्वीकारना पडता है इस संकलनासें मालूम होता है कि ज्ञातापणाकी प्रेरणासेंही संज्ञाका उद्भव होता है ज्ञातापणामें सुखदुःखका वेदकस्वरूप होता है स्थावरमें सुखदुःखका भोक्तापणा इस प्रकारसें संभवित होता है जिसको सुख-दुःखका ज्ञातापणा है, उसके ज्ञातापणेको क्लेश न हो, इस तरहसें वर्त्ताव रखना यही दयाका लक्षण है ऐसी अनुपमेय वर्णन शैलिसेंयुक्त जैनदर्शनके सिद्धांत स्थावर जंगम प्राणियोंकी दया पालनेको अनेक रीतिसें स्पष्ट करके दिखाते है दयामार्गके प्रतिपादक भिन्न २ लेख वैष्णवी, रामानुजी, चैतन्यमार्गी, कबीरपंथी, निमानंदी, दादुपंथी, नानकपंथी आदिके ग्रंथोंमें मीलते हैं वे लेख अनेक प्रमाणोंसें पुष्ट किये हुवे हैं तथापि स्थावर जीवात्माओंकी अनेक क्रियायोंनिकि सूक्ष्म विवेचनयुक्त लेख सत्यनिष्ट अंतःकरणवाले बुद्धिकौशल्य शील पुरुषको जैन तत्त्व दर्शनिक शास्त्रोंके सिवाय दृष्टिगोचर कदापि नहिं होगा तीर्थंकरप्रणित जैन तत्त्वशास्त्रोंमें दया यही धर्मका रहस्य गिनकर ज्ञान, दर्शन, तप, संयम, वृत्तादिक निरूपण करके अरूपी आत्माका अवर्णनीय स्वरूप लक्षणोंद्वारा आत्मा अनात्मा (जीव अजीव) पुण्य, पाप, आस्रव, संवर, निर्जरा बंध और मोक्ष इन नव तत्त्वोंका अति स्फुट वर्णन दृष्टिगोचर कराके गुरुद्वारा, शास्त्राध्ययन करनेवालेको सम्यकबोधसें आत्मविचारश्रेणिकी अलौकिकतामें आनंदमय कर देता है सम्यक्ज्ञान, सम्यक्दर्शन, सम्यक्चारित्ररूप रत्नत्रयि जैन

* युरोपियन तत्वज्ञानियोंने ईसी माफक शोध की है कि नर वृक्षके फूलादिकी रज उडकर नारि जातिके पुष्पमें प्रवेश करे, जब इस मैथुनसें नारि वृक्ष फलता है वंध्या प्राय दाडिमादि वृक्षके फलनेको इस इलाजको काममें लगाते हैं, यह शोध पांच पचास वर्षकी बताते हैं, परंतु जैनसिद्धांतमें अनादि कालसें यह बात मान्य है सर्वज्ञप्रणित धर्ममें किस बातकी न्यूनता होवे ! देखो कि मख्खनमें बहुत बारिक जीव हैं ऐसा एक युरोपियन विद्वानने थोडा समय हुवा शोध करके निकाला है और इस शोधके लिये उसका दुनीयाके विद्वानवर्गमें बहुमान हो रहा है परंतु जैनीका एक लडका भी जानता और मानता है के मख्खनमें एक अंतर्मुहूर्त्तमें (४८ मीनीट) असंख्य जीव पैदा होते है बासी रोटीमें, पाणीके एक बिंदूमें असंख्य जीव आजके विद्वान सूक्ष्मदर्शकयन्त्र (सूर्दबीन) द्वारा देखते हैं परंतु यह सिद्धांत जैनी अनादि कालसें मानते आये हैं

तत्त्वज्ञानसागरकी रत्नराशि है उस रत्नराशिकी कान्ति ! मात्र दया शब्दके रहस्यमें अंतर्भूत होती है दयाका मनमंदिरसें प्रादुर्भाव (उत्पत्ति) होतेही बुद्धि साम्यपणेको प्राप्त होती है. सर्व प्राणीप्रति समान भावसें देखनेवाले जीवात्माको अंतरगमें अपना और अन्यका ऐसा विरोधी विकारका क्षय होके सर्व प्राणीप्रति आत्मभावका अनुभव होता है सर्व प्राणीप्रति आत्मभावना होनेसें आप संसारसागरमें एक बिंदु समान है, ऐसी बुद्धिवाला सर्व प्राणीप्रति समानता अनुभवनेवाला आत्मा अपने आपको विश्व रहस्यरूप देखकर अंतमें परम आत्मलक्षकी दृष्टि प्राप्त करके परमानंद संपत्ति संपन्न हो सकता है. जैनतत्त्वज्ञानकी ग्रंथी अपूर्व उद्देशसें रचके अपूर्व गांभीर्यता उसके निरीक्षकको बताकर परम विशुद्ध मुक्तिमार्गका प्रतिपादन करता है. जैनतत्त्वविचारके अनुयायी अनेक पुरुष पूर्वकालमें प्रगट हुए थे, उन्होंने अनेक भगवद्वचनानुसार स्वरचित ग्रंथोसें जैनतत्त्वामृतकी प्रसादी अपनी बुद्धिबलकी प्रबलतासें उनके समयानुसारीको दीथी वैसें वर्त्तमान समयमें उन्होंके बोध हुए सद्ग्रंथोके वचन सत्वशील शास्त्राभ्यासीको वचनामृतरूपकरके दिव्यता दृष्टव्य करते है ऐसा एक महान दर्शनके अनुयायिओंने अपने तत्त्वमार्गकी जनसमुदायके अन्य धर्म सिद्धांतके सामने महत्वता प्रगट करके बतानी यह उनकी बडी भारी फरज है परंतु कालबलके प्रबल प्रतापसें इस मार्गके अनुयायी स्वधर्मकी महत्वता जिस किसी अंशसें जानते हैं उतनीका भी उदय करनेमें अपनी उत्साहवृत्तिका उपयोग नही कर सकते है इस पुस्तकका बनना इसी उपयोगकाही फल है ऐसा उत्साह रहित होना कालमहात्म्यकी अपूर्व कलाका दिग्दर्शन नजर आता है जिस दर्शनके प्रवर्त्तक पुरुष सर्वज्ञ थे, जिस दर्शनके मुनि (साधु) उत्तम चारित्र संपत्तिमान थे, जिस दर्शनके अनुयायी गृहस्थ त्यागयुक्त दृष्टिवाले होकर अवधि ज्ञानादि संपत्ति प्राप्त करते थे, उस दर्शनके वर्त्तमान समयानुयायी शास्त्र परिभाषाके पंडित होनेकी एवजमें शास्त्रशब्दके रहस्य समजनेमें भी प्राय शक्तिमान नही है ऐसा है तो कालके महात्म्य सिवाय और क्या कल्पना करी जावे ! अर्थात कालकी कलाही ज्ञान दृष्टिके मार्गमें ले जानेके बदले पंचेंद्रियके रसानंदमें मग्न कर देती है प्रो० मेक्स मुलर आदि पाश्चात्य तत्ववेत्ता जो कि आर्य दर्शन शास्त्रके प्राय निष्पक्षपाती निरीक्षक है, सो भी जैनदर्शनकी महत्त्वता सर्वथा कबूल करते है, तो जैनधर्मावलंबी जैन तत्त्वशास्त्रकी महत्वता जनमंडलमें प्रगट करनेके स्थानमें आपही शास्त्राध्ययन करके रहस्य समजनेमें प्रवृत्ति नहीं करते हैं, ऐसा है तो कालरूप जादुगरकी रची हुई व्यावहारिक वैभवकी जालमें जकडे हुए हैं, ऐसाही कहना पडता है

जैनतत्त्वज्ञान संबंधी विचार व्यवहार और परमार्थकी उन्नति योजनेमें साररूप है तत्त्वज्ञानानुसार वर्त्तन करनेवालेको परमसुख करता है रत्नत्रयिके अनुभवसे आत्मज्ञान प्राप्तकरके मुक्तिमार्गकी परासीमा स्वीकारी है. रत्नत्रयिका अनुभव, सत्‌देव, सत्‌गुरु, और सत्‌धर्मकी समज सिवाय प्राप्त हो नहि सकता है आत्मस्वरूपका पूर्ण ज्ञाता आत्मस्वरूप अनुभवी सर्वज्ञ वोही सत्‌देव, क्रोधादि कषायोंका लय करके अंतर सत्वनिष्ठावान वैराग्य संपन्न शास्त्राभ्यासी वोही सत्‌गुरू, कर्ममलसें निर्मल होनेका सदुपदेश बोधक मार्ग वोही सत्‌धर्म; इस त्रिपुटीको स्वरूपके अनुभवी शास्त्राध्ययन करनेवाला रत्नत्रयि संपन्न हो

सकता है. रत्नत्रयि संपादित हुआ और सर्वज्ञादि विभूति शीघ्र प्राप्त होती है सर्वज्ञादि विभूतिकी प्राप्ति ज्ञानमार्गके उदयसे परिणाममें प्राप्त होती है. और ज्ञानमार्गका उदय अलौकिक भावनासे भीजे हुए जैनमार्गकी शैलिकी महत्वता जैनदर्शनशास्त्रके अभ्यासकी वृद्धी होनेसेही हो सकता है उसका उमदा रस्ता यह है कि हिंदुस्थानमें मुंबई जैसे एक मध्यस्थानमें एक वडी जैन पाठशाला स्थापित होनी चाहिये कि जिसमें अंग्रेजी–देशी सांसारिक केलवणीके साथ धार्मिक केलवणी बालपणसेंही दीजावे बडे बडे शहरोंमें शाखा–पाठशालाए स्थापित करनी चाहिये. सद्योग प्राप्त हुए विना कार्यकी सिद्धी नहीं होती है. खिश्चनलोक कि जिस धर्मको वे ठीक समजते हैं, उसकी वृद्धि करनेके वास्ते करोडों रुपैयोंकी कान्तिका मोह उतारके व्यय करते हैं धर्मके पुस्तकोंकी लाखो नकलों छपाके लागतसें भी कमदामसे वेचते हैं मुसलमान, याहुदी, पारसी, आदि प्रथम धर्मकी केलवणी अपने बच्चोंको देकर फिर उदर पोपणकी सांसारिक विद्या पढाते हैं धर्माभ्यासके लिये इन लोकोंने जब सेंकडों शालाए बनाई है, तो सत्यके अपूर्व कीर्त्तिस्तंभरूके सुवर्णलताकी कान्तिरूप जैनदर्शनके अनुयायी उदरनिर्वाहकी व्यवहारग्रंथीमें लिपटके परमार्थ मार्गकी स्वप्नावस्थामें कालरात्री गुजार रहे हैं धनसंपन्नवर्ग विषयास्वादमें मग्न है, मध्यमवर्ग व्यवहारपटुतामें लुब्ध है. अधमवर्ग उदरनिर्वाहकी चिंतामें है पंडित भावनासें शास्त्राभ्यासका कोई भी सुशील अवलोकन करनेवालेको अपूर्व जैनदर्शनकी यह स्थिति देख करके दया धर्मके प्रतिपादक जैनदर्शनपर दया करनेकाही समय आया है. विवेकी धनसंपन्न जैनधर्मीयोंको चाहिये कि अब अपने हृदयचक्षुसे धर्मकी स्थितिको देखकर जैनतत्त्वशास्त्ररूपरत्नको पहेल पढाके उसकी शुद्ध कांति प्रगट करनेको उद्युक्त होकर अपनी फरज यहि अपना कर्तव्य समजे, यही जीवनका तात्पर्य समजे, शिशुवयका बोध ज्ञानतंतुमें स्थायी रह सकता है, उसके संस्कार जीवनपर्यंत जींदगीको मधुरी निर्दोष करनेको सामर्थ्यवान् है; धर्मानुरागीको चाहीये कि ऐसी जैन पाठशाला स्थापन करानेमें उद्यमवंत हो ये अपूर्व ज्ञानामृतकी प्रसादीका लाभ अपने बालकोंको दें, इसमें अपना, अपने महान् धर्मका, अपने कुल, जाति और देशका उदय है. ऐसी एक पाठशाला स्थापन करनेको स्वर्गवासी बाबुसाहेब पन्नालालजीने अपने धनका सदुपयोग चार लाख रुपये ज्ञानमार्गमें देकर किया है इस पाठशालाके लिये कई विद्वानोंकी सम्मति लेकर " बाबु पन्नालाल आत्म[१] जैन पाठशालाकी योजना " ऐसे नामसे मेरी तरफसें एक योजना पत्र तयार किया है

जैनधर्म अनादि होनेकी पुष्टीमें यह सिद्ध है कि मूल आर्य वेदोंके छत्तीस उपनिपद् जो जैनशैली अनुसार जैनोंमें मौजूद है, जिसपरसे और दूसरे संजोगोंसे यह बात सबूत होती है कि आधुनिक वेद कोई नयेही वेद है जैन इतिहास कहता है कि पहेले तीर्थंकर श्रीऋषभनाथके पुत्र भरत चक्रवर्तीने अपने पीताके उपदेशसें गृहस्थ अर्थात् श्रावक धर्मके निरूपक चार वेद श्रावक ब्राह्मणोंके पढनेके वास्ते रचे ये वेदोंके नाम

१ "आत्म" शब्दसे यह भावार्थ है कि स्वर्गगामी बाबुजीका यह निश्चय था कि महाराज श्री आत्माराम जीके नामसें एक पाठशाला (जैन–कॉलेज) स्थापन करके यह परम उपकारी सद्गुरुका नाम अमर रखना.

(१) ससारादर्शन वेद (२) सस्थापन परामर्शन वेद (३) तत्त्वावबोध वेद (४) विद्या प्रबोध वेद ब्रह्मचर्य पालनेवालोंका नाम ब्राह्मण था. यह आर्यवेद और सम्यगदृष्टि ब्राह्मण ये दोनों वस्तु श्रीसुविधिनाथ पुष्पदत नवमे तीर्थंकर तक यथार्थ चली. दक्षिणमें कितनेक ऐसे वैदिक ब्राह्मण अब भी विद्यमान है, जो आधुनिक वेदोंसें कोई अन्य रीतीका वेद मत्र पढते है ये आर्यवेद कि जिसको तमाम जैन मानते थे विच्छेद होगये, परतु उनके ३६ उपनिषद् मोजूद है यह प्रथम तीर्थंकर ऋषभनाथसे कला, दडनीति, कृषी, अग्नि इत्यादिका आरभ हुवाहे. (मनुजी भी मनुस्मृतिमे ऐसाही लिखते हैं आगे श्लोक देखो) श्री सुविधि नाथके पीछे, जब आर्यवेद विच्छेद हो गये, तब उस वखतके ब्राह्मणाभासोंने अनेक तरहकी श्रुतीआ रचीं उनमें इद्र, वरुण, पूषा, नक्त, अग्नि, वायु, अश्विनी, उषा इत्यादि देवताओंकी उपासना करनी लोकोको उपदेश किया, अनेक तरहके यजन याजन करवाए, और कहने लगे कि हमने इसीतराह अपने वृद्धोंसे सुना है इस हेतुस तिन श्लोकोंका नाम श्रुति रक्खा अपने आपको गौ, भूमी, आदि दानके पात्र ठहराये, और जगद्गुरु कहलाने लगे इन हिंसक श्रुतिओंको वेदके नामसे प्रचलित की वेदव्यासजीने उनिए एकठी की, और जुदे जुदे कारणोंसे उनके चार नाम रक्खे जो साप्रत कालके ब्राह्मणोंके ऋग, यजुस साम और अथर्ववेद है व्यासजीने ब्रह्मसूत्र रचा सो वेदान्तमतके ये मुख्य आचार्य कहे जाते हैं यह वेदव्यासजीने ब्रह्मसूत्रके तीसर अध्यायके दूसरा पादके तेतीसमे सूत्रमें जैनोंकी सप्तभगीका खडन कीया है, जिसका प्राबल्य होता है, उसका खडन लिखा जाता है, तो वेदव्यासजीके वखतमें जैन धर्म विद्यमान था वेदव्यासजीके शिष्य जेमिनीने मीमासा बनाया. व्यासजीके शिष्य वैशपायनके शिष्य याज्ञवल्क्यको गुरु और दूसरे ऋषीओंके साथ लढाई होनेसे उनोनें यजुर्वेद छोडके शुक्ल यजुर्वेद" बनाया इत्यादि कहांतक विस्तार किया जाय पुराणादि ग्रथोंने एक दूसरेको और वेदोंका बहोत खडन किया है यहातकके पढनेवालोंको भी नागवार मालूम होता है इस ग्रथमें जैन धर्मकी प्राचीनता वेदोंसे पहेलेकी अच्छे प्रमाणोंसें सिद्ध की है फिर इन्ही वेदोंमें, स्मृतिम, महाभारत, भागवत पुराणादि ग्रथोंमें लीखे हुए जैन धर्मकी प्राचीनताका अन्य प्रमाण भी नीचे लीखा जाता है उनको पाठकगण निष्पक्षपाती होकर पढे और सत्यासत्यका विचार करे कीतनेक लोक कपोलकल्पित शका करते है कि जैनधर्म बौधकी शाखा है. उनको कहा जाय कि जैनमत बौद्धकी शाखा नही, परतु एक अनादि धर्म है, जो इस पुस्तकके स्तभ ३३ में ऐतिहासिक और शीला लेखोंके प्रमाण द्वारा और प्रो० जेकोबीका प्रमाण देकर अच्छीतरह सिद्ध किया है फिर भी बौद्धोंके ग्रथ "महाविनयसूत्र" और "समानफलासूत्र" में जैनोंके चोवीसमे तीर्थंकर श्री महावीर स्वामिको "ज्ञातपुत्र" लिखकर बहोत सबध लिखा है, बौद्धोंका "विनयत्रीपीठीका" ग्रथका तरजुमा "लाईफ ऑफ धी बुद्ध" नामा पुस्तकमें प्रो० जे. डबल्यु उडवील राकील्ने किया है, जिसका पृष्ठ ६५, ६६, १०३, १०४ पर जैनोंके निर्ग्रथके सबधमें और पृष्ठ ७९, ९६, १०४, २५९ पर महावीर स्वामीके लिये जो लेख है वो पढनेसे पाठक वर्ग सतोषित होंगे कि प्रथम बुद्धके वखतमें जैनधर्म विद्यमान था कितनेक लोक राजा शिवप्रसाद सी आई ई का बनाया हुवा "इति

हास तिमिरनाशक" ग्रथका प्रमाण देकर कहते है कि जैनधर्म बौद्धकी शाखा है, परतु सन १८७३ में उनोंने ऐक पत्र बनारससे पजाबका गुजरावाला शहरके जैन समुदायपर लिखा था उसमें लीखा है, कि "जैन, बौद्ध मत एक नही है,सनातनसें भिन्न भिन्न चले आये है, जर्मनी देशके एक बडे विद्वानने इसके प्रमाणमें एक ग्रथ छापा है " वगैरेह बहोत प्रमाण है. कहातक लिखा जाय ?

उपर लिखे जैनकी प्राचीनताके कितनेक वेदादि प्रमाण मोक्षमार्ग प्रकाश आदि ग्रंथानुसार लिखे जाते है

॥ श्री भागवत ॥

नित्यानुभूतनिजलाभनिवृत्ततृष्ण. श्रेयस्यतद्रचनयाचिरसुप्तबुद्धेः ।
लोकस्ययोकरुणयोभयमात्मलोकमाख्यान्नमोभगवतेऋषभायतस्मै ॥

अर्थः—उस ऋषभदेव (जैनोंकेप्रथम तीर्थंकर) को हमारा नमस्कार हो सदा प्राप्त होनेवाले आत्मलाभसें जिसकी तृष्णा दूर होगई है, और जिन्होंने कल्याणके मार्गमें झूठी रचनाकरके सोते हुए जगतकी दया करके दोनों लोकके अर्थ उपदेश किया है ॥

॥ श्री ब्रह्माण्डपुराण ॥

नाभिस्तु जनयेत्पुत्र मरुदेव्यां मनोहरम् ।
ऋषभं क्षत्रियश्रेष्ठं सर्वक्षत्रस्य पूर्वकम् ॥
ऋषभाद्भारतोजज्ञे वीरपुत्रशताग्रजः ।
राज्येऽभिषिच्य भरत महाप्राव्रज्यमाश्रित ॥

अर्थ —नाभिराजाके यहा मरुदेवीसे ऋषभ उत्पन्न हुए जिनका बडा सुदर रूप है, जो क्षत्रियोंमे श्रेष्ठ और सब क्षत्रियोंके आदि है ॥ और ऋषभके पुत्र भरत पैदा हुवा जो वीर है और अपने सौ (१००) भाईयोंमे बडा है ॥ ऋषभदेव भरतको राज देकर महा दीक्षाको प्राप्त हुए अर्थात् तपस्वी होगये ॥

भावार्थ.—जैन शास्त्रोंमें भी यह सब वर्णन इसही प्रकार है ॥ इससे यह भी सिद्ध हुवा कि जिस ऋषभदेवकी महिमा वेदान्तिओंके ग्रन्थोंमें वर्णन की है, जैनी भी उसही ऋषभदेवको पूजते है, दूसरे नहीं

॥ श्री महाभारत ॥

युगेयुगे महापुण्य दृश्यते द्वारिका पुरी ।
अवतीर्णो हरिर्यत्र प्रभासशशिभूषण. ॥
रेवताद्रौजिनोनेमिर्युगादिर्विमलाचले ।
ऋषीणामाश्रमादेव मुक्तिमार्गस्य कारणम् ॥

अर्थः—युग २ में द्वारिकापुरी महा क्षेत्र है, जिसमें हरिका अवतार हुया है जो प्रभास क्षेत्रमें चन्द्रमाकी तरह शोभित है ॥ और गिरनार पर्वतपर नेमिनाथ और कैलाश (अष्टापद) पर्वतपर आदिनाथ अर्थात् ऋषभदेव हुए है ॥ यह क्षेत्र ऋषियोंके आश्रम होनेसें मुक्ति मार्गके कारण है ॥

भावार्थ-श्री नेमिनाथस्वामी भी जैनियोंके तीर्थंकर है और श्रीऋषभनाथको आदिनाथ भी कहते है, क्योंकि वह इस युगके आदि तीर्थंकर है ॥

॥ श्री नागपुराण ॥

दर्शयन् वर्त्म वीराणां सुरासुरनमस्कृतः।
नीतित्रयस्य कर्ता यो युगादौ प्रथमो जिन ॥
सर्वज्ञ सर्वदर्शी च सर्वदेवनमस्कृत ।
छत्रत्रयीभिरापूज्यो मुक्तिमार्गमसौ वदन् ॥
आदित्यप्रमुखा सर्वे वद्धाजलिभिरीशितुः ।
ध्यायति भावतो नित्य यदघ्रियुगनीरजम् ॥
कैलासविमले रम्ये ऋषभोय जिनेश्वरः।
चकार स्वावतार यो सर्वः सर्वगत्त शिव ॥

अर्थ—वीर पुरुषोंको मार्ग दिखाते हुये सुर असुर जिनको नमस्कार करते हैं जो तीन प्रकारकी नीतिके बनानेवाले हैं, वह युगके आदिमें प्रथम जिन अर्थात् आदिनाथ भगवान् हुए सर्वज्ञ (सबको जाननेवाले,) सबको देखनेवाले, सर्व देवोंकरके पूजनीय, छत्र-त्रयकरके पूज्य, मोक्षमार्गका व्याख्यान कहते हुए, सूर्यको आदि लेकर सब देवता सदा हाथ जोडकर भाव सहित जिसके चरणकमलका ध्यान करते हुए ऐसे ऋषभ जिनेश्वर निर्मल कैलास पर्वतपर अवतार धारण करते भये जो सर्वव्यापी हैं और कल्याणरूप हैं ॥

भावार्थ—जिन अर्थात् जिनेश्वर भगवानको कहते हैं जिनभाषित अर्थात् भगवा. नका कहा हुवा मत होनेके कारण जैनमत कहलाता है । उपरोक्त श्लोकोंमें श्रीऋषभनाथ अर्थात् आदिनाथ भगवान्‌को जिनेश्वर कहकर महिमा की है ॥

॥ शिवपुराण ॥

अष्टषष्टिषु तीर्थेषु यात्राया यत्फल भवेत् ।
आदिनाथस्य देवस्य स्मरणेनापि तद्भवेत् ॥

अर्थ—अडसठ (६८) तीर्थोंकी यात्रा करनेका जो फल है, उतना फल श्री आदि नाथके स्मरण करनेहीसे होता है. ।

॥ ऋग्वेद ॥

ॐ त्रैलोक्यप्रतिष्ठिताना चतुर्विंशतितीर्थकराणां ।
ऋषभादिवर्द्धमानान्ताना सिद्धानां शरण प्रपद्ये ॥

अर्थः—तीनलोकमें प्रतिष्ठित श्री ऋषभदेवसे आदि लेकर श्री वर्द्धमानस्वामी तक चौबीस तीर्थकरों (तीर्थोंकी स्थापन करनेवाले) हैं, उन सिद्धोंकी शरण प्राप्त होता हूं।

॥ यजुर्वेद ॥

॥ ॐ नमोऽर्हन्तो ऋषभो ॥

अर्थ —अर्हन्त नाम वाले (वा) पूज्य ऋषभदेवको प्रमाण हो

फिर ऐसा कहा है—

ॐ ऋषभंपवित्रं पुरहूतमध्वरं यज्ञेषु नग्नं परमं माहसंस्तुतं वारं शत्रुजयंतं पुशुरिन्द्रमाहुरिति स्वाहा । उत्रातारमिंद्रं ऋषभंवदंति अमृतारमिन्द्रहवे सुगत सुपार्श्वमिन्द्रंहवे शक्रमजितं तद्वर्द्धमान पुरुहूतमिंद्रमाहुरिति स्वाहा । ॐ स्वस्तिनः इन्द्रो वृद्धश्रवा स्वस्तिनः पूषा विश्ववेदा स्वस्तिनस्तार्क्षोअरिष्टनेमि स्वस्तिनो बृहस्पतिर्दधातु । दीर्घायुस्त्वायवलायुर्वाशुभजातायु ॐ रक्षरक्षअरिष्टनेमि स्वाहा वामदेव सांत्यर्थ मनुविधीयते सोऽस्माक अरिष्टनेमि स्वाहा ॥

अर्थ —ऋषभदेव पवित्रको और इन्द्ररूपी अध्वरको यज्ञोंमें नग्नको पशु वैरीके जीतनेवाले ईंद्रको आहुती देता हूं। रक्षा करनेवाले परम ऐश्वर्ययुक्त और अमृत और सुगत सुपार्श्व भगवान जिस एसे पुरुहुत (इन्द्र) को ऋषभदेव तथा वर्धमान कहते हैं उसे हवि देता हूं। वृद्धश्रवा (बहुत धनवाला) इन्द्र कल्याण करे, और विश्ववेदा सूर्य हमें कल्याण करें, तथा अरिष्टनेमि हमें कल्याण करे और बृहस्पति हमारा कल्याण करे। (यजुर्वेद अध्याय २५ म० १९) दीर्घायुको और बलको और शुभ मगलको दे। और हे अरिष्टनेमि महाराज हमारी रक्षा कर (?) ॥ वामदेव शान्तिके लिये जिसे हम विधान करते हैं वह हमारा अरिष्टनेमि है उसे हवि देते हैं

भावार्थ-—श्री ऋषभदेव श्री सुपार्श्व भगवान और अजितनाथ भगवान और अरिष्टनेमि आदि भगवान यह सब जैनियोंके तीर्थंकर हैं जिनकी मूर्त्ति जैनी लोग बनाते हैं और भक्ति करते हैं ।

॥ भागवत ग्रंथ ॥

एवमनुशास्यात्मजान्स्वयमनुशिष्टानपिलोकानुशासनार्थंमहानुभावःपरमसुहृद् भगवान् ऋषभापदेश उपशमशीलानामुपरतकर्म्मणां महामुनीना भक्तिज्ञानवैराग्यलक्षण पारमहस्यधर्म्ममुपाशिक्षमाण. स्वतनयशतज्येष्ठं परमभागत भगवज्जनपरायण भरत धरणिपालनायाभिषिच्य स्वयं

अर्थः—युग २ में द्वारिकापुरी महा क्षेत्र है, जिसमें हरिका अवतार हुवा है जो प्रभास क्षेत्रमें चन्द्रमाकी तरह शोभित है ॥ और गिरनार पर्वतपर नेमिनाथ और कैलाश (अष्टापद) पर्वतपर आदिनाथ अर्थात् ऋषभदेव हुए हैं ॥ यह क्षेत्र ऋषियोंके आश्रम होनेसे मुक्ति मार्गके कारण है ॥

भावार्थ-श्री नेमिनाथस्वामी भी जैनियोंके तीर्थंकर है और श्रीऋषभनाथको आदिनाथ भी कहते है, क्योंकि वह इस युगके आदि तीर्थंकर है ॥

॥ श्री नागपुराण ॥

दर्शयन् वर्त्म वीराणां सुरासुरनमस्कृतः ।
नीतित्रयस्य कर्ता यो युगादौ प्रथमो जिन ॥
सर्वज्ञ सर्वदर्शी च सर्वदेवनमस्कृत. ।
छत्रत्रयीभिरापूज्यो मुक्तिमार्गमसौ वदन् ॥
आदित्यप्रमुखा सर्वे बद्धाजलिभिरीशितु. ।
ध्यायति भावतो नित्य यदंघ्रियुगनीरजम् ॥
कैलासविमले रम्ये ऋषभोय जिनेश्वर ।
चकार स्त्रावतार यो सर्व· सर्वगत शिवः ॥

अर्थ —वीर पुरुषोंको मार्ग दिखाते हुये सुर असुर जिनको नमस्कार करते हैं जो तीन प्रकारकी नीतिके बनानेवाले है, वह युगके आदिमें प्रथम जिन अर्थात् आदिनाथ भगवान् हुए सर्वज्ञ (सबको जाननेवाले,) सबको देखनेवाले, सर्व देवोंकरके पूजनीय, छत्रत्रयकरके पूज्य, मोक्षमार्गका व्याख्यान कहते हुए, सूर्यको आदि लेकर सब देवता सदा हाथ जोडकर भाव सहित जिसके चरणकमलका ध्यान करते हुए ऐसे ऋषभ जिनेश्वर निर्मल कैलास पर्वतपर अवतार धारण करते भये जो सर्वव्यापी हैं और कल्याणरूप हैं ॥

भावार्थ —जिन अर्थात् जिनेश्वर भगवानको कहते हैं जिनभाषित अर्थात् भगवानका कहा हुवा मत होनेके कारण जैनमत कहलाता है । उपरोक्त श्लोकोंमें श्रीऋषभनाथ अर्थात् आदिनाथ भगवान्को जिनेश्वर कहकर महिमा की है ॥

॥ शिवपुराण ॥

अष्टषष्टिषु तीर्थेषु यात्राया यत्फलं भवेत् ।
आदिनाथस्य देवस्य स्मरणेनापि तद्भवेत् ॥

अर्थ'—अडसठ (६८) तीर्थोंकी यात्रा करनेका जो फल है, उतना फल श्री आदिनाथके स्मरण करनेहीसे होता है. ।

॥ ऋग्वेद ॥

ॐ त्रैलोक्यप्रतिष्ठिताना चतुर्विंशतितीर्थंकराणां ।
ऋषभादिवर्द्धमानान्तानां सिद्धाना शरण प्रपद्ये ॥

अर्थः—तीनलोकमें प्रतिष्ठित श्री ऋषभदेवसे आदि लेकर श्री वर्द्धमानस्वामी तक चौवीस तीर्थंकरों (तीर्थोंकी स्थापन करनेवाले) है, उन सिद्धोंकी शरण प्राप्त होता हूं।

॥ यजुर्वेद ॥

॥ ॐ नमोऽर्हन्तो ऋषभो ॥

अर्थ —अर्हन्त नाम वाले (वा) पूज्य ऋषभदेवको प्रमाण हो

फिर ऐसा कहा है —

ॐ ऋषभंपवित्रं पुरहूतमध्वर यज्ञेषु नग्नं परमं माहसंस्तुतं वारं शत्रुंजयंतं पशुरिंद्रमाहुरिति स्वाहा । उत्रातारमिंद्रं ऋषभंवदंति अमृतारमिन्द्रहवे सुगतं सुपार्श्वमिन्द्रहवे शक्रमजितं तद्वर्द्धमान पुरुहूतमिद्रमाहुरिति स्वाहा । ॐ स्वस्तिनः इन्द्रो वृद्धश्रवा स्वस्तिनः पूषा विश्ववेदा स्वस्तिनस्तार्क्षोअरिष्टनेमि· स्वस्तिनो बृहस्पतिर्दधातु । दीर्घायुस्त्वायबलायुर्वाशुभजातायु ॐ रक्षरक्ष अरिष्टनेमि स्वाहा वामदेव सांत्यर्थ मनुविधीयते सोऽस्माक अरिष्टनेमि स्वाहा ॥

अर्थ —ऋषभदेव पवित्रको और इन्द्ररूपी अध्वरको यज्ञोंमे नग्नको पशु वैरीके जीतनेवाले इद्रको आहुती देता हू। रक्षा करनेवाले परम ऐश्वर्ययुक्त और अमृत और सुगत सुपार्श्व भगवान जिस एसे पुरहुत (इन्द्र) को ऋषभदेव तथा व र्धमान कहते है उसे हवि देता हू। वृद्धश्रवा (वहुत धनवाला) इन्द्र कल्याण करे, और विश्ववेदा सूर्य हमें कल्याण करे, तथा अरिष्टनेमि हमें कल्याण करे और बृहस्पति हमारा कल्याण करे। (यजुर्वेद अध्याय २५ मं० १९) दीर्घायुको और बलको और शुभ मगलको दे। और हे अरिष्टनेमि महाराज हमारी रक्षा कर (२) ॥ वामदेव शान्तिके लिये जिसे हम विधान करते है यह हमारा अरिष्टनेमि है उसे हवि देते हैं

भावार्थ·—श्री ऋषभदेव श्री सुपार्श्व भगवान और अजितनाथ भगवान और अरिष्टनेमि आदि भगवान यह सव जैनियोंके तीर्थकर हैं जिनकी मूर्त्ति जैनी लोग वनाते हैं और भक्ति करते हैं ।

॥ भागवत ग्रंथ ॥

एवमनुशास्यात्मजान्स्वयमनुशिष्टानपिलोकानुशासनार्थंमहानुभाव· परमसुहृद् भगवान् ऋषभापदेशः उपशमशीलानामुपरतकर्म्मणां महामुनीना भक्तिज्ञानवैराग्यलक्षणं पारमहस्यधर्म्ममुपाशिक्षमाण स्वतनयशतज्येष्ठं परमभागत भगवज्जनपरायण भरत धरणिपालनायाभिषिच्य स्वयं

भवनएवोर्वरितशरीरमात्रपरिग्रह उन्मत्तइवगगनपरिधानः प्रकीर्णकेशः आत्मन्यारोपिताहवनीयो ब्रह्मावर्तात्प्रवव्राज ॥

अर्थ –वह ऋपभदेव भगवान् इस प्रकार अपने बेटोंको समझाकर उनके बेटे यद्यपि आपही ज्ञानवान् हैं तो भी लोकरीतिके अर्थ समझाकर महात्मा परम मित्र भगवान ऋपभदेव शांति परिणामी नाश किया है कर्म जिन्होंने, भक्तिवान् ज्ञानवान् वैरागी महा मुनीश्वरोंको परमहंस धर्मका उपदेश देते हुवे और सौ (१००) बेटोंमें बडे मनुष्योंमें तत्पर ऐसे भरतको पृथ्वीके पालनेके वास्ते राज्य देकर आर आप केवल शरीरमात्र परिग्रह रखकर केश लोंचकर नग्न आत्मामें स्थापन किया है ब्रह्मस्वरूप जिन्होंने, उन्मत्तकी तुल्य पृथ्वीपर भ्रमण करते सते हमारी रक्षा करो ॥

॥ भर्तृहरिशतक, वैराग्य प्रकरण ॥

एको रागिषु राजते प्रियतमादेहार्द्धधारी हरो ।
नीरागेषु जिनो विमुक्तललनासंगो न यस्मात्पर ॥
दुर्वारस्मरबाणपन्नगविषव्यासक्तमुग्धो जन ।
शेष कामविडंबितो हि विषयान् भोक्तुं न मोक्तुं क्षम ॥ *

अर्थ –बडी प्यारी गौरीके आधे देहको धारण किये हुवे रागी पुरुषोंमें एक शिवही शोभता है और वीतरागियोंमें ऐसे जिनदेवसें बढकर और कोई नहिं है, जिन्होंने स्त्रियोंके संगकोही छोडदिया है, इन दोनोंसें जो भिन्न पुरुष है, जो दुर्वार कामदेवके बाणरूपी सर्पोंका विषके चढनेसें पागल हुए कामसें ठगे हैं, वे पुरुष न विषयोंके छोडनेको समर्थ हैं और न भोगनेको समर्थ है ।

भावार्थ –इसमें शिवको परम रागी और जिन भगवान अर्थात् जैनियोंके देवताको परम वीतरागी कहकर प्रशंसा की है और राग अर्थात् विषयभोगकी निंदा की है।

॥ योगवासिष्ठ प्रथम वैराग्य प्रकरण ॥

राम उवाच । नाहं रामो न मे वाञ्छा भावेषु च न मे मन. ।
शान्तिमास्थातुमिच्छामि चात्मन्येव जिनो यथा ॥

अर्थ––रामजी बोले कि न मैं राम हूं, न मेरी कुछ इच्छा है, और न मेरा मन पदार्थोंमें है, केवल यह चाहता हूं जिन देवकी तरह मेरी आत्मामें शान्ति हो

भावार्थ ––रामजीने जिन समान होनेकी वाञ्छा करी, इससें विदित है कि जिनदेव रामजीसे पहले और उत्तमोत्तम है

*यदि पुराने छपे भर्तृहरिके ग्रंथोंमें यह श्लोक विद्यमान है परंतु इसमें जिन देवकी स्तुति होनेसे नये छपे ग्रंथोंमेंसे जानके निकाला गया है

॥ दक्षिणा मूर्ति सहस्रनाम ग्रन्थ ॥

शिवउवाच । जैनमार्गरतो जैनो जितक्रोधो जितामयः ॥

अर्थ —शिवजी बोले, जैनमार्गमें रति करनेवाला जैनी, क्रोधके जीतनेवाला, और रोगोंके जीतनेवाला

भावार्थ —शिव अपने हजार नामोंमें एक नाम जैनी बताकर क्रोधको जितनेवाले कहते हैं

॥ वैशंपायनसहस्रनाम ग्रन्थ ॥

कालनेमिनिहा वीर शूर शौरिर्जिनेश्वरः ।

अर्थः—भगवानके नाम इस प्रकार वर्णन किये हैं ॥ कालनेमिके मारनेवाला, वीर, बलवान्, कृष्ण और जिनेश्वर ।

॥ दुर्वासा ऋषिकृत महिम्नस्तोत्र ॥

तत्र दर्शने मुख्यशक्तिरिति च त्व ब्रह्म कर्मेश्वरी ।

कर्त्ताऽर्हन्पुरुषोहरिश्च सविता बुद्धः शिवस्त्व गुरुः ॥

अर्थ —यहा दर्शनमें मुख्य शक्ति आदि कारण तू है, और ब्रह्म भी तू है माया भी तू है, कर्त्ता भी तू है और अर्हन् भी तू है, और पुरुष (जीव), हरि सूर्य, बुद्ध और महादेव गुरु वेस भी तूही है, ॥

भावार्थ —यहा अर्हन् तू है ऐसा कहकर भगवानकी स्तुति करी

॥ हनुमन्नाटक ॥

य शैवा समुपासते शिव इति ब्रह्मेति वेदान्तिनो ।
बौद्धा बुद्ध इति प्रमाणपटवः कर्त्तेति नैयायिका ॥
अर्हन्नित्यथ जैनशासनरता. कर्म्मेति मीमांसका ।
सोयं वो विदधातु वांच्छितफल त्रैलोक्यनाथ प्रभु. ॥

अर्थः—जिसको शैवलोग महादेव कहकर उपासना करते हैं, और जिसको वेदान्ति लोग ब्रह्म कहकर और बौद्ध लोग बुद्धदेव कहकर और युक्ति शास्त्रमें चतुर नैयायिक लोग जिसको कर्त्ता कहकर और जैनमतवाले जिसको अर्हन् कहकर मानते हैं और मीमासक जिसको कर्मरूप वर्णन करते हैं वह तीन लोकका स्वामी तुम्हारे वाञ्छित फलको देवै ॥

भावार्थ —हनुमानने समुद्र सेतू बाधते वखत ७ मतोंमें जिन देवकी भी स्तुति करी है अर्थात् रामचद्रजीके समयमें जैनमत विद्यमान था

॥ भवानीसहस्रनाम ग्रथ ॥

कुण्डसना जगद्धात्री बुद्धमाता जिनेश्वरी ।
जिनमाता जिनेंद्रा च शारदा हंसवाहिनी ॥

अर्थ -भवानीके नाम ऐसें वर्णन किये है ॥ कुडासना, जगतकी माता, बुद्ध देवकी माता, जिनेश्वरी, जिनदेवकी माता, जिनेंद्रा, सरस्वती हस, जिसकी सवारी है ॥

॥ नगरपुराण भवावतार रहस्यमें ॥

अकारादि हकारान्त मूर्द्धाधोरेफसयुत। नादविंदुकलाक्रान्तं चन्द्रमंडलसन्निभ ॥ एतद्देवि परंतत्त्वंयोविजानातितत्त्व । संसारवन्धनं छित्वा सगच्छेत्परमां गतिम्

अर्थः—आदिमें अकार और अतमे हकार और ऊपर और नीचे रकारसे युक्त नाद और विन्दु सहित चन्द्रमाके मडलके तुल्य ऐसा अर्हन् (जिनदेव) जो शब्द है यह परम तत्त्व है, इस्को जो कोई यथार्थ रुपसें जानता है वह ससारके वधनसे मुक्त होकर परम गतिको पाता है

॥ नगरपुराण ॥

दशभिर्भोजितैर्विप्रै यत्फल जायते कृते ।
मुनिमर्हन्तभक्तस्य तत्फल जायते कलौ ॥

अर्थः—सत्ययुगमें दश ब्राह्मणोंको भोजन देनेसे जो फल होता है वहही फल कलियुगमें अर्हतभक्त मुनिको भोजन देनेसे होता है

॥ मनुस्मृतिग्र र ॥

कुलादिबीज सर्वेषा प्रथमो विमलवाहन. ।
चक्षुष्माश्च यशस्वी वाभिचन्द्रोऽथ प्रसेनजित् ॥
मरुदेवी च नाभिश्च भरते. कुलसत्तम ।
अष्टमो मरूदेव्या तु नाभेर्जात उरुक्रम ॥
दर्शयन् वर्त्मवीराणा सुरासुरनमस्कृत ।
नीतित्रितयकर्त्ता यो युगादौ प्रथमो जिन. ॥

अर्थ'—सर्व कुलोंका आदि कारण पहिला विमलवाहन नामा और चक्षुष्मान ऐसे नामवाला यशस्वी अभिचन्द्र और प्रसेनजित् मरुदेवी और नाभि नामवाला और कुलमें श्रेष्ठ भरत और आठवा नाभिका मरुदेवीसें उरक्रम नामवाला पुत्र उत्पन्न हुआ ॥यह उरुक्रम वीरोंके मार्गको दिखलाता हुवा देवता और दैत्योंसे नमस्कारको पानेवाला और युगके आदिमें तीन प्रकारकी नीतिको रचनेवाला पहिला जिन भगवान हुवा ॥

भावार्थ —यहा विमलवाहनादि मनु कहे है, जैनमतमें इनको कुलकर कहा है और यहा युगके आदिमें जो अवतार हुआ है उसको जिन अर्थात् जैन देवता लिखाहै इससें विदित है कि जैनधर्म युगकी आदि विषे वियमान होनेसे सबसें पहिलेका है

मनुजीको होनेको अन्यमतवाले लाखो वर्ष (सत्ययुगमें) मानते हैं. तो मनुजी पहिले जैनधर्म विद्यमान था

॥ प्रभासपुराण ॥

भवस्य पश्चिमे भागे वामनेन तपः कृतम् ।
तेनैव तपसाकृष्टः शिवः प्रत्यक्षतां गत' ॥
पद्मासनसमासीन' श्याममूर्तिर्दिगम्बरः ।
नेमिनाथः शिवोथैव नाम चक्रेऽस्य वामन' ॥
कलिकाले महाघोरे सर्वपापप्रणाशनम् ।
दर्शनात् स्पर्शनादेव कोटियज्ञफलप्रदम् ॥

अर्थ—शिवजीके पश्चिमभागमें वामनने तप किया था उस तपके कारण शिवजी वामनको प्रत्यक्ष हुए किस रूपमें प्रत्यक्ष हुवे? पद्मासन लगाये हुवे, श्यामवरण और नग्न तब वामनने इनका नाम नेमिनाथ रक्खा। यह नाम इस भयकर कलियुगमें सर्व पापोंको नाश करनेवाला है और इनके दर्शन वा स्पर्शनसें करोड यज्ञका फल होता है

भावार्थः—श्रीनेमिनाथ भगवान जैनियोंके २२ मे तीर्थकर है, और जैनधर्मके ग्रंथोंमे भी उनका वर्ण श्याम लिखा है। इसप्रभास पुराणमें उनको शिवजीका अवतार वर्णन करके प्रशसा की है

॥ ऋग्वेद ॥

ॐपवित्रंनग्नमुपवि (ई) प्रसामहे येषा नग्ना (नग्नये) जातिर्येषां वीरा ॥

अर्थ—हमलोग पवित्र पापसें बचानेवाले नग्न देवताओंको प्रसन्न करते है जो नग्न रहते है और बलवान् है।

ॐनग्न सुधीरं दिग्वासस ब्रह्मगर्भं सनातनं उपैमि वीरं
पुरुषमर्हंतमादित्यवर्णं तमस पुरस्तात्स्वाहा ॥

अर्थ—नग्न धीर वीर दिगम्बर ब्रह्मरूप सनातन अर्हत आदित्यवर्ण पुरुषकी सरण प्राप्त होता हू ॥

॥ महाभारत ग्रन्थ ॥

आरोहस्व रथं पार्थ गांडीवच करे कुरु ।
निर्जिता मेदिनी मन्ये निर्ग्रंथा यदि सन्मुखे ॥

अर्थः—हे युधिष्ठिर! रथमें सवार हो और गाडीव धनुष हाथमें ले। मै मानता हूं कि जिसके सन्मुख जैन मुनि आये उसने पृथ्वी जीतली

मृगेंद्रपुराण ।

श्रवणोनरगोराजा मयूरःकुंजरोवृष.। प्रस्थानेचप्रवेशे वा सर्वसिद्धिकरामताः।
पद्मिनी राजहसश्च निर्ग्रंथाश्च तपोधनाः। यंदेशमुपाश्रयंति तत्रदेशे सुखंभवेत्।

अर्थ—मुनीश्वर, गौ, राजा, मोर, हाथी, बैल, यह चलनेके समय तथा प्रवेशके समय सामने आवें तौ शुभ है और कमलनी, राजहंस, जिनकल्पीमुनि जिस देशमें हों उस देशमें सुख हो।

वाराहिसंहिता, गणेशपुराणादि ग्रथोंमें जैनके विषयमें बहोत लेख है कहांतक लिखा जाय.

अन्यमतवाले हसते हैं कि जैनीलोक कंदमूल नही खाते और रात्रीभोजन नही करते हैं, परंतु उनके ग्रंथोंमें भी इनही बातोंका निषेध है.

॥ महाभारत ग्रन्थ ॥

मद्यमांसाशनं रात्रौ भोजनं कन्दभक्षणं ।
ये कुर्वंति वृथा तेषां तीर्थयात्राजपस्तप ॥

अर्थः—जो कोई मदिरा पीता है मांस खाता है या रात्रीको भोजन करता है या कन्द [धरतीके नीचे जो वस्तु पैदा हुई आलू अद्रक मूली गाजरआदिक] खाता है उस पुरुषका तीर्थयात्रा जप तप सब वृथा है.

॥ मार्कंडेयपुराण ॥

अस्तं गते दिवानाथे अपोरुधिरमुच्यते ।
अन्नं मांससमं प्रोक्तं मार्कंडेयमहर्षिणा ॥

अर्थः—सूरजके अस्त होनेके पीछे जल रुधिर समान और अन्न मांस समान कहा है.

॥ भारत ग्रन्थ ॥

चत्वारोनरकद्वारं प्रथमं रात्रिभोजनं ।
परस्त्रीगमनं चैव संधानानंतकायकं ॥
ये रात्रौ सर्वदाहारं वर्जयंते सुमेधसः ।
तेषां पक्षोपवासस्य मासमेकेन जायते ।
नोदकमपि पातव्यं रात्रावत्र युधिष्ठिर ।
तपस्विनोविशेषेण गृहिणांचविलोकिना ॥

अर्थ—नरकके चार द्वार हैं, प्रथम रात्रिभोजन करना, दूसरा परस्त्रीगमन, तीसरा संधाना खाना, चौथा अनंत काय अर्थात् कंद मूल आदिक ऐसी वस्तु खाना जिसमें अनंत जीव हों। जो पुरुष एक महिनेतक रात्रिभोजन न करे उसको एक पक्षके उपवासका फल होता है.हे युधिष्ठिर! गृहस्थीको और विशेषकर तपस्वीको रातको पानी भी नहीं पीना चाहिये।

मृते स्वजनमात्रेपि सूतकं जायते किल ।
अस्तंगते दिवानाथे भोजनं क्रियते कथं ।
रक्ताभवंति तोयानि अन्नानि पिशितानि च ।

रात्रौ भोजनसक्तस्य ग्रासेन मांसभक्षणं ॥
नैवाहुतीर्नच स्नानं न श्राद्धं देवतार्चनं ।
दानं च विहितं रात्रौ भोजनं तु विशेषतः ॥
उदुंबरं भवेन्मांसं मांसं तोयमवस्त्रकं ।
चर्म्मवारोभवेन्मांसं मांसं च निशिभोजनं ॥
उलूककाकमार्जारगृध्रशंवरशूकराः ।
अहिवृश्चिकगोधाद्या जायन्ते निशि भोजनात् ॥

अर्थ—जैसे स्वजनके मरण मात्रसे सूतक होता है, ऐसाही सूर्य अस्त होनेके पीछे रात्रिको सूतक होता है इस कारण रात्रिको कैसे भोजन करना उचित है ? रात्रिको जल रुधिर समान होजाता है, और अन्न मासके भावको प्राप्त होता है, इस कारण रात्रि विषे भोजन लंपटीको एक ग्रास भी मासभक्षण समान हो जाताहै। रात्रिभोजन करनेवाले पुरुषको आहुति देना, स्नान करना, श्राद्ध करना, देवार्चन करना, दान देना, व्यर्थ है । उदुंबर फल अर्थात् बडका फल, पीपलका फल, पीलूका फल, गूलरका फल आदिक मास समानही हैं। और रात्रिको भोजन करना भी मास है। रात्रिको भोजन करनेसें उल्लू, कव्वा, बिल्ली, गिद, सूवर, सर्प, बीछू, गोहरा, गोह आदिकमें जन्म होता है.

॥ भारत ॥

मद्यमांसाशनं रात्रौ भोजनं कंदभक्षण ।
भक्षणान्नरकं याति वर्ज्जनात्स्वर्गमाप्नुयात् ॥
अज्ञानेन मया देव कृत मूलकभक्षण ।
तत्पाप यातु गोविंद गोविंद तव कीर्तिनात् ॥
रसोनं गृंजनं चैव पलांडुपिंडमूलकं ।
मत्स्या मांसं सुरा चैव मूलकं च विशेषतः ॥

अर्थ.—शराब पीने, मांस खाने, रातको भोजन करने और कद भक्षण करनेसें जीव नरकमें जाता है और त्यागनेसें स्वर्गमें जाताहै ॥ हे गोविन्द ! मैंने अज्ञानता करके मूल (अर्थात् मूली रतालु आदिक) खाया है वह पाप तुम्हारी कीर्तिसे दूर हो लहसन, गाजर, प्याज, पिंडालू, मच्छी, मास, मदिरा और विशेषकर मूलका भक्षण नहीं करना ॥

मद्यमासाशन रात्रौ भोजनं कन्दभक्षणं ।
ये कुर्वन्ति वृथा तेषा तीर्थयात्रा जपस्तप. ॥ १ ॥

वृथा एकादशी प्रोक्ता वृथा जागरणं हरे ।
वृथा च पौष्करी यात्रा कृत्स्नं चान्द्रायणं वृथा ॥ २ ॥
चातुर्मास्ये तु संप्राप्ते रात्रिभोज्यं करोति यः ।
तस्य शुद्धिर्न विद्येत चान्द्रायणशतैरपि ॥ ३ ॥

अर्थ—मदिरा और मांस इनको खाना और रातको भोजन तथा कन्दोंको भक्षण करना इनको जो करते हैं, तिनको तीर्थयात्रा, और ये सभी व्यर्थ हैं और उनका एकादशी व्रत और हरि निमित्त जागरण (रातको जागना, और पुष्करराजकी यात्रा और सभी चान्द्रायण व्रतविशेष) ये वृथा होते हैं चौमासेके आने पर जो रात्रिको भोजन करता है, उसकी सैंकडों चान्द्रायण व्रतोंसे भी शुद्धि नहीं होती।

शिवपुराण।

यस्मिन्गृहे सदा नित्यं मूलकं पाच्यते जनैः ।
स्मशानतुल्यं तद्वेश्म पितृभिः परिवर्जितम् ॥
मूलकेन समं चान्नं यस्तु भुङ्क्ते नराधमः ।
तस्य शुद्धिर्न विद्येत चान्द्रायणशतैरपि ॥
भुक्तं हालाहलं तेन कृतं चाभक्ष्यभक्षणं ।
वृन्ताकभक्षणं चापि नरो याति च रौरवं ॥

अर्थ--जिसके घर नित्य मूल पकाया जाता है उसका घर विना प्रेत स्मशानतुल्य है ॥ जो मनुष्य मूलके साथ भोजन खाता है उसका एकसौ चान्द्रायण व्रत करनेसें भी पाप दूर नहीं होता है ॥ मांसतुल्य जिसने अभक्ष्य भक्षण किया उसने हालाहल जहर भक्षण किया और जिसने बैंगन खाया वह नर रौरव नरकमें जाता है ॥ वगैरह बहोत प्रमाण हैं. अफसोस है! इनके शास्त्रोंमें ऐसे स्पष्ट प्रमाण होते हुए भी, इसी कदमूलको एकादशी आदि व्रतोंमें अन्यमति उमंगसें खाते हैं ॥

जैन धर्मकी अनादिसिद्ध करनेको ऐसे बहोत प्रमाण हैं कहां तक लिखा जाय?

इस समयमें जैन श्वेतांबरमतमें मुनि श्रीमद् विजयानंदसूरीश्वरजी (आत्मारामजी) महाराज एक बडे विद्वान हुए हैं, उनोंने अपनी अपूर्व विद्वत्तासें धर्मकी योग्य सेवा बजाके वर्त्तमान समयमें जैनीयोंमें अग्रेसर पद प्राप्त किया है इतनाही नहीं परंतु अन्य मतावलंबीओंमें, युरोप अमेरिकाके पंडितोंमें भी इन्होंने बडा नाम और मान पाया है. धर्ममें धुरीसमान, क्रियामें अचलायमान, अतिशय श्रद्धावान, परोपकारमें तत्पर, स्वभावसें शांत, कर्म अरि जीतनेमें सामर्थ्यवान, ज्ञानमें प्रबल, इत्यादि गुणसंपन्न महात्माके अपने अंत समयमें बनाये हुए इस तत्त्वनिर्णयप्रासाद ग्रंथको पढनेको, मनन करनेको, उनका चरित्र, और चित्रद्वारा उनकी मुखमुद्रा निहारनेको कौन भाग्यवान् उत्सुक नहिं होगा? सर्व होंगे

यह महात्मामें कइ गुण ऐसे थे जो बडे पुरुषोंमें भी एकही साथ बहु कठिनतासें पाये जाते हैं प्राय आंतरीय गुणोंके अनुसार बाहिरकी आकृति होती है दृढ विचारवाले पुरुषकी दृढता इत्यादि उनके चेहरेपर जाहिर होती है कामी पुरुषका काम उसकी आख और गालके उपर दृष्टिगोचर होता है हटपणा जडबासें जाहिर होता है. आकृति देखकर गुणअवगुण कहना यह प्राचीन अष्टांगगोचर होता है.

आधुनीक समयमें भी अमेरिकादि देशोंमें यत्किंचित् यह विद्या जाननेवाले हैं; इन महात्माका जिसने दर्शन नहि किया है वह उनकी तस्वीर देखकर उनकी भव्यता देख शकता है, परंतु पुण्योदयके प्रभावसें जिनोंने उनकी चरणसेवा की है वे तो पाच महाव्रत पालनेकी निशानी महाराज श्रीके शरीरपर देख शकते थे पांच महाव्रत हरेक मुनी पाले ऐसा ख्याल करें, परंतु इन महामुनिराजके ज्ञान, दर्शन, चारित्रकी छाप उनकी चालमें, वाणीमें, वर्तावमें, व्याख्यानमें, साधारण वार्तालापमें, टुंकमें हरेक प्रसंगपर जाहिर होतीथी, हजारों साधुओंके बीचमेंसें उक्त मुनिराज एकदम अनजान आदमीको भी नजर आ जाते थे ऐसी उनकी भव्य आकृति थी

आज काल हम देखते है के किसी खास धर्मगुरुकेपास व्याख्यान श्रवण करनेको अन्य धर्मवाले प्राय करके नहि जाते हैं विशेष करके वेदमतानुयायी ब्राह्मणोंने जैनोंकी तरफ अपना द्वेष जगे जगे जाहिर किया है जैन यानि नास्तिक-पाखंडी. फिर उस धर्मके साधु और उपदेशक तो दूरसेंही नमस्कार करने योग्य माने उसमें क्या आश्चर्य ? परंतु मुनि श्रीआत्मारामजीके संबधमें अन्य मतवालोंका वर्तन बहुतही प्रशंसनीय था. पंजाबमें महाराजश्रीने बहुत काल व्यतीत किया था, और उनके व्याख्यानमें ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र सब वर्णके लोग आते थे आते थे इतनाही नहीं परंतु उनको पूज्य गुरु समझते थे उनमें अन्यमतावलंबीयोंको सत्य मार्ग बतानेकी शक्ति भी अद्भुत थी किसीको बुरा नहीं मनाकर जीज्ञासुके संशयको दूर करते थे एक समय अंबाला शहरमें एक वेदमतानुयायी गृहस्थ महाराजश्रीका नाम सुनकर आकर नम्रतासें नमस्कार करके बैठा थोडी देरके बाद उसने पूछा " महाराज ! हमने सुना है कि आप जैनी लोग ईस जगत्का कोई कर्त्ता नहीं है ऐसा मानते है यह बात सच है क्या ? " महाराजजीने कहा " जगत्कर्ता ईस शब्दका अर्थ समझनेमें लोगोंकी भूल होती है जिससे जैनधर्म संबधी खोटा अपवाद प्रचलित हुआ है मै तुमको पूछता हू कि तुम खुद जगत्कर्ता ईश्वरको मानते हो तो कहो यह ईश्वर कोनसी जगा रहता है ? उस गृहस्थने कहा " महाराज ! ईश्वर सबही जगापर है; सब जीवोंमें ईश्वर हैं कोई जगा बिनाईश्वरके नहीं है " महाराजजीने कहा, " ठीक है हम इसको आत्मतत्त्व कहते हैं, यह हरेक जीववाली वस्तुमें है यह आत्मतत्त्व कर्मानुसार शरीर रचता है, तो इस आत्मतत्त्वको अमुक अपेक्षासें जगत्कर्ता कहनेमें आवे तो हमको कुच्छ उजर नहि है. परंतु एक बात जाननी जरूर है के यदि ईश्वरको सामान्य लोकोंके माने मुजिब जगत्कर्ता माना जायतो कामी पुरुष व्यभिचार करता है तो उनको प्रेरनेवाला

ईश्वर होना चाहिये. कभी ईश्वर जीवोंको कर्मानुसार फल देता है ऐसा माना जाय तो भी जब कामी पुरुषके व्यभिचारसें स्त्रीको पूर्वकर्मानुसार फल मिला तब वो फल ईश्वरने उसको दिया और उस कामी पुरुषको व्यभिचार द्वारा वह फल मिला इसलिये यह व्यभिचारकी इच्छा ईश्वरने पैदा की शिवाय इसके उस स्त्रीको या उस पुरुषको पूर्वोक्त फल कैसे मिल शकता?" उस गृहस्थने कहा "महाराज! ईश्वर तो साक्षी मात्र है" महाराजजीने कहा "हम भी निश्चयनयकी अपेक्षासें कहते हैं कि, आत्मा (ईश्वर) साक्षी मात्र है उस गृहस्थने कहा "महाराज! ऐसा है तब आपके और हमारे मतमें क्या तफावत है?" महाराजजीने कहा "तुम वस्तुका एक धर्म ग्रहण करके एकांतवादमें दूसरे धर्मोंको स्वीकारते नहीं हो, हम वस्तुके सबही धर्म अंगीकार करते हैं परंतु कथनमें सर्व धर्म युगपत् कथन करने अशक्य होनेसें और सबधर्म एक दूसरेके साथ ऐसे मिले हुए है कि एक दुसरेसें सर्वथा छुटे नहीं पड सकते हैं इस सबबसें जब हमको एक या ज्यादा धर्मके सबधमें व्याख्यान करना पडताहै तब कहते है कि "स्यात् अस्ति इत्यादि" अर्थात् कथंचित् (अमुक अपेक्षासें वस्तु है, कथंचित् नही है,) इत्यादि."

इस संभाषणसें वह गृहस्थ बहुतही संतुष्ट होकर महाराजजीके गुणानुवाद करता करता स्वस्थानमें गया जैसें साधारण बातचीतमें ऐसें व्याख्यानमें भी स्याद्वाद मार्गकी शैली महाराजजीके शब्द शब्दमें व्यापीहुई मालूम पडतीथी "षड्दर्शन जिन अंग भणीजे" यह आनंदघनजी महाराजका वाक्य सत्य है यह बात उनके साथ मात्र पांच मिनीट बात करनेसें मालूम होतीथी.

कोई अनजान गृहस्थ महाराजजी पास शंकाके पूछनेको आते तो उनकी शंकाका समाधान प्रश्न पूछनेके पहिलेही प्राय बातचितमें होजाताथा. जैन समुदायके उपर महाराजजीश्रीने जो जो उपकार किये हैं वे सर्व अवर्णनीय हैं धर्म संबंधी ज्ञान जैनोंमें बहुत कचा होगयाहै यह तो जाहिर बात है कोई युवान धर्मज्ञान प्राप्त करनेको चाहताथा तो उसको साधन मिलते नहिं थे साधन प्राप्त होते तो समझनेमें मुस्केली पडतीथी यह बडा अंतराय जो जीज्ञासु पुरुषके मार्गमें था सो इन्होंनें दूर किया जैन तत्वादर्श जैसा अमूल्य ग्रंथ हिंदी सरल भाषामें लिखकर जैनोंके तत्व समझनेमें आवे इसतरह लोक समक्ष रजु किया यह कुच्छ कम उपकारका काम नहीं है कितनेक अनसमजु लोकोंका मत है कि ज्ञानको भंडारमेंज रखना ज्ञान पंचमी जैसे दिनोंमें पुजामें रखना, परंतु जिनेश्वर भगवानने पुकारके उपदेश किया है कि आत्माका ज्ञान गुण बहार आवेगा तबही सिद्धिपदकी प्राप्ति होगी ज्ञान अभ्यासके लीये है, नाहिके संग्रहके लिये, ज्ञानका गुप्त रखनेसे लोगोंको ज्ञानके साधन शक्तिके होये भी नहीं देनेसें ज्ञानावर्णीय कर्म बंधाता है, यह जैन सिद्धांत है और यह सिद्धांतके अनुसार महाराजजीश्रीने जगा जगा पुस्तकालय बनवाके पुस्तकद्वारा और उपदेशद्वारा ज्ञानका फेलाव किया है और यह पुस्तक भी उसी ज्ञानका फल है. हम सब इस भाग्यवान महा पुरुषके उपकारनीचे दबेहुए

है. हमारे ज्ञान पर्याय इस मुनीराजके सदुपदेश और आज्ञानुसार वर्तनसें किंचित् पसार आये हैं इनके उपकाररूप ऋणको हम कीसी तरह भी अदा नहीं कर सकते है. इस प्रकारका मत उनके तमाम अनुयायीयोंका है हा एक बात है की इन महात्माके नामसें प्रतिग्राम और प्रतिनगर जैन विद्याशाला स्थापन करी जावे और जिसमें सांसारिक विद्याके साथ धार्मिक विद्याका ज्ञान दिया जावे तो पूर्वोक्त महात्माके किये उपकारका यत्किंचित् बदला उतर सकता है एसे २ कइ उपकार यह महात्मा कर रहे थे परंतु आ हा ! दैवकी गति न्यारी है, भारतवर्षभूषण, विद्यापारगत, सुधारणास्थापक, धर्मविजयके आनद, आत्मामें रमण करनहार, सुरि देवलोक प्राप्त हुए. यह भव्यमूर्ति, निडर घंटनादसम वाणी हृदय, पारगत दृष्टि, वज्रसमान मर्मयुक्त खडनकला, सदा सर्वथा मन वचन कर्मवाणीसें प्रकाशित केवल नि स्वार्थी धर्माभिमान यह एक क्षणमें भारतभूमिको दुर्भागि करनेको अदृश्य हो गये मातृभूमिको भी दुष्काल महामारीरूप दु खका वैधव्य स्वामिवियोगसें हुवा नहो !

पूज्यमहाराजजीने यह ग्रंथ अपनी अत अवस्थाके थोडेही काल पहीले बनायाथा अन्य मतके उपर उजाला डालनेवाली बहोतसी बाते इसमें है मेरेपर उनका पुरा अनुग्रह होनेसें यह ग्रथ मुझको दिया गया था प्रसिद्ध करनेको छपवाना सुरू किया बाद महामारी, छापखानेकी अव्यवस्था, बाद छापखानेका चीरूजाना, मेरेपर स्त्रीमरणादि आफतोंका आना, तस्वीरें मिलनेमें देरी, और जाहिर करने योग्य नहि ऐसें विघ्नोंसे और कुच्छ प्रमादसें भी ग्रथका प्रसिद्ध होना ढीलमें रहा. अब यह ग्रंथ वाचकवर्गके आगे रजु कर शका हू , जिसका पुरा धन्यवाद मैं आचार्यजी महाराज श्रीकमलविजयजी और मुनिराज श्रीवल्लभविजयजी आदिको देताहू कि उन्होंने औषधीरूप कटुलेख आदिसें मुझको जागृत करके प्रसिद्ध करवाया.

जिस जिस महाशयोंने इस ग्रंथको खास सहाय दी है, उनका पुरा धन्यवाद मानताहूं, उनकी सविस्तर हकीकत आगे आवेगी. *

आगेसें ग्राहक होकर पूरी मदद देनेवाले महाशयोंके नाम भी आगे दाखिल किये है.

यह पुस्तक धर्मकार्यमें उपयोग करनेवालेको, पुस्तकालय भडारमें भेट करनेवालेको, इनामके लिये लेनेवालेको, साधारण पाठकवर्ग वगैरे सबके सुभिताके लिये सहायदाताओंकी मददसें कम मूल्यमें दिया जायगा योग्य मुनिराजोंको यह पुस्तक भेट भेजा जायगा.

इन ज्ञानी आचार्यका अद्भुत वशवृक्ष रगीन वृक्षके माफिक बनाकर इस पुस्तकमें प्रसिद्ध किया है इस ग्रथकी तमाम तस्वीरें अमेरिका और इग्लडसे बहोत खरचा देकर खास कारीगरके हाथसें बनवाकर मगाई हैं कागज मोटे और सफाईदार पसद किये हैं अक्षर बडे हैं जो देखने और पढनेसें पाठकवर्ग खुश होंगे ज्ञानका अनुमोदन करेंगें तो प्रसिद्ध कर्त्ताका परिश्रमका बदला मिला समझा जायगा

---

* सहायदाता महाशयोंकी उमदा छबी और अल्प वृत्तात उन महाशयोंकी इच्छा नही होते हुवे भी सहायताके केवल उपकारार्थ छापे गये है.

मुद्रालयसे और दृष्टि दोषके कारणसें जो भूल रहगईहै उसका सूक्ष्म शुद्धिपत्रक ग्रंथमें दाखल किया है फिर भी कोई भूल रह गई होतो सुज्ञ पाठक वर्गसें प्रार्थना है कि सुधारके बांचे

सस्ती किंमतमें ग्रंथको प्रसिद्ध करानेके वास्ते जिन महाशयोंने मदद दीहै उनकी तस्वीर वगरेह इस ग्रंथमें प्रसिद्ध कर्ताने उन महाशयोंकी केवल कदर बुजनेको प्रसिद्ध साधु, अग्रेसरी धर्मके जानकर जैन बंधुओंकी समति लेकर दाखल किये हे मेरेपास ऐसी सम्मति मोजूद होते हुए भी चंद जैनबंधुओंने गृहस्थोंकी तस्वीर वगैरेह दाखल करनेमें विरुद्ध उठायाथा अगर यह बात ग्रंथ प्रसिद्धकर्ताकी मरजीकी थी, परंतु किसीको पुस्तकका अंतराय न होवे इस लिये मैं तीन तरहके पुस्तक बंधवाये है (१) मूल ग्रंथ, प्रस्तावना, जन्म चरित्र, और तस्वीर दाखल किया हुवा, संपूर्ण ग्रंथ, (२) और ग्रंथकर्ताकी तस्वीर और मूल ग्रंथ, (३) और प्रस्तावना, ग्रंथकर्ताका जन्म चरित्र, साधुकी तस्वीरें, गृहस्थोंकी तस्वीरें और टुंक वृत्तांतका अलग ग्रंथ किंमत सबकी एकही पडेगी, जीनको जैसा चाहे वैसा मंगवा लेवे कितनेक ग्राहकोंका यह आग्रह है कि हमको तो संपूर्ण ग्रंथ साथही चाहिये इस लिये किसीका दील दु खी न होवे, ऐसा रस्ता नीकालके उपर मुजिब मेंने व्यवस्था की है पुस्तक प्रसिद्ध होनेमें ढील होनेसें जो ज्ञानांतराय हुवा है उसकी मैं क्षमा चाहकर आखिर कहताहू कि इस पुस्तककी शोधनमें, इसकी उमदा हस्ताक्षरमें नकल करनेमें, प्रस्तावना लीखनेमें, और प्रूफ वगैरह सुधारनेमें जो किंमती सहायता देके श्रीमद विजयानंदसूरिश्वरके जेष्ठ शिष्य श्रीमान् पंडित श्री लक्ष्मीविजयजीके शिष्य श्रीमान् श्रीहर्षविजयजीके शिष्य मुनि श्रीवल्लभविजयजीने जो परिश्रम उठाया है उनको और पंडीतजी अमीचंदजीको मैं धन्यवाद देता हूं कि उन्होंने गुरु भक्ति और धर्मसेवा निमित्त जैनधर्म और उसके अनुयायी उपर अमूल्य उपकार किये हैं

श्रीमद् विजयानंदसूरि (आत्मारामजी) महाराजके पाटपर श्रीमद् कमलविजय सूरि महाराज बिराजमान हुवे, उनकी और इस ग्रंथको उपर लिखी मदद देनेवाले मुनिश्री वल्लभ विजयजीकी तस्वीरें दाखल करानेको भी बहुत महाशयोंने जोर दिया, वे तस्वीरें भी उन्होंकी आज्ञा नहीं होते हुवे भी केवल धर्मसेवा और ग्राहकोंकी तीव्र जीज्ञासाको तृप्त करनेको दाखल की है जिसकी मैं क्षमा चहाता हु

यह ग्रंथ कायदे माफक रजीस्टर कराया है, और सर्व हक प्रसिद्ध कर्त्ताने अपने स्वाधिन रखा है

सर्वको आनंद सुख प्राप्त हो तथास्तु ! ! !

दासानुदास,

अमरचंद पी० परमार.



आचार्य श्री १००८ श्रीमद् कमल विजयसूरि

श्रीमद्विजयानंद सूरीश्वर (आत्मारामजी) के पाटधारी

मूल–पंजाबी–ब्राह्मण –सिरसामें यति किशोरचंदजीके पास रहते थे

ढुंढक दीक्षा, सं० १९३० में श्री विश्नचंदजीके पास ली   नाम—रामलालजी

संवेगी दीक्षा–अहमदाबादमें—सं० १९३२

और श्रीमन् आत्मारामजीके बडे शिष्य श्री लक्ष्मीविजयजी (विश्नचंदजी) के शिष्य हुए

पाटण-गुजरातमें पट्टपर बिराजे   सं०१९५७

वचनामृतकी वृष्टी जगह २ कर रहे हैं

मुद्रालयके और दृष्टि दोषके कारणसें जो भूल रहगईहे उसका सूक्ष्म शुद्धिपत्रक ग्रंथमें दाखल किया है फिर भी कोई भूल रह गई होतो सुज्ञ पाठक वर्गसें प्रार्थना है कि सुधारके वांचे.

सस्ती किंमतमें ग्रंथको प्रसिद्ध करानेके वास्ते जिन महाशयोंने मदद दीहे उनकी तस्वीर वगैरेह इस ग्रंथमें प्रसिद्ध कर्त्ताने उन महाशयोंकी केवल कदर बुजनेको प्रसिद्ध साधु, अंग्रेजरी धर्मके जानकर जैन बंधुओंकी समति लेकर दाखल किये हैं मेरेपास ऐसी सम्मति मोजूद होते हुए भी चंद जैनबंधुओंने गृहस्थोंकी तस्वीर वगैरेह दाखल करनेमें विरुद्ध उठायाथा अगर यह बात ग्रंथ प्रसिद्धकर्ताकी मरजीकी थी, परंतु किसीको पुस्तकका अंतराय न होवे इस लिये मैं तीन तरहके पुस्तक बंधवाये है (१) मूल ग्रंथ, प्रस्तावना, जन्म चरित्र, और तस्वीर दाखल किया हुवा, संपूर्ण ग्रंथ, (२) और ग्रंथकर्ताकी तस्वीर और मूल ग्रंथ, (३) और प्रस्तावना, ग्रंथकर्ताका जन्म चरित्र, साधुकी तस्वीरें, गृहस्थोंकी तस्वीरें और दुरु वृत्तांतका अलग ग्रंथ किंमत सबकी एकही पडेगी, जीनको जैसा चाहे वैसा मंगवा लेवे कितनेक ग्राहकोंका यह आग्रह है कि हमको तो संपूर्ण ग्रंथ साथही चाहिये इस लिये किसीका दील दुःखी न होवे, ऐसा रस्ता नीकालके उपर मुजिब मैंने व्यवस्था की है पुस्तक प्रसिद्ध होनेमें ढील होनेसें जो ज्ञानांतराय हुवा है उसकी मैं क्षमा चाहकर आखिर कहताहू कि इस पुस्तककी शोधनमें, इसकी उमदा हस्ताक्षरमें नकल करनेमें, प्रस्तावना लीखनेमें, और प्रुफ वगैरह सुधारनेमें जो किंमती सहायता देके श्रीमद विजयानंदसूरिश्वरके जेष्ठ शिष्य श्रीमान् पंडित श्री लक्ष्मीविजयजीके शिष्य श्रीमान् श्रीहर्षविजयजीके शिष्य मुनि श्रीवल्लभविजयजीने जो परिश्रम उठाया है उनको और पंडीतजी अमीचंदजीको मैं धन्यवाद देता हू कि उन्होंने गुरु भक्ति और धर्मसेवा निमित्त जैनधर्म और उसके अनुयायी उपर अमूल्य उपकार किये हैं

श्रीमद् विजयानंदसूरि (आत्मारामजी) महाराजके पाटपर श्रीमद् कमलविजय सूरि महाराज बिराजमान हुवे, उनकी और इस ग्रंथको उपर लिखी मदद देनेवाले मुनिश्री वल्लभ विजयजीकी तस्वीर दाखल करानेकी भी बहुत महाशयोंने जोर दिया, वे तस्वीरें भी उन्होंकी आज्ञा नहीं होते हुवे भी केवल धर्मसेवा और ग्राहकोंकी तीव्र जीज्ञासाको तृप्त करनेको दाखल की है जिसकी मैं क्षमा चहाता हु

यह ग्रंथ कायदे माफक रजीस्टर करवाया है, और सर्व हक्क प्रसिद्ध कर्त्तानें अपने स्वाधिन रखा है.

सर्वको आनंद सुख प्राप्त हो तथास्तु !!!

दासानुदास,

अमरचंद पी० परमार.



आचार्य श्री १००८ श्रीमद् कमल विजयसूरि

श्रीमद्विजयानंद सूरीश्वर (आत्मारामजी) के पाटधारी

मूल–पंजाबी–ब्राह्मण –सिरसाम यति किशोरचंदजीके पास रहतेथे

ढुन्डक दीक्षा, सं० १९३० में श्री त्रिभचंदजीके पास ली   नाम—रामलालजी

संवेगी दीक्षा–अहमदाबादमें—सं० १९२७

और श्रीमन् आत्मारामजीके बडे शिष्य श्री लक्ष्मीविजयजी (विश्वचन्द्रजी)के शिष्य हुए

पाटण–गुजरातमें पट्टपर बिराजे   सं०१९५७

वचनामृतकी वृष्टी जगह २ कर रहे है

॥ ॐ ॥

॥ श्रीपरमात्मने नमः ॥

उपोद्घात

विदित होवेकि, इस संसारसमुद्रमें सतत पर्यटन करनेवाले प्राणियोंको, जन्ममरणादिक अत्युग्र दुःखोंमेंसें मुक्त करनेवाला, केवल एक धर्मही है अन्यमतावलंबीयोंके शास्त्रोंमें भी, ऐसेंही कहा हुआ है ऐसा जो धर्म, उसका मूल तो सर्वांशयुक्त दयाही है, दयाकरके धर्मकी प्राप्ति होती है. और परिपूर्ण धर्मकी प्राप्ति हुए, जीव, मोक्षको प्राप्त होता है इसवास्ते दया सर्वोत्कृष्ट पदार्थ है सर्वमतोंवाले दयाका उपयोग करते है, परंतु सर्वांश दयाका उपयोग करते नही है, इसीवास्ते उनको धर्मपदार्थका जैसा चाहिये, वैसा लाभ नही प्राप्त होता है दयाका सर्वांश उपयोग तो, केवल जैनदर्शनमेंही स्वीकार किया है, तिससेंही जैनदर्शन, धर्मधुरीसर कहा जाता है इसवास्ते दयाका सर्वांश उपयोग करना आवश्यक है. क्योंकि, जब दया पदार्थ सर्वांशयुक्त पालनेमें आवे, तबही तिससें धर्मोपलब्धि होवे, अन्यथा कदापि नहीं. सर्वमतावलंबियोंको दया मान्य है, तथापि उनके समझनेमें फरक होनेसें, वे, श्रेष्ठतापूर्वक दयाका सर्वांश-उपयोग, नही करसकते हैं. यह बात, इस ग्रंथके अग्रेतनव्याख्यानसें सिद्ध हो जायगी, तथा श्रीसूत्रकृतांगादिशास्त्रोंमें भी वर्णन किया है कि,–कितनेक (अन्यधर्मी) कहते हैं, प्राणी जबतक शरीरमें सुखी होवे, तबतक उसके ऊपर दया करनी, परंतु जब वह, व्याधिग्रस्तास्थितिमें पीडित होवे, तबतो, उस प्राणीका वध करके, पीडासें मुक्त करना, सोही दया है कितनेक कहते हैं कि, सूक्ष्म, अथवा स्थूल जे प्राणी, मनुष्योंको दुःख देते हैं, उनको मारदेना, यही दया है कितनेक यज्ञयागादिमें प्राणियोंका नाश करनेमेंही धर्मधुरंधरता, और दया मानते हैं.

या वेदविहिता हिंसा नियतास्मिंश्चराचरे ॥

अहिंसामेव तां विद्याद्वेदाद्धर्मो हि निर्बभौ ॥ इत्यादि वचनात्

भावार्थः–इस चराचर जगत्में जो वेदोक्त हिंसा नियत की गई है उसको अहिंसाही जानना चाहिये; क्योंकि, वेदसेंही धर्मकी उत्पत्ति हुई है, इत्यादि.

और कितनेक अतिसूक्ष्मादि प्राणी, जिसका स्वरूप दृष्टिगोचर नही, उसकी किंचित्-मात्र भी चिंता नही करते हैं, किंतु केवल स्थूलप्राणियोंके ऊपरही दया करनेमें दया मानते हैं. ऐसें अनेक प्रकारसें मनःकल्पित दयाका उपयोग, प्राय अन्यमतावलंबी करते हैं, तथापि, वे, स्वदया १, परदया २, द्रव्यदया ३, भावदया ४, निश्चयदया ५, व्यवहारदया ६, स्वरूपदया ७, अनुबंधदया ८, इत्यादि दयाके जो अनेक भेद जैनग्रंथोंमें सविस्तर वर्णन किये हैं, तदनुसार प्राप्त होके, दयाका स्वरूप, नयशैलीपूर्वक समझते नही हैं, यही उनकी मतिमें विभ्रम है, और ऐसी भ्रमितमतिवाले दर्शनियोंका मत, कदापि शुद्ध नहीं. किंतु,

॥ ॐ ॥

॥ श्रीपरमात्मने नमः ॥

उपोद्घात

विदित होवेकि, इस ससारसमुद्रमें सतत पर्यटन करनेवाले प्राणियोंको, जन्ममरणादिक अत्युग्र दुःखोंमेंसें मुक्त करनेवाला, केवल एक धर्मही है अन्यमतावलंबीयोंके शास्त्रोंमें भी, ऐसेंही कहा हुआ है ऐसा जो धर्म, उसका मूल तो सर्वांशयुक्त दयाही है, दयाकरके धर्मकी प्राप्ति होती है, और परिपूर्ण धर्मकी प्राप्ति हुए, जीव, मोक्षको प्राप्त होता है इसवास्ते दया सर्वोत्कृष्टपदार्थ है सर्वमतोंवाले दयाका उपयोग करते हैं, परंतु सर्वांश दयाका उपयोग करते नही है, इसीवास्ते उनको धर्मपदार्थका जैसा चाहिये, वैसा लाभ नही प्राप्त होता है. दयाका सर्वांश उपयोग तो, केवल जैनदर्शनमेंही स्वीकार किया है, तिससेंही जैनदर्शन, धर्मधुरीसर कहा जाता है इसवास्ते दयाका सर्वांश उपयोग करना आवश्यक है क्योंकि, जब दया पदार्थ सर्वांशयुक्त पालनेमें आवे, तबही तिससें धर्मोपलब्धि होवे, अन्यथा कदापि नही. सर्वमतावलंबियोंको दया मान्य है, तथापि उनके समझनेमें फरक होनेसें, वे, श्रेष्ठतापूर्वक दयाका सर्वांश-उपयोग, नही करसकते हैं. यह बात, इस ग्रंथके अग्रेतनव्याख्यानसें सिद्ध हो जायगी, तथा श्रीसूत्रकृतांगादिशास्त्रोंमें भी वर्णन किया है कि,-कितनेक (अन्यधर्मी) कहते हैं, प्राणी जबतक शरीरमें सुखी होवे, तबतक उसके ऊपर दया करनी, परंतु जब वह, व्याधिग्रस्तस्थितिमें पीडित होवे, तबतो, उस प्राणीका वध करके, पीडासें मुक्त करना, सोही दया है कितनेक कहते हैं कि, सूक्ष्म, अथवा स्थूल जे प्राणी, मनुष्योंको दुःख देते हैं, उनको मारदेना, यही दया है. कितनेक यज्ञयागादिमें प्राणियोंका नाश करनेमेंही धर्मधुरंधरता, और दया मानते हैं

या वेदविहिता हिंसा नियतास्मिंश्चराचरे ॥
अहिंसामेव तां विद्याद्वेदाद्धर्मो हि निर्बभौ ॥ इत्यादि वचनात्.

भावार्थः-इस चराचर जगत्में जो वेदोक्त हिंसा नियत की गई है उसको अहिंसाही जानना चाहिये, क्योंकि, वेदसेंही धर्मकी उत्पत्ति हुई है, इत्यादि.

और कितनेक अतिसूक्ष्मादि प्राणी, जिसका स्वरूप दृष्टिगोचर नही, उसकी किंचित्-मात्र भी चिंता नही करते हैं, किंतु केवल स्थूलप्राणियोंके ऊपरही दया करनेमें दया मानते हैं. ऐसें अनेक प्रकारसें मनःकल्पित दयाका उपयोग, प्राय अन्यमतावलंबी करते हैं, तथापि, वे, स्वदया १, परदया २, द्रव्यदया ३, भावदया ४, निश्चयदया ५, व्यवहारदया ६, स्वरूपदया ७, अनुबंधदया ८, इत्यादि दयाके जो अनेक भेद जैनग्रंथोंमें सविस्तर वर्णन किये हैं, तदनुसार प्रवृत्त होके, दयाका स्वरूप, नयशैलीपूर्वक समझते नही हैं, यही उनकी मतिमें विभ्रम है, और ऐसी भ्रमितमतिवाले दर्शनियोंका मत, कदापि शुद्ध नहीं. किंतु,

जिस दर्शनमें अपने आत्माका आत्मपणा जानके, पूर्णदयाको अंगीकार करी होवे, सो तो एक, श्रीजैनदर्शनही है, जो सर्व लोकको विदित है, और इससें यह धर्म, जगत्में सर्वोत्कृ कहा जाता है.

इस धर्मके अपेक्षावशसें आचारधर्म, दयाधर्म, क्रियाधर्म, और वस्तुधर्म, ये चार भे होते हैं और दान, शील, तप, और भाव, येही चार तिसके कारण है. धनके बलसें दा होता है, मनोबलसें शील पलता है, शरीरबलसें तप होता है, और सम्यग्ज्ञानबलसें भावध र्मकी वृद्धि होती है

भावधर्म, दान शील तपसें अधिक है क्योंकि, भावधर्मका कारण ज्ञानबल है, जिस करके वस्तुका स्वरूप जाना जाय सो ज्ञान है ज्ञानसे जितना आत्मधर्मकी वृद्धि और संरक्षण होता है, उतना प्रथमके तीन दान, शील, तप, इनसें नही होता है इसक कारण यह है कि, नय, निक्षेप, प्रमाण, चार अनुयोगविचार, सप्तभंगी, षद्द्रव्यादि कका विचार, इत्यादि सर्व, ज्ञानबलकरकेही जीवको परिपूर्ण प्राप्त होता है श्री दशवै कालिक सूत्रमें भी प्रथम ज्ञान, और पीछे क्रिया कही है. " पढम नाण तओ दया " इ वचनात्. ज्ञान विनाकी जो क्रिया करनी है, सो भी, क्लेशरूप प्राय है, क्रिया ज्ञानक दासी तुल्य है, ज्ञानी पुरुषकी अल्पक्रिया भी, अत्यंत श्रेष्ठ है. " ज अन्नाणी कम्म खवेइ बहुहिं वासकोडिहिं । त नाणी तिहिं गुत्तो खवेइ ऊसासमित्तेण " इति वचनात श्री उत्तराध्ययन सूत्रमें कहा है कि, ज्ञानगुणसयुक्त जो होवे, उसको मुनि कहना इससें भी ज्ञानका माहात्म्य कथंचित् अत्युत्कृष्ट मालूम होता है श्री महानिशीथ सूत्र ज्ञानको अप्रतिपाति कहा है श्री उपदेशमालामें कहा है, ज्ञानरूप नेत्रकरके उद्यमवान ऐसे मुनिको वदन करना योग्य है

श्री देवाचार्य, श्री मल्लवादी प्रभृति आचार्योंने, दिगंबर बौद्धादिकोंका पराजय किया और यशोवाद प्राप्त किया, तथा श्रीमद्यशोविजयोपाध्यायजीने, काशीमें सर्व वादीयोंक पराजय करके 'न्यायविशारद' की पदवी पाई, सो भी, ज्ञानकाही प्रभाव जानना

ज्ञानविना सम्यक्त्व नही रह सकता है, ज्ञानविना अहिंसा मार्ग नही जाना जाता है सिद्धांतोक्त सकल क्रियाका मूल जो श्रद्धा, उसका भी कारण ज्ञान है क्योंकि ज्ञानविना प्राय श्रद्धा प्राप्त होती नही है, ऐसा जो ज्ञान, उसके पांच भेद है मति, श्रुत, अवधि, मन पर्यव, और केवल इन पाचोंमें भी, श्रुतज्ञान सर्वसे अधिकोपयोगि है श्रुतज्ञान पदार्थ मात्रका प्रकाशक है, स्वपरमतका परिपूर्ण प्रकाश करनेवाला भी श्रुतज्ञानही है, अज्ञानरूप अधकार पटलको दूर करनेवास्ते सूर्य समान है और दुस्समकालरूप रात्रिमें तो दीपक समान है तथा स्वपरस्वरूपका बोध करा नेको श्रुतज्ञानही समर्थ है, अन्य चारों ज्ञानसें जाने हुए पदार्थका स्वरूप भी श्रुतज्ञानसेंही कहा जाता है, इसवास्ते मत्यादि चारों ज्ञान स्थापने योग्य है, "चत्तारि नाणाइ ठप्पाइ ठवणि ज्जाइ" इति श्रीअनुयोगद्वारसूत्रादिवचनात् । इसवास्ते श्रुतज्ञानही, उपकारक है क्योंकि श्रुतज्ञानसेंही उपदेश होता है, श्रुतज्ञानसेंही शुद्धात्मिक परमपदकी प्राप्ति होती है, इस

वास्ते श्रुतज्ञान बडा निमित्त कारण है; श्रुतज्ञानके सुननेसें जीवको शुद्ध स्वरूप विशुद्ध श्रद्धानकी प्राप्ति होती है, और उससें शुद्धात्माका आचरण आसेवन अनुभव उत्पन्न होता है, सोही परमपद प्राप्ति जाननी श्रुतज्ञानके श्रवण करनेसें जीव, धर्मको विशेषकरके जानता है, विवेकी होता है, दुर्मतिका त्यागी होता है, यावत् मोक्षको प्राप्त होता है इसवास्ते श्रुतज्ञानका आदर, अवश्य करना चाहिये. श्रुतज्ञानका संयोग होना जीवको अतीव दुर्लभ है

श्रुतज्ञानके संयोगसें श्री गौतमस्वामी, सुधर्मास्वामी, जंबूस्वामी प्रभृति बहुत जीव, संसार समुद्रको तर गये और वर्त्तमानकालमें महाविदेहक्षेत्रमें श्री सीमंधरादिक तीर्थंकरोंकी वाणी सुनके, बहुत जीव, तर रहे हैं और आगामिकालमें पद्मनाभादि तीर्थंकरोंकी वाणी सुनके, अनेक जीव, तरेंगे तैसेंही इस भरतादि क्षेत्रमें अद्यतनकालमें भी, जो जीव, श्रुतज्ञानको सुनेगा, पढेगा, औरोंको पढावेगा, अंतरंग रुचिसें श्रद्धा प्रतीत करेगा, करावेगा, सो, सुलभबोधि होवेगा, यावत्क्रमकरके मुक्तिको प्राप्त होवेगा ऐसे श्रुतज्ञानका मूल, द्वादशांगी है तिस श्रुतज्ञानकी वाचना (१) पृच्छना (२) परावर्त्तना (३) अनुप्रेक्षा (४) और धर्मकथा (५) होती है. सो धर्मकथा, श्री उववाइसूत्रमें चार प्रकारकी कही है आक्षेपिणी (१) विक्षेपिणी (२) निर्वेदिनी (३) और संवेदिनी (४) जिससें एक तत्त्व, मार्गमें प्रवृत्ति होवे, तिस कथाका नाम आक्षेपिणी कथा है । १ । जिसमे मिथ्यात्वकी निवृत्ति होवे, तिसका नाम विक्षेपिणी है । २ । जिससें मोक्षकी अभिलाषा उत्पन्न होवे, तिसका नाम निर्वेदिनी है । ३ । जिससें वैराग्यभावकी उत्पत्ति होवे, तिसका नाम संवेदिनी है । ४ । ऐसी श्रुतज्ञानरूप कथा, श्री अरिहंत, देवाधिदेव, परमेश्वर, तीर्थंकर, सर्वज्ञ, जीवन्मोक्ष, समवसरणमें बैठके "उपन्नेइवा विगमेइवा धुवेइवा" इस त्रिपदी उच्चारणपूर्वक, द्वादश पर्षदाके मध्यमें करते हैं और तिससें (त्रिपदीसें) श्रीगणधर, द्वादशांगीकी रचना करते हैं, तिनको सूत्र कहते हैं तथा तीर्थंकरके शासनमें हुए प्रत्येक बुद्ध, चतुर्दशपूर्वधर, दशपूर्वधर प्रभृति महान् पुरुष जिन जिन निबंधोंकी रचना करते है, तिनका भी सूत्र संज्ञा होनेसें द्वादशांगीमेंही समावेस होता है क्योंकि, वे सूत्र भी, द्वादशांगीका आश्रय लेकेही, स्थविर, रचते हैं

यदुक्तं श्रीनंदीवृत्तौ ॥

> यत्पुनः शेषैः श्रुतस्थविरैस्तदेकदेशमुपजीव्य ॥
> विरचितं तदनंगप्रविष्टमित्यादि ॥

परंतु गणधरकृत सूत्रको, 'नियतसूत्र' कहते है, और स्थविरकृत सूत्रको, 'अनियत' कहते हैं ।

उक्तंच ॥ गणहरकयमंगकयं जंकय थेरेहि बाहिरं तं तु ॥
नियतं चंगपविट्ठं अणिययं सुयबाहिरं भणियं ॥ १ ॥

गणधरकृतको अंगप्रविष्ट कहते हैं, और स्थविरकृतको अनंगप्रविष्ट, अर्थात् अंग बाहिर कहते हैं, तथा जो, अंग प्रविष्ट है, सो नियत है क्योंकि, सर्व क्षेत्रोंमें सर्व काल अर्थ वा क्रमको अधिकारकरके ऐसेंही व्यवस्थित होनेसें. और शेष जो, अंगबाहिर

श्रुत है, सो अनियत है । तथा उपन्नेइवा इत्यादि मातृकापदत्रयप्रभव, गणधरकृत, आचारादि, जो श्रुतज्ञान है, तिसको ध्रुवश्रुत कहते हैं, और जो, स्थविरकृत, मातृकापदत्रय व्यतिरिक्त, प्रकरणनिबद्ध उत्तराध्ययनादि, अंगवाह्य है, उनको अध्रुवश्रुत कहते हैं ।

तदुक्त श्रीस्थानांगवृत्तौ ॥

गणहरथेराइकय आएसा सुत्तपगरणओ वा।
धुवचलविसेसणाओ अंगाणंगेसु णाणत्तंति ॥

इस श्रुतज्ञानके उद्देश, समुद्देश, अनुज्ञा, और अनुयोग, ये चार भेद होते हैं सामान्य प्रकारसें कथन करना, सो उद्देश, यथा अमुक शास्त्र, वा अध्ययन, तू पढ, विशेष कथन करना, सो, समुद्देश, यथा इस शास्त्र, वा अध्ययनको अच्छी तरेसें याद रख, आज्ञा देनी, सो अनुज्ञा, यथा अन्यको पढाव, और सूत्रार्थ कथनरूप व्याख्यान सो अनुयोग इनका विस्तार श्री अनुयोगद्वार, व्यवहारभाष्य कल्पभाष्यादि सूत्रोंमें है इत्यादि कारणोंसें व्याख्यान करनेमें श्रुतज्ञानही उपयोगि है, अन्य नहीं, अन्य ज्ञानोंको मूक होनेसें. इसवास्ते इस समयमें श्रुतज्ञानहीकी रक्षा, और वृद्धि करनी चाहिये क्योंकि, इस समयमें श्रुतज्ञानही, हम तुमको आधारभूत है यदि श्रुतज्ञान शास्त्र न होवे तो, देवगुरुधर्मका बोध होना इस कालमें कदापि न होवे इसवास्ते श्रुतज्ञानकी वृद्धि, तथा रक्षा करनी है, सो धर्मकी वृद्धि और रक्षा करनी है क्योंकि, इससें अधिक, और कोइ भी धर्मवृद्धि करनेका अत्युत्तम साधन, नही है इसवास्ते श्रुतज्ञानकी वृद्धि और रक्षा करनेके उपाय, तथा तत्संबंधी उद्योगमें, सुज्ञजनोंको कटिबद्ध होके, तन मन और धनसें, कदापि, पीछे नही हटना चाहिये ज्ञानकी जो वृद्धि है, सो ज्ञानीके ऊपर आधार रखती है, और ज्ञानीकी वृद्धि, ज्ञानकी अपेक्षा रखती है ज्ञान और ज्ञानीका परस्पर कार्य-कारणभाव संबंध है हरएक गाममें, शहरमें, जिलेमें, अथवा देशमें, एक ज्ञानी होवे तो, उसके उपदेशसें अन्य कितनेही जनोंको ज्ञान होता है, और जिनको ज्ञान होता है, वे सर्व, ज्ञानी कहाते हैं जब ज्ञानीसें ज्ञानका प्रचार होता है, तब ज्ञानी, ज्ञानका कारण, और ज्ञान, ज्ञानीका कार्य होता है और जब ज्ञानके प्रचारसें ज्ञानीकी वृद्धि होती है, तब ज्ञान, ज्ञानीका कारण, और ज्ञानी, ज्ञानका कार्य होता है यद्यपि ज्ञान और ज्ञानीका, गुण-गुणीभाव संबंध, असंभवी है, क्योंकि, ज्ञान और ज्ञानी, अभेद है, तिससें कार्यकारणता संभवे नही है तथापि, कर्म सहित जीवको ज्ञानरूप गुण उत्पत्तिवाला है, तिससें कार्यता संभवे है, और ज्ञानीको कारणता संभववी है और ज्ञानसें ज्ञानीपणा होता है, तिससें ज्ञानी कार्य है, और ज्ञान कारण है

हरएक वस्तुकी सिद्धिमें उसके साधनोंकी अवश्यमेव अपेक्षा होती है, जब ज्ञानरूप वस्तु सिद्ध करनी होवे, तब तिसके साधन व्याकरण, कोष, काव्य, छंदोलंकार, ज्योतिष, न्याय, धर्म, और अन्य दर्शन विषयक नाना प्रकारके शास्त्र, तथा उन उन शास्त्रोंके अध्ययनका विधि, तथा श्रवणमननादिककी आवश्यकता है प्राचीन कालमें विद्वानोंकी (पूर्वाचार्योंकी) स्मरणशक्ति अत्युत्कृष्ट होनेसें, वे, हरएक प्रकारकी प्रक्रिया, शृंखलाबद्ध कंठाग्र रखते थे

अर्थात् बडे बडे सूत्र प्रमुख द्वादशांगीपर्यंत कंठाग्र रखते थे, तिस समयमें भी, यद्यपि देव नागरी आदि लिपियें विद्यमान थीं, तो भी, ग्रथोंको लिखके रखनेकी बहुत जरूरत नही पडती थी क्योंकि, वो कालमानही तैसा था पीछे, कालके प्रभावसें जैसें जैसें मनुष्योंकी स्मरणशक्ति घटती गई, तैसें तैसें ज्ञानकी न्यूनता होने लगी जिससें किसी समयमें कितनेक विद्वानोंने इकठे होके, ग्रथ लिखने लिखवाने प्रारभ किये

इस रीतिके प्रचलित होनेके बाद उसउस समयके श्रेष्ठ पुरुषोंने, लिखारियोंके पाससें अनेक ग्रथ लिखवायके, उनके बडेबडे ज्ञानभडार (पुस्तकालय) कराये, जो, अद्यापि प्रायः पाटनादि शहरोंमें देखनेमें आते हैं यद्यपि पूर्वज पुरुषोने, ऐसे अनेक भडार करके श्रुत-ज्ञानके मुख्य साधन पुस्तकोंकी रक्षा करी है, तथापि, कितनेही अपूर्व अपूर्वतर पुस्तक, पढने पढाने-वाले, और समझने समझानेवालेके अभावसे, नष्ट होगये और कितनेक पुस्तक तो, जैनि-योंके प्रमादसें नष्ट होगये, अब जो विद्यमान है, उनमें भी न्यूनता होनेका सभव हो रहा है; क्योंकि, न तो, कोई जैनीयोंमें पठन पाठनका 'कालेज' (बृहज्जैनशाला) मुख्य साधन है, और न मातापिता ध्यान देकर पढाते हैं केवल सासारिक विद्याके ऊपरही जोर देते हैं, परतु यह उनकी बडी भारी भूल है यदि सासारिक विद्याके साथही, धार्मिक विद्या भी पढाई जावे तो, थोडेही प्रयाससे ज्ञानवृद्धि होवे, और धर्मकी भी वृद्धि होवे, तथा अपने सतानोंका परलोक भी सुधर जावे परतु, मोदक खाने छोडके ऐसा काम कौन करे ? अफसोस !!! जैनियोंका उदय, कैसे होवेगा ?

हा ! आजकाल कई लोग नवीन पुस्तक लिखाके भडार कराते हैं, परतु वो भी, मक्षिका-स्थाने मक्षिकावत् जैसा लिखारियोंने लिख दिया वैसाही लेके स्थापन करदिया, शुद्ध कौन करे ? हाय ! जैनीयोंमें प्रमादने कैसा घर करदिया ! जो, ज्ञान पढनेकेतरफ ख्यालही नही होने देता है ! ! !

ऐसे ज्ञानके अभ्यासके न होनेसें लोगोंमें सस्कृत प्राकृतका बोध घट गया, तो अब इस समयमें सस्कृत प्राकृतके बोधरहित लोगोंको बोध करानेकेवास्ते देशीयभाषामें ग्रंथ रचना करके, अपनी शक्तिके अनुसार प्रत्येक ज्ञाता पुरुषको अपना ज्ञान प्रसिद्ध करना उचित है

इसीवास्ते पूज्यपाद श्री श्री श्री १००८ श्रीमद्विजयानन्दसूरीश्वर (आत्मारामजी) महाराजजीने भव्यजीवोंके उपकारकेवास्ते, अतिशय परिश्रम करके, लोक (देश) भाषामें ग्रथोंकी रचना करनी प्रारभ करी जिनमें जैनतत्त्वादर्श, अज्ञानतिमिरभास्कर, जैनप्रश्नोत्तरावलि, सम्यक्त्वशल्योद्धारादि कितनेही ग्रथ छपकरके प्रसिद्ध होगये हैं, कितनेक प्रसिद्ध करनेकेवास्ते तैयार है परतु प्रथम इस 'तत्त्वनिर्णयप्रासाद' नामक ग्रथको प्रसिद्धिमें रखते है

इस ग्रथका नाम यथार्थही गुणनिष्पन्न है क्योंकि जो कोई निष्पक्षपाती, इस ग्रथरूप प्रासाद(मंदिर)में प्रवेश करेगा, अवश्यमेव वस्तुस्वरूपनिर्णय प्राप्त करेगा. इस ग्रथके बनानेमें

ग्रंथकारने, कितना परिश्रम उठाया है, सो वांचनेवाले सुज्ञ जन आपही विचार लेवेंगे; इस वास्ते इस ग्रथकी महिमा लिखनी योग्य नहीं है क्योंकि, इस ग्रथमें ज्ञानगुण है तो, वाचक वर्ग आपही स्तुति-महिमा करेंगे क्या फूल किसीको कहता है कि, मेरे बीच सुगध है ?

जैसें राज्यमाहिल आदिके नाना प्रकारकी जडतसें जडे हुए स्तभ होते हैं, तैसें इस ग्रथरूप प्रासादके अनेक प्रकारके ज्ञानगुणादि रत्नोंसें जडे हुए छतीस (३६) स्तभ है जिनमें-

१ प्रथम स्तभमें पुस्तकसमालोचना, प्राकृतभाषानिर्णय, और वेदबीजक प्रमुखका वर्णन है

२ दूसरे स्तभमें श्रीमद्धेमचद्राचार्यकृत महादेवस्तोत्रद्वारा ब्रह्मा विष्णु महादेवके लक्षण, और उनका स्वरूप, तथा लौकिक ब्रह्मादिदेवोंमें यथार्थ देवपणा सिद्ध नहीं होता है, तिसका पुराणादि लौकिक शास्त्रद्वारा स्वरूप वर्णन किया है

३ तीसरे स्तभमें यथार्थ ब्रह्मा विष्णु महादेवादिरूप देवमें जो जो अयोग्य बातें हैं, उनका व्यवच्छेदरूप वर्णन श्री हेमचद्रसूरिकृत द्वात्रिंशिकाद्वारा किया है

४, ५. चौथे और पांचवें स्तभमें श्रीमद्धरिभद्रसूरिविरचित लोकतत्त्वनिर्णयका भाषासहित अपूर्व स्वरूप लिखा है, जिसमें पक्षपात रहित होकर देवादिकी परीक्षा करनेका उपाय, और अनेक प्रकारकी सृष्टि जे जगद्वासी जीवोंने कल्पन करी है, उसका वर्णन है

६ छठे स्तभमे मनुस्मृतिका कथन किया हुआ सृष्टिक्रम, और उसकी समीक्षा है

७, ८ सातमे आठमे स्तभमें ऋगादि वेदोंमें जैसे सृष्टिका वर्णन है, तैसें प्रतिपादन करके तिसकी समीक्षा करी है

९ नवमे स्तभमें वेदके कथनकी परस्पर विरुद्धताका दिग्दर्शन है

१० दशमे स्तभमें वेदोक्त वर्णनमेंही वेद ईश्वरोक्त नही है, ऐसा सिद्ध किया है

११ इग्यारहमे स्तभमें "ॐभूर्भुव स्वस्तत्" इत्यादि गायत्री मत्रके अनेक प्रकारके अर्थ करके, श्रीजैनाचार्योंकी बुद्धिका वैभव दिखाया है

१२ बारमे स्तभमें सायणाचार्य शकराचार्यादिकोंके बनाये गायत्री मत्रके अर्थोंका समीक्षापूर्वक वर्णन है, तथा वेदका निंदक नास्तिक नही, किंतु वेदका स्थापक नास्तिक है, ऐसा महाभारतादिकोंद्वारा सिद्ध किया है

१३ सें ३१ तेरमे स्तभसें लेके इकतीसमे स्तभपर्यंत गृहस्थके षोडश (१६) सस्कारोंका वर्णन, श्रीवर्द्धमानसूरिकृत आचारदिनकर नामा शास्त्रसें करा है

३२ बत्तीसमे स्तभमें जैनमतकी प्राचीनताका, वेदके पाठोंमें गडबड होगई है तिसका, निष्पक्षपाती होनेका, और व्याकरणादिकी सिद्धिका, तथा पाणिनीकी उत्पत्ति प्रभृतिका वर्णन है

३३ तेतीसमे स्तभमें जैनमतकी बौद्धमतसें भिन्नताका, पाश्चात्यविद्वानोंमति दिवशिक्षाका, और दिगबरमति दिनशिक्षाका वर्णन है

३४ चौतीसमे स्तंभमें जैनमतकी कितनीक वातोंपर कितनेही लोक अनेक प्रकारके वितर्क ऊठाते हैं, उनके उत्तर दिये है

३५ पैंतीसमे स्तभमें शकरदिग्विजयानुसार, शकरस्वामीका जीवनचरित्र है

३६ छत्तीसमें स्तभमें वेदव्यास, और शकरस्वामीने, जो जैनमतकी सप्तभगीका खडन किया है, उसका वेदव्यास और शकरस्वामीकी जैनमतानभिज्ञताका दर्शक, उत्तर दिया है तथा जैनमतवाले सप्तभगी जैसें मानते है, तैसें उसका स्वरूप, और सप्तनयादिकोंके स्वरूपका संक्षेपसें वर्णन करा है

ऐसे विचित्र वर्णनके साथ यह ग्रथ भरा हुआ है, इसवास्ते निष्पक्षपाती सज्जन पुरुषोंको,अथसें लेके इतिपर्यंत वरावर एकाग्रध्यान रखके इस ग्रथको वाचना, और सत्यासत्यका निर्णय करना उचित है क्योंकि, पक्षपात करना यह बुद्धिका फल नही है, परंतु तत्त्वका विचार करना, यह बुद्धिका फल है "बुद्धेःफल तत्त्वविचारणचेतिवचनात्" और तत्त्वका विचार करके भी पक्षपातको छोडकर जो यथार्थ तत्त्वका भान होवे, उसको अगीकार करना चाहिये, किंतु पक्षपात करके अतत्त्वकाही आग्रह नही करना चाहिये

यतः ॥ आगमेन च युक्त्या च योर्थ समभिगम्यते ।
परीक्ष्य हेमवद् ग्राह्यः पक्षपाताग्रहेण किम् ॥

इत्यलम्बहु पल्लवितेन विद्वद्वर्येषु ॥

भावार्थः—आगम (शास्त्र) और युक्तिकेद्वारा जो अर्थ प्राप्त होवे उसको सोनेके समान परीक्षा करके ग्रहण करना चाहिये, पक्षपातके आग्रह (हठ) से क्या है ॥

अब सर्व सज्जन पुरुषोंको, में, विज्ञप्ति करताहू कि, इस ग्रथको समाप्त करके, गुरुजी महाराज श्रीश्रीश्री १००८ श्रीमद्विजयानदसूरीश्वरजी [आत्मारामजी] महाराजजीने नकल करनेवास्ते मुजको दीया विहारादि कितनेहा कार्यके विक्षेपमें, नकल पूर्ण होनेमें विलव हुआ, तथापि, जोर देनेसें सनखतरा ग्राममें नकल पूर्ण हो गई. तदनतर सनखतरेसें प्रतिष्ठादिसबधि कार्यके व्यतीत होए, श्री गुरुजीमहाराजजी इस क्षेत्रमें [गुजरावालेमें] स १९५३ प्रथम ज्येष्ट सुदि द्वितीयाको पधारे बाद थोडेही समयमें, अर्थात् सवत १९५३ प्रथम ज्येष्ट सुदि अष्टमीको स्वर्गवास होगए !!! इसवास्ते सम्पूर्ण इस ग्रथको, वे, आप शुद्ध नही कर सके हैं !! किंतु, मैंने, स्वबुद्ध्यनुसार देखके, शुद्ध करा है. इसवास्ते, इस ग्रथमें जो कोई अशुद्धतादि दोष रह गया होवे, सो, सर्व सज्जन पुरुष सुधारके वाचे, और क्षमा करें "॥ विस्मृति स्वभावोहि छद्मस्थानामतो मिथ्यादुष्कृतं मेस्त्विति ॥"

श्री वीर सवत् २४२३ ॥
विक्रम सवत् १९५४ ॥

मुनि वल्लभविजय.



मुनि श्री वल्लभ विजयजी जन्म सं० १९२७.

जन्म-बडोदा, ज्ञाति-श्रीमाली पीता-दीपचंद माता-इच्छाबाई

दीक्षा, सं० १९४४ में राधनपुर

श्रीमद् महोपाध्याय श्री लक्ष्मीविजयजीके शिष्य-श्री हर्षविजयजीके शिष्य

पंजाबमें इनके उपदेशसे पुस्तक भंडार, आत्मानंद जैन पत्रिका, आत्मानंद जैन पाठशाला,

पा[illegible] फंड आदिकी स्थापना हुई

पंजाबदेशी तीर्थस्तवनावली आदिके कर्त्ता

इस ग्रंथके संशोधन कर्त्ता।

। श्रीः ।

॥ ॐ नमः श्रीपरमात्मने ॥

श्रीश्रीश्री १००८ श्रीतपगच्छाचार्यश्रीमद्विजयानन्द-सूरीश्वरजी प्रसिद्धनाम आत्मारामजी महा-राजजी जैनीसाधुका जन्मचरित्र ॥

अगले पृष्ठके ऊपर जो फोटो (छवि-चित्र) विराजमान है वह किनकी प्रतिमूर्त्ति है ? वह प्रशस्त ललाट, वह अलौकिक तेजभरे शांतरूप दीर्घ नयन, किनके हैं ? शरीरमें देवभावका प्रकाश, मुखमंडलमें सर्व जीवोंको अभय करनेवाली अपूर्व शोभा—क्या यह सब स्वर्गीय संपत्, रोगशोकसें भरे हुए मनुष्योंमें पाई जासक्ती है ? पाठको ! यह छवि, ऐसे महात्माकी है, जो जैनीयोंके इस कठोर कुदिनमें डूबते हुये हिंदुधर्ममें अग्रगामी, जैनधर्मको डूबने नही देते थे, जो मनुष्य शरीर धरकरके भी, ऐसे ऊंचे आसनपर आरूढ थे कि, जिसपर साधारण मनुष्योंके चढने-की सामर्थ नहीं है जो संपूर्ण भारत यावत् विलायत तकमें इस दुषम कालमें सत्य यथार्थ धर्मके एकही उपदेष्टा थे जिनकी कृपाके विना षट्दर्शनकी व्याख्या इस समयमें बहुत कठिन थी, जिनके दर्शनसें राजा प्रजा धनी निर्धन ज्ञानी अज्ञानी सब अपनेको कृतार्थ मानते थे, यह प्रति-मूर्त्ति, उनहीं सर्व पंडितोंके शिरोमणि, सर्वशास्त्रोंके वेत्ता, परम मुनियोंके मुखी, परम ऋषियोंके अग्रेश्वरी, भारतवर्षके अलंकार, जैनधर्माधार, न्यायांभोनिधिश्रीश्रीश्री १००८ श्रीमद्विजयानंद-सूरीश्वरजी (आत्मारामजी) महाराजजीकी है धर्मात्मन् ! जगत्में कौन ऐसा होगा, जिनका हृदय विद्वानमंडलके आदर्शस्थल, धार्मिकोंके प्रधान, दयादि गुणोंके पारावार, जैनीयोंके शिरो-भूषण, यथार्थ सत्यवक्ता महामुनि श्रीमद्विजयानंदसूरीश्वर (आत्मारामजी) महाराजजीका वि-शुद्ध चरित पढने सुननेको उत्साहित न होगा ?

मूलक पंजाबके द्वाबा "सिंधसागर" में दरया "जेहलम के किनारेपर 'पींडदादनखान' नामक एक शहर वसताहै, तिसके पूर्वओर अनुमानसे दो मिलके फासलेपर एक "कलश नामक गाम है तहां पूर्व कालमें कलशजातिके सरदारोंका दिवान "बीवाराम' नामक काश्यपगोत्रीय ' चउवरा कपूर ब्रह्म क्षत्रिय था तिसका पुत्र "रोचिराम" नामसे हुआ. तिसका वडापुत्र "दीवानचंद' था तिसकी स्त्री "महादेवी" रूपमें देवीके समान थी तिसकी कूखसे "लखुमल"-"गणेशचंद"-दोपुत्र, और "रूक-मदेवी" नामक एक पुत्री पैदा हुए दीवानचंदका छोटाभाई 'श्यामलाल" था जिसके "देवीदत्ता" करके पुत्र और "राधा" नामकी पुत्री हुए और दीवानचंदके दूसरे भाइयोंके बेटे ' महेशदास" "प्रभदयाल' "मंगलसेन' हुये जिनकी सन्तान आत्मारामजीके पितृव्य भाई (चाचेके पुत्र) "रामनारायण," "हरिनारायण,' "गुरुनारायण" आदि अब वियमान हैं तात्पर्य आत्मारामजीके

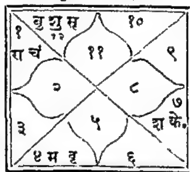
परिवारके आठ घर कल्शगाममें पूर्वोक्त परपराके जन विद्यमान हैं और "पत्याल "गाम जो खुशा बके पास बसता है, वहा भी ' आत्मारामजी" के नजदीकके साकसबधी कपूरक्षत्रियोंके चालीश घर बसते हैं (वशवृक्ष देखो) " दीवानचद " और उसकी भार्या "महादेवी" अपने दोनों पुत्रों और लडकीको छोटी उमरमें छोडकर गुजर गयेथे इस वास्ते दोनों पुत्र (लक्खुमल गणेशचद) और पुत्री (हुकमदेवी) तीनों जने अपने पिताके भाई (चाचे) श्यामलालके घर रहतेथे परतु " श्यामलालकी" भार्याकी तबियत सखत होनेसे, " गणेशचद " दु खी होकर कितनेक दिन पीछे बिना कहे, वहासें चलनिकला, और रामनगरके पास कसबा फालीयेमें आकर थानेदार (पोलीस ऑफिसर) हुआ और वहाही " कवरसेन " नामके पूरी क्षत्रिय कुजाहीकी बेटी " रूपदेवी " के साथ बिवाह होगया " गणेशचद " शूरवीर होनेसे बहोत सीपाइयोंके साथ भाइवड्ड आदि नगरोंकी लडाइयोंमें शामिल रहतेथे कितनेक काल पिछे महाराज "रणजीतसिंह" के राज्यमें हरिकापत्तनपर एक हजार घोडेस्वारोंको जानेका हुकम हुआ उनके साथ गणेश चदकी भी बदली हुई वहा (हरिकापत्तनपर) " गणेशचदजी " बहुत मुद्दत तक रहे इसीवास्ते वहाके " नदलाल " ब्राह्मण, और कितनेक ओसवालोंके साथ बहुत प्रीति होगईथी जिससे जब रिसालेकी बदली हुई, तब गणेशचदजी नोकरी छोडकर वहाही रहगये

"नदलाल" ब्राह्मण बडा शूरवीर और डाकू (धाडवी) था तिसकी सगतसे "गणेशचदजी" भी डाके डालने लगगये उनके साथ, और भी आसपासके जीरेकी, लेहरा, गडीविंड, रूडीवाला, सरहाली इत्यादि गामोंके डाकू मिलजानेसें, सब मिलके डाके डालने लगे उस समयमें सरहाली गाममें "मूला-मिश्र " उसका पितामह (बाबा) रहता था उसके तीन बेटे थे उनमेंसे "वशाखीराम" तो पडित था, और अमृतसरमें रहता था, और "देवीदत्ता" मूलामिश्रका बाप, सरहालीमेंही रहता था और तीसरा "आज्ञाराम" जीरेकी गाममें दुकान करता था, और गणेशचदजीका मित्र, और मेहरबान था, और डाके डालनेमें भी शामिल था इसी तरह गाम रूडीवालामे " बिशनसिंघ" का बाप " कहानसिंघ " गणेशचदजीका मित्र रहता था गणेशचदजी प्राय करके अपने मित्र कहानसिंघ की मुलाकातके वास्ते रूडीवालामें आते जाते थे वहा (रूडीवालामे) लेहरा गामकी एक लडकी " कर्मो " ब्याही थी, और बिशनसिंघके घरकेपास रहती थी इसवास्ते कर्मो भी गणेशचदजीको अच्छी तराह जानती थी, और इसी सबबसे गणेशचदजीका " लेहरा " गाममें रहना हुआ क्योंकि "राजकुवर" नामका क्षत्रिय, टुकावाली जिल्ला गुजरावालेका, जीरामें महाराज रणजीतसिंह-जीके तरफसे ठेकेदार हुआ करता था अपने वतनकी मोहबतसे गणेशचदजी उससे मिलनेके लिये जीरेकेपास लेहरा गाममें रहने लगे कर्मोकी जान पिछान होनेसें लेहरामें रहना उनको मुश्किल नहीं हुआ, अर्थात् थोडेही कालमें बहुत लोगोंसे मोहबत होगई गणेशचदजी लेहरा गामसे प्राय निरतर राजकुवरसे मिलनेकेलिये जीरेगाममें आते थे, इस सबबसें जीरेका रहनेवाला "जोधामल्ल" ओसवाल, जोकि खानदानी, लायक और बुजुर्ग था, उसकेसाथ गणेशचदजीकी मुलाकात हुई जोधामल्लका राजकुवर ठेकेदारके साथ बहुत स्नेह था राजकुवरका बेटा " जमीतराय " जीरेमें रहता था, जिसके बेटे " केदारनाथ " और " बद्रीनाथ " बडे नामी आदमी अब शहर गुज

रावालेमें विद्यमान है* इस सबबसे कितनेही वर्षोंतक जमीतराय, और जोधामल्लकी संतानका आपसमें मोहबतका बरताव रहा

भवितव्यताके वशसें "राजकुवर" और "जमीतराय" तो अपने वतन चलेगये और "गणेशचंद-जी" लेहरा गाममेंही रहने लगे, और वहांही विक्रम संवत् १८९३ चैत्रशुदि प्रतिपदा गुरुवारके रोज "श्रीआत्मारामजीका" "रूपादेवी" माताकी कूखसें जन्म हुआ माता पिताने ब्राह्मणोंसे पूछके "आत्माराम" नाम रखा

श्रीआत्मारामजीकी
जन्म कुंडली नष्टोद्दिष्टसे ॥



इस समय (लेहरागाम) "अतरसिंघ" नामा "सोढी" (शीखलोकोंके गुरू) के तावेमें था इस सबबसे सोढी अतरसिंघ, और "गणेशचंदजीकी" आपसमें बहोत प्रीति थी एक दिन सोढी अतरसिंघने श्रीआत्मारामजीको माता रूपादेवीकी गोदमें देखा, और बुद्धिके प्रभावसे ऐसा निश्चय किया कि, यह बालक बडा तेजप्रतापवाला होवेगा पिछे अतरसिंघ सोढीने कहा कि "इस बालकके ऐसे सुंदर लक्षण हैं कि,जिससें यह लडका बडाभारी राजा होवेगा ! अथवा ऐसा साधु होवेगा कि, जिसके चरणोंके राजा महाराजा भी सेवक होवेंगे ! और यह लडका किसी तरह भी तुमारे पास नहीं रहेगा इस लिये यह लडका तुम मुझे दे दो, और में इसको अपनी कुल मिलकतका मालिक करूंगा." परंतु माता पिताने यह बातको स्वीकार नहीं किया तथापि सोढी अतरसिंघके दिलसें यह बात दूर नही हुई, बलकि निरंतर इसही बातका ख्याल रखता रहा, और श्रीआत्मारामजीसे बहुत प्यार करता रहा ठेकेदार राजकुवरके वतन पहुंचनेसे गणेशचंदजीके भाई लखमल और चाचेके पुत्र देवीदत्तामल्लको गणेशचंदजीका पता बहोत कालके पीछे मालूम होनेसे दिल खुश होगया और उसी वखत अपने भाई 'गणेशचंदजी' को अपने वतन ले जानेकेलिये आये अपने भाई गणेशचंदजीको देखतेही बहुत खुश होगये

दोहा—पाया अतिहि वियोगसे, जसतन दुःख भरपूर ॥
फिर मिलनेसें वोही तन, पावे सुख भरपूर ॥ १ ॥

गणेशचंदजीकी गोदमें छोटी उमरवाले बडे तेजवाले अपने भाईके पुत्र श्रीआत्मारामजीको देखके बहुतही प्रसन्न हुये और दोनों भाइयोंने अपने भाई गणेशचंदजीको अपने वतन लेजानेके वास्ते बहुत मेहनत की, परंतु इस देशकी मोहबत, और दाना पानीने गणेशचंदजीको किसी तरह भी जाने न दिया इस वास्ते लाचार होके कितनेक दिन वहां रहके अपने वतनको चलेगये और चलनेके समय अपने भाईके पुत्र श्रीआत्मारामजीका नाम, "दित्ता" रखगये और कहते गये कि, "इस बालकका अच्छी तरह ख्याल रखना "रत्नयत्नेनरक्षयेत्" भावार्थ—रत्नकी यत्न

* विक्रम संवत् १९३७ में जब श्रीआत्मारामजी महाराजजीका चौमासा शहेर गुजरांवालेमें था, तब जोधामल्लकी संतानके राधामल्ल और हरदयालमल्ल श्रीमहाराजजीके दर्शनकेवास्ते गये थे, तब पिछली मुलाकतके सबबसे जमीतराय, उनसे बहोत महोबतसे मिला था बलकि देशाचारके अनुसार राधामल्लके बेटे ईश्वरदास और वशारामल्लके पुत्र हरदयालमल्लको कपडे और मिठाइ वगैरह दी थी

पूर्वक रक्षा करना चाहिये तब मातापिताने भी "दित्ता" नाम स्वीकार कर लिया और उस दिनसे "श्रीआत्मारामजी" "दित्ता" के नामसे प्रसिद्ध हुवे

कितनेक कालपीछे लेहरा गाममें व्यवहाराभावसें गणेशचदजी अपनी भार्या रूपदेवीको और दित्ताको लेकर आनदपुर माखोवाल कीर्त्तिपुरमें, जहा सोढी अतरसिंघ रहता था जा रहे, और सोढी अतरसिंघने बडी खुशीसें गणेशचदजीको अपने सीपाइयोंमें नोंकर रखे और पशुयोंके घास चारेकी जमीन (चरागा–बीड) के रक्षक ठहराये और अतरसिंघ सोढी निरतर दित्ता (श्री आत्मारामजी) को लेनेके ख्यालमेंही रहा इसी सबबसे कितनेक दिनोंपिछे सोढी अतरसिंघने, गणेशचदजीको अपनी जमीनमें ब्राह्मणोंकी गौया चरने देनेके तोहमतसे तकसीरवार ठहराकर, पैरोंमे वेडी पहनाकर कहा कि, " जो तू अपने पुत्र आत्माराम (दित्ता) को मुझे देवेगा तो, मैं तुजे छोडूगा, अन्यथा किसी प्रकारसे भी तेरा छूटकारा न होवेगा " परतु गणेशचदजी जोरावर होनेके सबबसें अवसर देखके बेडीको तोडके अपनी भार्या रूपदेवी और पुत्र दित्ता(आत्माराम) को लेके रातके वखत भागगये, और रडीवाला गाममें आ रहे यहा, गणेशचदजीकी भार्या रूपादेवीसें दूसरा पुत्र पैदाहुआ अनुमान चार वर्ष वहा रहके कितनेही आदमियोंके और सावण ब्राह्मण तथा जोधामल्ल वगैरहके कहनेसे फिर लेहरा गाममें चलेआये और लेहरा गाममें खेतीका काम करके अपना गुजारा करते रहे, और जोधामल्लकी मोहबतसे अमन चैन उडाते रहे

अब इस बखत पिछला जमाना (शिलेसाई जमाना) फिरगया था, और सरकार महाराणी विक्टोरीयाका अमल होगया था, जिससे हरतरहका आराम हुआ, और देशकी ठीक ठीक सारवार होती रही न्यायके सबबसे मानो बकरी और सिंह एक घाटपर पानी पीने लगे, अर्थात् छोटे वडे सबको अदल इनसाफ मिलता रहा, मुसाफर निडर होके रस्तेपर चलने लगे थ, कोई नही पूछसकता था कि तेरे मुखमें कितने दात है सोना उछालता चलाजावे,न चोरका डर,न डाकूका डर रहा था क्योंकि, सबके सिरपर अग्रेजी राज्य प्रतापका ऐसाही डर घूम रहा था परतु —

दोहा—होणहार हिरदे वसे विसर जाय सुध्ध बुध्ध ॥
जो होणी सो होत है, वैसी उपजे बुद्ध ॥ १ ॥

इस कहावत मुजब ऐसे नाजुक बखतमे गणेशचदजी आठ आदमीयोंके साथ मिलकर फिर डाका डालना शुरु किया परन्तु आखर उसको इस पापका फल मिला सो यह कि,पकडे गये कहावत भी है कि "सौ दिन चोरके और एक दिन साधका "इस अपराधमें अदालतसे दश वर्षकी कैदकी सजा पाई और कैदियोंको आग्रेके किल्लेमें भेजनेका हुकम हुआ चलते वखत गणेशचदजीने अपने पुत्र दित्ता (आत्माराम) को जोधामल्ल ओसवालको सोंपकर कहा कि, " इसकी सार संभाल रखना क्योंकि यह तुह्माराही पुत्र है, इसवास्ते इसको सासारिक विद्या पढाना, जिससे यह व्यापारादि करके अपना गुजारा करता रहे, बहुत क्या कहु मैं इसको तुमकोही सोंपताहु, इसका नफा नुकसान तुमारेही अखतीयार है " जोधामल्लने रुदन करके कहा कि,

जुदाई तेरी किसको मजूर है जमीन सख्त और आसमान दूर है

परंतु कर्मोंके आगे किसीका भी जोर नहीं चलता है —

हरो वरो ब्रह्म विवाह कर्त्ता, वैश्वानरो आहुतिदायकश्च ॥
तथापि वंध्या गिरिराजपुत्री, न कर्मणः कोपि वली समर्थः ॥ १ ॥

भावार्थ इसका यहहै–महादेव जिसका पति, साक्षात् ब्रह्माजीने जिसका विवाह किया, जिसके विवाहमें साक्षात् अग्नि देवताने आहुति दी, ऐसी पार्वती भी वाझ रही इसवास्ते कर्मोंसे कोई भी अधिक बलवान् समर्थ नहीं है–इसवास्ते इस वातमें हमारा कोई भी जोर नहीं चलता है और इस लडकेकी बावत जो तुम कहते हो, सो तो परमेश्वर जानते है, मुझको यह अपने दोनो लडकोंसे अधिक प्यारा है " इत्यादि कितनीक वातें करके गणेशचदजी तो चलेगये और आग्रेके किल्लेमें-ही अंग्रेजोंके साथ लडाई करते हुए, आपसमें गोली लगनेसे गणेशचदजी स्वधामको पहुचगये !!!

अव आत्मारामजी जोधामल्लके घरमें उनके पुत्रोंकी तरह पलने लगे, और जोधामल्लने भी अपने आपको सच्चा धर्मपिता प्रमाणित किया, और अपने बचनको पूरा कर दिखलाया और अपने छोटे पुत्र " रलाराम " के साथ हिंदी इल्म सिखलाया इसवास्ते " आत्मारामजी " भी, जोधामल्लको अपने पिता मानते थे और जोधामल्लका वडा पुत्र " वधावामल्ल " आत्मारामजीसे बहुत भाईओंसे भी अधिक प्यार रखता था इसवास्ते घरकी स्त्रिया भी, अपने लडकोंवालोंसे भी ज्यादा प्यार रखती थी, परतु जोधामल्लके छोटे भाईका नाम, दित्तामल्ल होनेसे आत्माराम-जीका दूसरा नाम दित्ता वदलके, " देवीदास " रखदिया था

जिनदिनोंमें देवीदास (आत्मारामजी) जोधामल्लके घरमे पलतेथे उस वखत जोधामल्ल, और तिसका परिवार, और जीरेके रहीस सब ओसवाल, ढूढक मत (स्थानकवासी) को मानतेथे

*ढूढकमतकी उत्पत्ति इस प्रकारसे है –गुजरात देशके अहमदावाद नगरमे एक लोंका नामका लिखारी यतिके उपाश्रयमे पुस्तक लिखके आजीविका चलाताथा एक दिन उसके मनमे ऐसी वेइमानी आइ जो एक पुस्तकके सात पाने विचमेंसे लिखने छोड दिये जब पुस्तकके मालिकने पुस्तक अधूरा देखा, तब लोंके लिखारीकी बहुत निंदा की और उपाश्रयसे निकाल दिया, और सबको कह दियाकि, इस वेइमानके पास कोई भी पुस्तक न लिखावे तब लोंका आजीविका भग होनेसे बहुत दुःखी हो गया और जैनमतका बहुत द्वेषी बनगया परतु अहमदावादमें तो लोंकेका जोर चला नहीं तब यहासे (४५) कोशपर लींबडी गाम है, वहा गया वहा लोंकेका सबधी लखमसी बनिआ राज्य-का कारभारी था, उसे जाके कहाकि, " भगवानूका धर्म लुप्त हो गयाहै, मैने अहमदावादमें सच्चा उपदेश किया था परतु लोकोंने मुजको मारपीट के निकाल दिया, यदि तुम मुझे सहायता दो तो, मैं सच्चे धर्मकी प्ररूपणा करू " तब लखमसीने कहा, " तु लींवडीके राज्यमें वेधडक तेरे सच्चे धर्मकी प्ररूपणा कर, तेरे खानपानकी खबर मैं रखूगा " तब लोंकेने सवत् १५०८ में जैनमार्गकी निंदा करनी शुरू करी परतु २६ वर्ष तक किसने भी इसका उपदेश नहीं माना सवत् १५३४ मे भूणा नामा बनिया लोंकेको मिला, उसने लोंकेका उपदेश माना, लोंकेके कहनेसे विना गुरूके दिये अपने आप वेष धारण कर लिया, और मुग्ध लोगोंको जैनमार्गसे भ्रष्ट करना शुरू किया लोंकेने ३१ शास्त्र सच्चे माने व्यवहार सूत्रको मान्य नहीं किया जिसका सबब यह है कि व्यवहार सूत्रमें लिखाहे कि, " तीन वर्ष दीक्षापर्यायवाले साधुको आचारप्रकल्प नामा अध्ययन पढाना कल्पता है, एव चार वर्ष पर्यायवाले साधुको सूयगडाग पाच वर्ष पर्यायवालेको दशाश्रुतस्कध—कल्पसूत्र (वृहत्कल्प) व्यवहारसूत्र, विरष्ट वर्ष पर्यायवालेको अर्थात् छ वर्षसे लेके नव वर्ष पर्यंत पर्यायवालेको ठाणाग—समवायाग, दश वर्ष पर्याय-वालेको भगवतीसूत्र, एकादश वर्ष पर्यायवालेको खुड्डियाविमाण पविभत्ति—महल्लिया विमाण पविभत्ति-अगचूलिया—वगचूलिया—विवाह चूलिया, द्वादश वर्ष पर्यायवालेको अरुणोववाए–गरुलोववाए–धरणो

इसवास्ते आत्मारामजी भी जोधामल्ल आदिके साथ ढूढक साधुओंके पास जाने लगे और ढूढक मतको मानने लगे " जवारमल्ल " नामक ओसवालके पाससे ढूढकमतका सामायिक पडिक्कमणा सीखा और नवतत्व छत्रीसद्वार आदि बोल विचारोंको भी याद किये विक्रम सवत् १९१० में " गगाराम–जीवणराम " ढूढकमतके दो साधुओंने जीरामें चोमासा किया तब जवारमल्ल दुग्गडके, और पूर्वोक्त साधुओंके उपदेशसे " श्रीआत्मारामजी " इस असार ससारसें विरक्त हुए, और साधु होनेका निश्चय किया इस बातकी खबर इनकी माता " रूपादेवी " जो कि लेहरा गाममें रहती थी उसको हुई, तब वो अपने पुत्रके पास आके बहुत रुदन करके पुत्रको साधु होनेके वास्ते मना करने लगी, परतु श्रीआत्मारामजीने माताजीको शात करके मीठे वचनोंसे कहा कि, " हे माताजी ! आप मुजे खुशीसे रजा दीजिये, जिससे मेरा साधुपणा आपके आशीर्वादसें पूर्ण होवे " तब माताजीने गद्गद् स्वरसे कहा कि, " हे पुत्र ! तेरे पिताजी तुजको जोधामल्लजीको सोंप गयेहैं, इसवास्ते अपने धर्मपिता जोधामल्लजीकी आज्ञा तुजको लेनी चाहिये, और जो कुछ वे फरमावे, वो तुजको करना चाहिये मेरे तरफसे वे मालिक हे " माताजीका ऐसा कथन सुनके श्रीआत्मारामजीने बडी खुशीसे अपने धर्मपिता जोधामल्लसे आज्ञा मागी तब जोधामल्लने कहा कि, " तू मेरा धर्मपुत्रहे, मैंने तुजको बाल्यावस्थासे पाला है,इसवास्ते में अपने सारे धनका तीसरा हिस्सा तेरे नामका सरकारमे लिखादेता हु, और तेरा विवाह भी बडी धामधूमसे में आप करूगा किसीके बहकानेसे मत भूल " यह कहकर जोधामल्ल श्रीआत्मारामजीको प्यारसे छातीके साथ लगाकर बहुत रोया, तब श्रीआत्मारामजी अपने धर्मपिता जोधामल्लके सामने कुछ भी जवाब न दे सके, क्योंकि श्रीआत्मारामजी बहुत नरम दिलके, और विनयवान् थे

ववाए—वेसमणोववाए–वेलधरोववाए, त्रयोदश वर्ष पर्यायवालेको उठ्ठाणसुए–समुठ्ठाणसुए–देविंदोववाए–नागपरियावणियाए, चउदह वर्ष पर्यायवालेको सुमिणभावणा, पदरह वर्ष पर्यायवालेको चारणभावणा, सोला वर्ष पर्यायवालेको तेअनिसग्ग सप्तदश वर्ष पर्यायवालेको आसीविसभावणा, अठारह वर्ष पर्यायवालेको दिठ्ठीविशभावणा, ऐकोनवीस वर्ष पर्यायवालेको दिठ्ठिवाए, बीश वर्ष पर्यायवालेका सर्वश्रुत, पढाना कल्पताहे " यदि जो लोंका व्यवहार सूत्रको मान्य करता तो, स्ववचन व्याघातरूप दूषणसे वज्रोपहत तुल्य होजाता क्योंकि, वो आप विना साधु हुयेही शास्त्र पढतारहा, और भूणा वगेरहको भी पढाया इसी सबबसे अद्यतनकालमें भी कितनेक जैनाभास गृहस्थोंयोको पूर्वोक्त शास्त्र पढाते हैं परतु यह आश्चर्य है कि, लोंकेने तो प्रथमसेही व्यवहार सूत्रको जलाजलि देदी थी इस वास्ते वो तो पृथगही रहो ! परतु जो लोक व्यवहारसूत्रको मानते हैं, और फिर गृहस्थीयोंको पूर्वोक्त पाठ लोपके शास्त्र पढाते हे, उनकी कितनी भारी बेसमझ है ! इस बातकी परीक्षा करनी हम उनकोही सपुर्द करते हैं अफ्शोश !! लोंकेने जो(३१)शास्त्र मान्य रखे उनमें भी,जहा जहा जिन प्रतिमाका अधिकार है, तहा तहा मन कल्पित अर्थ कहने लग गया इसी तरह कितनेही लोगोंको जैनमार्गसें भ्रष्ट किया विक्रम सवत् १०६८ में रूपजी नामा भूणेका शिष्य हुआ, उसका शिष्य सवत् १६०६ में वरसिंह हुआ, तिसका शिष्य सवत् १६४९ में माघ सुदि त्रयोदशी गुरुवारके रोज पहर दिन चढे जसवत हुआ, उसके पीछे बजरगजी हुआ (जो सवत् १७०२में लुपकाचार्य कहाया)बजरगजी की दीक्षा पीछे सुरतका वासी वोहरा वीरजीकी बेटी फूलाबाईके गोदपुत्र लवजीने दीक्षा ली दीक्षा लेनेके पीछे जब दो वर्ष हुए, तब दशवैकालिक शास्त्रका टबा (भाषारूप अर्थ) पढा तब अपने गुरुको कहने लगा कि, " तुम साधुके आचारसे भ्रष्ट हो, " इत्यादि कहनेसे गुरुके साथ लडाइ हुइ तब लुपकमत, और लोंकेमतके अपने गुरुको त्याग दिया और थोभणरिष–सखीयोजीको बहकाके अपने साथ लेके, अनुमान सवत् १७०९ में स्वयमेव कल्पित वेष धारण करके साधु बनगया, और मुखपर कपडा

पूर्वोक्त हकीगत गंगारामजी और जीवणमल्लजी साधुओंने सुनकर जोधामल्लके छोटे भाइ दित्तामल्लको जिसका धर्ममें बडाही राग था, कहा कि, " आप अपने बडे भाईको समझाकर आत्मारामजीको साधु होनेकी आज्ञा दिल्वा देवें " दित्तामल्लके आग्रहसे, और श्रीआत्मारामजीकी वृत्ति सर्वथा ससारमें पराङ्मुख देखनेसे, अतमें जोधामल्लने भी लाचार होकर आज्ञा दे दी और कहा कि, "हे पुत्र ! चिरजीव रहीयो ! और " श्रीजैनमत " का खूब उद्योत करीयो " ! वृद्धोंके वचन कैसे फलप्रदाता है ! ! कि जोधामल्लके इस आशिर्वादने थोडेही कालमें क्या असर दिखलाया ! जोकि इस वखत स्वप्नमें भी ख्याल नहीं था

चौमासे बाद मगसर वदि एकमके दिन " मनसूरदेवा " गाममें साधुओंके साथ श्रीआत्मारामजी जा रहे वहा जीराकी वाईयोंके साथ श्रीआत्मारामजीकी माता भी रुदन करती हुई आई तब साधुओंने तिसको वहुत अच्छी तराह समझाई और पूछा कि, " माई! तेरे पुत्रका नाम "दित्ता" है ? वा " देवीदास " है ? वा "आत्माराम" है ? क्योंकि लोक इसको कितनेही नामोंसे बुलाते हैं हम इसका कौनसा नाम रखे ? " माताजीने कहा कि, " महाराजजी ! इसका असली नाम तो " आत्माराम " ही है, और शेष पीछेसे कल्पना करे हुये हैं," तब साधुओंने कहा कि, "हम तो पहिलाही नाम अर्थात् " आत्माराम " ही रखेंगे. " तबसे श्रीआत्मारामजीका यही (आत्माराम) नाम प्रसिद्ध हुआ और क्रम करके " मालेर कोटला " मे पहुचे जहा मगसर सुदि पचमीके रोज बडी धामधूमसे " जीवणरामजी " गुरुके पास ढूढक मतकी दीक्षा ली

श्रीआत्मारामजीकी बुद्धि बहुत तीव्र, और निर्मल थी,परतु उनके गुरु अधिक पढे हुये न होनेसे

नावलिया और लौंकेसे विलक्षणही मत निकाला लवजीके चेले सोमजी तथा कहानजी हुये तथा लुपकमति कुवरजीके चेले धर्मसी–श्रीपाल–अमीपालने भी गुरुको छोडके, स्वयमेव पूर्वोक्त आचरण किया तिनमें धर्मसीने आठकोटी पच्चख्खाणका पथ चलाया, जो गुजरात देश प्रात काठियावाडम प्रसिद्ध है

लवजीके चेले कहानजीके पास एक धर्मदास नामका छींपा दीक्षा लेनेको आया, परतु कहानजीका आचार उसने भ्रष्ट जाना, इस वास्ते वह भी मुहको पटी बाधके,स्वयमेवही साधु बनगया इन सबका रहनेका मकान ढूढा अर्थात् फूटा हुआथा, इस वास्ते लोकोंने ढूढक नाम दिया केई ढूढक लोक कहतेहैं कि–

ढूढत ढूढत ढूढ फिरे सब वेद पुरान कुरानमें जोई ॥
ज्यु दधिसेती मख्खण ढूढत त्यु हम ढूढियाका मत होई ॥

परतु यह बात लोकोंको भरमानेके वास्ते खडी की है, क्योंकि इन ढूढकोंकी पटावलीयोंमें पूर्वोक्त लेख है नहा अस्तु तुष्यतु दुर्जना तथापि इस पूर्वोक्त ढुढकोंके कथनसे भी यही सिद्ध होता है कि यह ढूढकमत जैनशास्त्रानुसार है नहीं तथा एक यह भी आश्चर्य है कि जो जो अनिष्टाचरण ढूढकोंमे प्रचलित है सो न तो वेदमें है,न पुरानमें है, और न कुरानमें है तो इन महाशयोंने अपना माना अनिष्टाचरण किस पातालसे निकाला होवेगा ! तथा वेद पुरान कुरानके माननेवालोंने जरूर इन ढूढकोंसे पूछना चाहिये कि " महाशयों ! वेद पुरान कुरानका नाम लेके अपने मतकी सिद्धि करनी चाहते हो परतु अपना अनिष्टाचरण वेद पुरान कुरानमेंसे निकाल देवोगे ? "कदापि न निकलेगा धर्मदास छींपेका चेला धन्नाजी हुआ, उसका चेला भूदरजी हुआ, उसके चेले रघुनाथ–जयमल्लजी–गुमानजी हुये, इनका परिवार प्राय मारवाडदेशमें है रघुनाथके चेले भीषमने तेरापथी मुहबधेका पथ चलाया

लवजीका चेला सोमजी, तिसका चेला हरिदास, उसका चेला वृदावन, उसका भवानीदास, उसका मलूकचद उसका महासिंह उसका खुशालराय उसका छजमल उसका रामलाल उसका चेला अमरसिंह, इनके परिवारके साधु प्राय पजाब देशमें है

"काशीराम" नामक एक ढूंढक श्रावकके पास "श्रीआत्मारामजी" ने "उत्तराध्ययन" सूत्रके कितनेक अध्ययनोंका पठन किया और दीक्षा लिये बाद पंदरह दिनोंमेंही व्याख्यान करने लग गये कितनेही दिनोंबाद गुरुके साथ विचरते हुये "सरसा–राणीया" गाममें गये और संवत् १९११ का चौमासा वहांही किया, वहां मालेरकोटला निवासी 'सरायतीमल्ल' नामक बनिया, दीक्षा लेकर श्रीआत्मारामजीका गुरुभाई बना, जो कि इस वखत मुलक गुजरात, जिल्ला काठीयावाडमें प्राय विचरते हैं जिनका नाम ढूंढकमत परित्याग करके संवेगीपणा अंगीकार किया, तब सद्गुरुने "श्रीशांतिविजयजी" दिया है, इन महात्माने कितनेही वर्ष हुए षष्ठ षष्ठ (बेले बेले-दो उपवास) पारणा करना शुरू किया है, जो अबतक वृद्धावस्था है, तो भी कियेही जाते हैं. (छबी देखो) राणीयामें श्रीआत्मारामजीने वृद्ध पोसालीय तपगच्छके "रूपऋषिजी" के पास "उत्तराध्ययन" सूत्र पठन किया वहांसे यमुना नदीपार 'रुडमल्ल' साधुकेपास पढनेके लिये गये, और उनके पास "उववाई" सूत्र पढा, वहांसे दिल्ली होके "सरगथल" गाममें गये, और संवत् १९१२ का चौमासा किया, वहां "श्रीआत्मारामजी" के दादा गुरु "गंगारामजी" काल धर्मको प्राप्त हुये चौमासेबाद गुरु और गुरुभाईके साथ विचरते हुये "जयपुरमें गये, वहां "अमीचंद" नाम ढूंढक, जो कि उस वखत ढूंढकोंमें श्रुतकेवली कहाता था, तिसकेपास "श्रीआत्मारामजी" ने "आचारांग" सूत्र पढना प्रारंभ किया, जयपुरके ढूंढकलोकोंने श्री आत्मारामजीको कहा कि "तुम व्याकरण मत पढना, यदि पढोगे तो तुमारी बुद्धि बिगड जायगी" (अब भी ढूंढक मतवालेका यह प्रथम प्राय मंतव्य है) सत्य है—

दोहा—रत्न परीक्षक जानीये, झ्होरी नांहिं चमार।
पंडित तत्त्व पिछानीये, नांहिं जट्ट गमार॥

श्रीआत्मारामजीको पूर्वोक्त शिक्षा देनेवाले ऐसे मिले कि, जिनोंने विद्या कल्पवृक्षकी जड काटडाली! विद्यालाभरूप अमृत मेघवर्षण समान जो अवस्था थी उसमें आगकी वर्षा भई!! क्योंकि उस समय "श्रीआत्मारामजी" की ऐसी शक्ति थी कि, जिससे निरंतर तीनसौं श्लोक कंठाग्र कर सकते थे, परंतु यह उत्तम समय, पूर्वोक्त आभास हितकारीयोंके उपदेशसे निष्फल गया अफशोस!! ऐसे हितकारीयोंसे तो पंडित शत्रुही श्रेष्ठ है

यत ॥ पंडितोपि वरं शत्रु, र्न मूर्खो हितकारक ॥
वानरेण हतो राजा, विप्र चौरेण रक्षित ॥ १ ॥

पंडित शत्रु तो श्रेय है, परंतु हितकारी मूर्ख अच्छा नहीं है, वानरने राजाको मारा, और ब्राह्मण चौरने उसको बचा लिया *

* भावार्थ इसका यह है कि–किसी एक नगरमें कीसी राजाके पास कोइ मदारी वानर नचाने लगा उस वानरकी चपलता देखके राजा खुश होकर मदारीसे कहने लगा, "जो तेरी मरजीमें आवे, सो तू मेरेपास माग ले, परंतु यह वानर तू मुझे दे दे" मदारीने बहुत ना कही, परंतु राजहठ जोरावर है राजाके पास किसीका जोर नहीं चलताहै लाचार होकर मदारीने वानर दे दिया राजाने उस वानरको अपना पेहेरेगीर बनाया, और हाथमें तलवार देके, उसको अपने पल्यंक(पलंग)के पायेके साथ बांध दिया एकदिन ऐसा हुआ कि राजा सोताहै, वानर पहरा देताहै, इतनेमें एक सर्प राजाके पल्यंकपर छतके साथ जाता है, उसकी छाया राजाके शरीर पर पडी, उस छायाको देखके मूर्खशि

श्री आत्मारामजी जयपुरसे अजमेर गये वहा "लक्ष्मणजी" "देवकरणजी" और "जितमल्लजी" वगेरह ढूढक साधुओंके पास कितनेक शास्त्र पढे वहासे फिर अमीचदके पास पढनेके लिये "जयपुरमें" आये ओर सवत् १९१३ का चौमासा वहाही किया वहासें विहार करके "नागोर" (मारवाड) शहेरमें गये, और "हसराज" नामा श्रावकके पास "अनुयोगद्वार" शास्त्र पढे वहासें "जोधपुर" जाके "वैद्यनाथ" पटवा ओसवालके पास विद्याध्ययन किया "वैद्यनाथ" व्याकरण पढना अच्छा मानतेथे, और भाष्यकार टीकाकार आदिकोंके कथनको बहुत प्रमाणिक, और सत्य गिनतेथे इस वास्ते उन्होंने "श्रीआत्मारामजी" को कहा कि "आप व्याकरणादि पढनेके पीछे, शास्त्रोंकी भाष्य टीका वगेरह पढो तो आपकी बुद्धि सफल होवे" परतु पूर्वोक्त असत्योपदेशके अजीर्णसें, और स्वोपार्जित ज्ञानावरण कर्मके प्रबलसें, "श्रीआत्मारामजी" को "वैद्यनाथ" के वचनामृतकी रुचि हुई नहीं वहासें विहार करके शहर "पाली" (मारवाड) वगेरहमें होके "नागोर" गये, और सवत् १९१४ का चौमासा वहा किया इस चौमासेमें श्रीआत्मारामजीने ढूंढकोंके श्रीपूज्य "कचोरीमल्ल" के पास, और "नन्दराम" "फकीरचदजी" वगेरह साधुओंके पास "सूयगडाग" "प्रश्नव्याकरण" "पन्नवणा" "जीवाभिगम" आदि शास्त्रोंका अभ्यास किया उस समय फकीरचदजीके पास "हर्षचद" नामा एक शिष्य "सिद्धहैम कौमुदी" (चद्रप्रभा नामका जैन व्याकरण) पढताथा जिससें फकीरचदजीने श्रीआत्मारामजीको कहा कि, "तुमारी बुद्धि बहुत निर्मल है, इस वास्ते तुम मेरे पास चन्द्रप्रभा पढो, तुमको जलदी आजावेगी" परतु उस वखत श्रीआत्मारामजीको पूर्वोक्त कर्म रोगसें, फकीरचदजीका पूर्वोक्त वचनामृत भी रुचा नहीं चौमासे बाद श्री आत्मारामजीने विहार करके "मेडता" "अजमेर" "किसनगढ" "सरवाड" वगेरह शहरोंमें थोडा थोडा काल व्यतीत किया, जिनमें "उत्तराध्ययन" "दशवेकालिक" "सूयगडाग" "अनुयोगद्वार" "नदी" ढूढकोंका "कल्पित आवश्यक" और "बृहत्कल्प" वगेरह शास्त्र कठाग्र किये. अनुमान दश हजार श्लोक श्रीआत्मारामजीने कठाग्र किये सवत् १९१५ का चौमासा

रोमणि वानर, तलवार लेके मणर्का आतिस राजाके शरीर पर घाव करने लगा उस अवसरमें उसी नगरका रहनेवाला कोइक विद्वान्, जन्मका दरिद्री, अन्य व्यवहाराभावसें अपनी स्त्रीकी प्रेरणासे चौरी करनेके वास्ते गया वह प्रथम किसी वेश्याके घरमें गया वहा देखता है कि, वेश्या किसी कुष्ठीके साथ विषय सेवन कर रही है देखके विचार करने लगा कि, "हा! जिस पैसे वास्ते ऐसे कोढीके साथ भी यह रमण होती है! इस वास्ते इसका पैसा मुझको लेने योग्य नही है"—पीछे वहासें निकलके एक लक्षाधीशके वहा गया वहा देखता है कि, पितापुत्र हिसाब मिला रहे हैं, परतु हिसाब बहुत मेहनत करनेसें भी नहि मिला अनुमान आठ आनेका फरक रहा तब पिताने पुत्रको ऐसा मारा, कि पुत्र मूर्छित होगया, देखके पडितने विचार किया कि जो आठ आने पीछे अपने एकके एक सुकुमार पुत्रके ऊपर ऐसा जुल्म गुजारता है, यदि मैं इसका धन चुरा कर ले जाऊगा तो, जरुर यह छाती फटकर मर जायगा इसवास्ते ऐसे कृपणका धन भी लेना मुझको उचित नही है इत्यादि विचारकर फिरता२ राजाके महेलपर जा चढा वहा पूर्वोक्त कार्य करते वानरको देखके, एकदम पडितने वानरके दोनों हाथ खूब जोरसें पकड लिये तब वानरने किलकिलीयारी करके शोर मचाया जिससें राजाकी निंद खुल गइ राजाने पडितको पूछा, "तू कौन है? ओर किसवास्ते इसको तूने पकडा है"? पडितने ऊपर जाते हुए सबको दिखाके, अपना सारा वृत्तात सत्य सत्य सुनादिया राजाने खुश होकर पडितकी आजीविका कर दी और वानरको निकलवा दिया यहा यद्यपि पडित चौरी करनेको आया था, और राजाका शत्रुभूत हुआ था, तो भी विद्वान् होनेसे नफा नुकसान विचार लिया इसवास्ते हित करनेवाले मूर्खसें, शत्रु पडित ही अच्छा है कि, जो अवसर तो विचार लेता है।

" जयपुर " में किया चौमासे बाद "बक्षीराम" साधुके साथ " माधोपुर " " रणथभोर " होके, "बुंदी" "कोटा" शहेरमें गये वहा ढुढक साधुओंमें श्रेष्ठ "मगनजी स्वामी" थे, तिनको मिलनेकी श्रीआत्मारामजीकी उत्कंठा हुई परन्तु उस समय मगनजी स्वामी भानपुरमें थे इस वास्ते श्रीआत्मारामजी भी भानपुर जाके तिनको मिले वहां दोनोंही आपसमें चर्चा वार्ता होनेसें अत्यानन्दको प्राप्त हुए श्रीआत्मारामजी भानपुरसें विहार करके "सीतामउ" "उजावरा" होके "सलाना" गाममें अपने गुरुको मिलके, "रतलाम" गये तहा ढुढकमतका जानकार "सूर्यमल" कोठारी था, जो जैनमतके ११ शास्त्र सच्चे हैं और शेष यतियोंकी कल्पनासें बने हुवे हे, ऐसा मानताथा तिसको श्रीआत्मारामजीने हेतुयुक्ति देकर निरुत्तर किया, बाद तहासें चलके " सोचरोद " " वेदावर " " वडनगर " " इंदोर " और " धारानगरीमें " होके " रतलाम " फिर आये और सवत् १९१६ का चौमासा वहा किया मगनजी स्वामीने भी तहांही चौमासा किया जिससें श्रीआत्मारामजीकी उनके पास विद्याभ्यास करनेकी उत्कंठा, आनायासही सफल हुई श्रीआत्मारामजीने उनके पाससें ढुढकमतकी जितनी पुजीथी–ढुढक मतवाले ३२ शास्त्र मानतेहैं–सर्व लेली अर्थात् ३२ ही शास्त्र पढ लिये और कितनेक कंठाग्र भी कर लिये

अब श्रीआत्मारामजीके मनमें पूर्वोक्त कर्मरोगके प्राय जीर्ण होनेसें ऐसी आशंका होने लगी कि, मैंने ढुढकमतके सर्व शास्त्र देखे और इस मतके प्राय सर्व प्रसिद्ध पडितोंको मैं मिला, तिन सर्वका कहना एक दूसरेसें विरुद्ध है किसी एक बाबतमें कोई कीसी तरहका अर्थ करताहे, और दूसरा दूसरी तरहका अर्थ करताहे, और जहा कोई अर्थ ठीक ठीक भान नही होताह तो चार पाच जने एकत्र होकर सलाह करके मन कल्पितअर्थ कर लेतेहैं, जिसको पचायती अर्थ कहतेहैं पजाब देशके ढुढकोमें प्राय पचायतीही अर्थ चलताहे तो अब मुजे कौनसा मत सत्य मानना, और कौनसा असत्य मानना चाहिये ? और कितनेक लोक ४५ आगम मानतेहें, कितनेक ३२, कितनेक ३१, और कितनेक ११ शास्त्र मानतेहैं तो इनमें सच्चे कौन और झूठे कौन ? मुजे कितने शास्त्र सच्चे मानने चाहिये ? क्योंकि " बुंदीकोटा " वाले ढुढक शास्त्रोंके अर्थ, अपने मुखसें मनोघटित करतेहैं मारवाडी ढुढक भाषारूप जो टबार्थ लिखाहे उसमेंसें अपने मतके अनुयायी, अर्थको मानतेहें, और शेष छोड देतेहें, या तिस पाठ पर हडताल लगाके ऊपर अपनी मति कल्पनाका अर्थ लिख देतेहैं, तथा " तपगच्छ " " खरतरगच्छ " वाले कहतेहैं, कि ढुढक लोग शास्त्रोंका यथार्थ अर्थ नही जानतेहैं इत्यादि अनेक सकल्प विकल्प करके अतमें श्रीआत्मारामजीने यह निश्चय किया कि, सस्कृत प्राकृत व्याकरण पढनेके पीछे शास्त्रोंके यथार्थ जो अर्थ होते होवेंगे, वे, मैं मानुगा इस वख्त श्रीआत्मारामजीको वैद्यनाथ पटवेका और फकीरचदजीका कहना सत्य सत्य भान हुआ *

दोहा—तबलग धोवन दूध है, जबलग मिले न दूध ॥
तबलो तत्त्व अतत्त्व है, जबलो शुद्ध न बुद्ध ॥ १ ॥

* जैनमतके शास्त्रोंसें भी सिद्ध होताहे कि, व्याकरण अवश्यमेव पढना चाहिये क्योंकि, श्री प्रश्नव्याकरण सूत्रमें लिखा है कि—नाम, आख्यात, निपात, उपसर्ग, तद्धित, समास, सधिपद, हेतु, यौगिक, उणादि क्रियाविधान, धातु, स्वर, विभक्ति, वर्ण, इनों करके युक्त—तथा जनपद सत्य, सम्मत सत्य, स्थापना सत्य,

इस तरह महाराजजीश्रीने देखा कि जैन शास्त्रोंसें सिद्ध होता है कि, विना व्याकरणके पढे ठीक ठीक यथार्थ अर्थ नही भान होसक्ता इस वास्ते मै जरुर अब व्याकरण पढुगा. हाय-अफशोस! कैसे कुगुरोंके वश होकर अपनी अमूल्य वियाप्राप्त्यवस्था निष्फल करी!

पूर्वोक्त कारणोंसें, तथा वहुत देशोंमें फिरनेसें, वहुत जैनमंदिर तथा वडे वडे पुस्तकोंके भडार देखनेसें, श्रीआत्मारामजीके मनमें यह निश्चय हुआ कि "जैनमत" तो कोई अन्यही वस्तु है, और यह ढुढकमत अन्यही वस्तु है"

जैनमतके शास्त्रोंसें ढुढकमतके विपरीत अनिष्टाचरण देखनेसें,श्रीआत्मारामजीके मनसें ढुढकमतकी आस्था कम होगई और गुजरातदेशमें जाके पडित साधुओंके साथ वातचित करके निर्णय करनेका इरादा श्रीआत्मारामजीने किया तथा जैनमतके प्रसिद्ध तीर्थ "शत्रुजय" "उज्जयत" (गिरनार) आदिकी वहुत प्रशसा तिनके सुननेमें आई, जिससें उनको देखनेकी उत्कठा भी श्रीआत्मारामजीको हुई इस वास्ते श्री आत्मारामजीने "गुजरात" देशमें जानेकी इच्छा की परतु जीवणरामजीने गुजरातदेशमें जानेके वास्ते कितनेक प्रकारकी दहशत दिखाई, और आज्ञा नही दी, जीससें श्रीआत्मारामजी चौंमासे बाद "जावरा" "मदसोर" "नीमच" "जावद" वगैरह शहेरोंमें होके "चितोड" गये तहा पुराने किल्लेमें जाके बहुत उज्जडे हुए येह, (खडेर) जैनमदिर, फतेहके महेल, कीर्त्तिस्तभ, जलके कुड, कीर्त्तिधर सुकोशल मुनिकी तप करनेकी गुफा पद्मिनी राणीकी सुरग,सूर्यकुड वगैरह प्राचीन वस्तुयें देखके ससारकी अनित्यता और तुच्छता इद्रजालकी तरह क्षणमात्रका तमासा याद आया!

इत्यादि श्रीठाणाग सूत्रोक्त दश प्रकारका त्रिकाल विषयक सत्य—तथा प्राकृत, सस्कृत, मागधी, पैशाची, सौरसेनी, अपभ्रंश, ए षट् भाषा गद्य-पद्य रूपकरके बार प्रकारकी भाषा तथा—

'वयण तिय ३ लिंग तिय ३ कालतिय ३ तह परोक्ख १० पच्चक्ख ११
उवणीयाइ चउक्क १५ अज्झत्थचेव १६ सोलसम"

ए सोल्ह प्रकारके वचनको जाननेवालेको अर्हदनुज्ञात बुद्धिद्वारा पर्यालोचन करके साधुको अवसरमें बोल्ना चाहिये, नान्यथा तथा श्रीअनुयोगद्वार सूत्रमें सक्कया पागयाचेव इत्यादि सस्कृत, और प्राकृत दो प्रकारकी भाषा स्वरमडलमें ग्रहण करके बोलनेवाले साधुको भाषा प्रसस्य है तथा पूर्वोक्त शास्त्रमेंही प्रमाणाधिकारमें भावप्रमाण चार प्रकारका है—सामासिक (१) तद्धितज (२) धातुज (३) निरुक्तिज (४) सामासिकके सात भेद हैं द्वद (१) बहुव्रीहि (२) कर्मधारय (३) द्विगु (४) तत्पुरुष (५) अव्ययीभाव (६) और एकशेष (७) तद्धितजके आठ भेद हैं, कर्म (१) शिल्प (२) श्लाघा (३) सयोग (४) समीप (५) ग्रथरचना (६) ऐश्वर्यता (७) और अपत्य (८) धातुज—भू सत्तायां परस्मै भाषा—एध वृद्धौ—स्पर्द्ध सहष—निरुक्तिज—मह्यां शेते महिष। भ्रमति रौति च भ्रमर मुहुर्मुहुर्लसतीति मुसल इत्यादि—और भी श्रीठाणागसूत्र—दशाश्रुत स्कधसूत्र वगैरहसें भी व्याकरणका पढना सिद्ध होता है

* प्राय इनका आचरण, जैनमतके शास्त्रोंसें विपरीत है जैनशास्त्रोंमें ठिकाने ठिकाने जिनप्रतिमाका पाठ आता है, तिनका ढुढकलोक निषेध करते हैं, और जिन प्रतिमाकी शास्त्रोक्त रीतिसें पूजन करनेवालेको हिंसाधर्मी कहते हैं तपगच्छ, खरतरगच्छ आदिके साधु मुहपत्ति हाथमें रखते हैं, और ढुढक साधु रातदिन मुख बधी रखते हैं, जो कि जैनमतके शास्त्रसें विरुद्ध है तपगच्छादिके साधु दडा रखते हैं, ढुढक रखते नही हैं, और शास्त्रोंमें दडेका वर्णन आता है कितनेक ढुढकमतके श्रावक, कितनेही महीनोंतकका स्नान करनेका नियम करतेहैं, इतनाही नहीं, परतु कितनेक जगल (दिशा) फिरके हाथ, पाणीमें धोनेका भी नियम करते हैं जिस नियमका नाम "अणकी व्रत" बहुत ढुढकोंमें प्रसिद्ध है तथा इसनीतिका नाम "नयापाणी" धर रखा है, इत्यादि

चितोडसें " उदयपुर " " नाथद्वारा " " काकरोली " " गगापुर " " भीलाडा " " सरवॉड " " जयपुर " " भरतपुर " " मथुरा " " विंद्रावन " होके " कोशी " के रस्ते ' दिल्ली ' शहरमें गये वहा चौमासा करनेकी श्रीआत्मारामजीकी इच्छा थी, परतु जीवणरामजीके कहनेसें सवत् १९१७ का चौमासा, श्रीआत्मारामजीने " सरगथल " गाममें किया चौमासे बाद विहार करके दिल्ली गये दिल्लीसें जमनापार " खट्टा " ' लुहारा " " बिनौली " "वडौत " " सुनपत वगैरह स्थानोंमें फिरके सवत् १९१८ का चौमासा, दिल्लीमें जा किया तिस चौमासेमें " पजाबी ढुढकोंके पूज्य " " अमरसिंहजी ' के चेले मुस्ताकराय और हीरालालको आठ शास्त्र श्रीआत्मारामजीने पढाये चौमासे बाद सुनपत पानीपत होके श्रीआत्मारामजी " करनाल " गाममें आये वहा अमरसिंहजीके चेले " रामबक्ष " " सुखदेव " " विश्नचद " " चपालाल " वगैरह मिले तब श्रीआत्मारामजीने रामबक्ष, और विश्नचदको अनुयोगद्वारसूत्र पढाया वहासें विहार करके श्रीआत्मारामजी "अबाला ' शहरमें आये और रामबक्षादि भी बडसडके रस्ते होकर अबाला शहरमें आये वहासें विहार करके श्रीआत्मारामजी"खरड " "रोपड" होके"माछीवाडा" गाममें गये यहातक तो रामबक्ष वगैरह साधु, श्रीआत्मारामजीके साथही रहे, और पढते भी रहे जिसमें इतने समयमें श्रीआत्मारामजीने पूर्वोक्त रामबक्ष और विश्नचदको आचाराग, जीवाभिगम, नदीसूत्र, वगैरह शास्त्र पढाये

रोपड गाममें श्रीआत्मारामजीने पडित 'सदानदजी"सें" सारस्वत " व्याकरण पढना शुरू किया, और थोडेही समयमें अपनी अपूर्व बुद्धिसें पट्लिंगतकका अभ्यास कर लिया माछीवाडेसें विहार करके श्रीआत्मारामजी मालेर कोटलामें जाके अपने गुरु जीवणरामजीसें मिले वहासें जीवणरामजी तो"रणीया ' गाममें जा चौमासा रहे, और श्रीआत्मारामजी ' सुनाम ' गये, जहा श्रीआत्मारामजीका एक चेला हुआ सुनामसें"समाणा""पटीयाला " "नाभा' 'मालेर कोटला ' " रायका कोट " और "जीगरावह ' वगैरह होके श्रीआत्मारामजी " जीरा " गाममें गये, और सवत् १९१९ का चौमासा जीरामें किया.

रामबक्ष वगैरह साधु, देश"मारवाड' के तरफ विहार कर गये क्योंकि, इनके गुरु अमरसिंहजी मारवाडको गये हुयेथे इतने दिनोंतक केवल पढनेके वास्तेही श्रीआत्मारामजीके पास रहेथे परतु चलते समय रामबक्षने श्रीआत्मारामजीसें आधीनताके साथ प्रार्थना की कि, "आप इस मुल्क पजाबमें आगयेहैं, और मेरे गुरु मारवाडको चलेगयेहैं, इस वास्ते आपने इस पजाबदेशसें जोर लगाकर"अजीवमतकी"* जड काटते रहेना, इससें मेरे गुरु अमरसिंहजीको परम आनद होगा और आपका वडा उपकार होगा " सवत् १९१९ के चौमासेमें जीराही गाममें श्रीआत्मारामजीको व्याकरणके बोधसें ज्यादाही शक पैदा हुआ कि "जो अर्थ ढुढक लोग शास्त्रोंका करतेहै, वह व्याकरणकी रीतिसें ठीक मालुम नही होताहै, इसका निश्चय करना चाहिये क्योंकि मैंने थोडाही व्याकरण अबतक पढाहै, तो भी मुजे कितनेही ठीक अर्थ मालुम होने लगेहैं तो, यदि जिसको पूरा पूरा व्याकरणका बोध होवे, उसका तो क्याही कहना है? इससें यही सिद्ध होताहै कि,

* पजाब देशके ढुढकोंमें दो फिरके (मत) है, एकतो अनाजमें जीव मानते हैं और, एक नही मानते हैं जो नही मानते है उनको अजीवमती कहते हैं

ढुढक लोग इसही डरके मारे व्याकरण पढने नही देतेहैं और यह भी सिद्ध होताहै कि इनके सब अर्थ प्राय' मन॰ कल्पित है, और जानवुझके अज्ञान रूप अंधे कूपमें गिरते हैं ।' यह समझके श्रीआत्मारामजीने निश्चय किया कि, जो कुच्छ पूर्वाचार्योंने निर्युक्ति, भाष्य, चूर्णि, टीका वगैरह द्वारा अर्थ कियेहैं, वेही अर्थ यथार्थ हैं, और जो कोइ मन'कल्पित अर्थ शास्त्रोंके करतेहैं, वो वडाही अनर्थ करतेहैं

चौमासे वाद श्रीआत्मारामजी जीरासें विहार करके "मनोहरदास"के टोलेके ढुढक साधुओंमें वृद्ध पडित साधु "रत्नचदजीके" पास वियाभ्यास करनेके वास्ते"आग्रा' शहरमें गये,और सवत् १९२० का चौमासा वहाही किया रत्नचदजीने वडी खुशीसें श्रीआत्मारामजीको "स्थानाग " "समवायाग ।' "भगवती " ' पन्नवणा ।' " वृहत्कल्प "'" व्यवहार ।' " निशीथ " "दशाश्रुत स्कध " "सग्रहणी " "क्षेत्रसमास ।' " सिद्ध पचाशिका " " सिद्धपाहुड " " निगोद छत्रीसी " "पुद्गल छत्रीसी " " लोकनाडीद्वात्रिंशिका ' " षट्कर्म ग्रथ ' चार जातके " नयचक्र, ' इत्यादि कितनेही शास्त्र पढाये, जिनमें कितनेक प्रथम श्रीआत्मारामजी पढे हुएथे, तो भी अर्थ निश्चय करनेके वास्ते फिरसें पढे श्रीआत्मारामजीको विभक्तिज्ञान होनेसें जे अर्थ मालुम होतेथे, वे अर्थ ढुढकोंके पढाये अर्थके साथ नही मिलतेथे, जिससें श्रीआत्मारामजीको निश्चय होगया कि पूर्वाचार्योंके किये हुये अर्थही सत्य हैं, तथापि परीक्षा करने लगे तो पूर्ण करनी चाहिये रत्नचदजीके पढाये अर्थ प्राय. अन्य ढुढकोंसे विपरीत, और टीका वगैरहके साथ मिलते हुये श्रीआत्मारामजीको भान हुए, इस वास्ते अधिक आनदसें उनके पास पढे इस चौमासेमें श्रीआत्माराजीने रत्नचदजीके पाससें कितनाक अपूर्व ज्ञान भी प्राप्त किया रत्नचदजीके पास चिरकालतक श्रीआत्मारामजीकी पढनेकी मरजीथी परतु जीवणरामजीके बुलानेसें चौमासे वाद विहार करनेकी तैयारी करके श्रीआत्मारामजी रत्नचदजीके पास आना लेनेके वास्ते गये तब रत्नचदजी नाराज होके कहने लगे कि " तुमारा वियोग मैं चाहता नहीं हु परतु क्या करू? तुमारे गुरूका हुकम आयाहै, सो हुकमको भी मान्य करनाही चाहिये, परतु अतकी मेरी शिक्षा तुम अगिकार करो मैंने सुनाहै कि,आत्माराम श्री जिन प्रतिमाकी बहुत निंदा करताहै, परतु यह काम करना तुजको अच्छा नही है हमारे कहनेसें इस तरह अमल करना एक तो श्री जिन प्रतिमाकी कबी भी निंदा नहीं करनी (१) दूसरा पेशाब करके विना धोया हाथ कबी भी शास्त्रको नहीं लगाना (२) और तीसरा अपने पास सदा दडा रखना (३) मैंने यह तुजको श्री जैनमतका असल सार बताया है कितनेक दिनों वाद जब तू व्याकरण पढेगा, और शास्त्रका यथार्थ वोध होगा, सब कुच्छ तुजको मालुम हो जायगा आगे भी इसी तरह ज्ञानाभ्यास करनेमें निरतर उद्यम रखना और व्याकरण जरूर पढना " तब श्री आत्मारामजीने कहा कि, " महाराजजी ! एक बात और भी बतावें कि, मुखपर कानोंमें डोरा डालकर मुहपत्तीका बाधना सूत्रानुसार है कि नही ? " श्रीरत्नचदजीने जवाब दिया कि, " सूत्रानुसार तो नही क्योंकि, शास्त्रानुसार तो मुहपत्ती हाथमें रखनी कही है परतु अनुमान (१५०) देढसें वर्षसें हमारे बडोंने मुखपर मुहपत्ती बाधी है,और तेरे बडोंने अनुमान दोसौं(२००) वर्षसें वाधनी सुरू की है यह ढुढकमत अनुमान सवादोसौं (२२५) वर्षसें विना गुरु अपने

आप मन कल्पित वेष धारण करके निकाला गयाहै "श्रीआत्मारामजीको तो,प्रथमसेंही कितनीक बातोंका शक था अबतो सर्वथा निश्चय होगया कि,निश्चयही यह ढुंढकमत बनावटी है और सनातन जैनधर्मसें उलटा है और भगवतीजी, अनुयोगद्वार,समवायाग, नयचक्र वगैरह शास्त्रोंमें " आवश्यक" " विशेषावश्यक " की साक्षी दी है और लिखा भी है कि,आवश्यकका इतना मूलपाठ है, इतनी निर्युक्ति है, इतना भाष्य है, इतनी चूर्णि है, इतनी टीका है और ढुंढकके माने आवश्यकमें कितनीक बातें जे शास्त्रोंमें है, वे नही है, और ढुंढक आवश्यक गुजराती भाषामें है, और दूसरे शास्त्र प्राकृतमें है इसवास्ते आवश्यक सूत्र भी प्राकृत भाषामें होना चाहिये इसतरह श्री आत्मारामजीकी ढुंढकमतसें अनास्था होनी शरू हुई तोभी अधिकतर निश्चय करनेके वास्ते श्रीआत्मारामजीने बहुत शास्त्रोंकी पुनरावृत्ति की तथापि अतमें ऊटके मेंगणेकी तरह ढुंढकमतकी पोल निकली इसवास्ते श्रीआत्मारामजीने निश्चय किया कि, " मैं अपनी शक्तिके अनुसार भव्य जीवोंके आगे सत्य सत्य बात प्रगट करूंगा, जिसको रुचेगा, वो ग्रहण कर लेवेगा " ऐसा निश्चय करके श्रीआत्मारामजी आग्रेसें विहार करके दिल्ली आये, वहा श्री विश्नचदजी मिले और श्रीआत्मारामजीसें शास्त्र पढने लगे और साथही साथ विहार करते हुए मालेर कोटलामें आये एक दिन श्रीविश्नचदजी, पेशाब करके हाथ विनाही धोये शास्त्र पढने लगगये इससें श्रीआत्मारामजीने गुस्से होकर विश्नचदजीको कहा कि, " खबरदार ! आज पिछे कबी भी ऐसा काम नही करना अर्थात् विना धोये हाथ पेशाब करके शास्त्रको नही लगाना " प्रत्यक्षमें तो श्रीविश्नचदजी, पूर्वोक्त श्रीआत्मारामजीका कहना मजूर करके मौन होरहे, परतु दिलमें विचार करने लगे कि, "रत्नचदजीकी सगतसें इनकी श्रद्धामें फरक पडगया है, इसी वास्ते यह ऐसे कहते हैं क्योंकि, मेरे गुरु रामबक्षजी, और उनके गुरु अमरसिंहजी पूज्यजी महाराज वगैरह सब ढुंढक साधु, पेशाबसें शुद्धि करना, आहारके पात्रोंमें लेकर वस्त्रादि धोना आदि करते हैं परतु मुजे तो इनके पास पढ़ना है इसवास्ते कितनेक दिन जिस तरह यह कहते है, इसी तरह करना चाहिये " कोटलामें श्रीआत्मारामजीने, पडित " अनतरामजी" सें शेष व्याकरण पढना शुरू किया,और एक महीनेके बाद विहार करके रायका कोट होकर जगरावा गाममें आये वहा " चोथमल्ल " के पत्रसें अपने उपकारी विद्यागुरु, श्रीरत्नचदजीका सवत् १९२१ का जेठ मासमें स्वर्गवास होना सुनकर, बहुत अफसोस किया अतमें अपने ज्ञानबलसें अफसोस दूर करके, श्रीआत्मारामजी जगरावासें विहार करके शहर"लुधीआना"में आये वहा श्रावक " सेढमल्ल " " गोपीमल्ल " वगैरहसें अजीवमतकी श्रद्धा छुडवाई और मासकल्पके बाद लुधीआनासें विहार करके कोटलामें गये और सवत् १९२१ का चौमासा वहा किया इस चौमासेमें श्रीआत्मारामजीने चद्रिका, कोष,काव्य, अलकार, तर्कशास्त्र वगैरहका अभ्यास किया, तथा श्री " विश्नचदजी"को भी,शास्त्रानुसार चर्चा करके यथार्थ सत्य मार्गका बोध कराया

चौमासे बाद श्रीआत्मारामजी, लुधीयाना होके " देशु " नामा गाममें गये वहा एक यतिके पुस्तकोंमेंसें " श्रीशिलाकाचार्य विरचित श्रीआचाराग सूत्र वृत्ति (टीका) की प्रति श्रीआत्मारामजीको मिली इस प्रतिके मिलनेसें श्रीआत्मरामजीको ऐसा आनद प्राप्त हुआ कि, जैसें मरु देशमें प्यासेको अमृत मिलनेसें शाति होवे ! तहासें विहार करके राणीया,रोडी, होकर "सरसा "

गाममें गये, ओर सवत् १९२० का चोमासा वहा किया वहा "किशोरचदजी" यतिके पास श्री-आत्मारामजीने दो तीन ज्योतिषके ग्रथ पढे तथा वडगच्छके यति " राममुख " और खरतर गच्छके यति "मोतीचद "के पाससें साधु श्रावकके प्रतिक्रमण और तिसके विधिके पुस्तक लाकर देखें तो, मालुम हुआ कि, ढुढकमतका प्रतिक्रमण और तिसका विधि, यथार्थ नहीं है और भी कितनेक पुस्तक लाकर देखा, और आचाराग सूत्र वृत्तिका भी स्वाध्याय किया जिससें श्रीआत्मारामजीको अधिकतर निश्चय हुआ कि, ढुढकमत असल जैनमत नहीं है परतु जैनमतके नामसें जैनमतका आभास रूप, एक नया पथ मन कल्पित निकाला है तथापि श्रीआत्मारामजीने विचार किया कि, " इस समय कुल पजाब देशमें प्राय ढुढकमतका जोर है, और मैं अकेला शुद्ध श्रद्धान प्रकट करूगा तो, कोई भी नहीं मानेगा इस वास्ते अदर शुद्ध श्रद्धान रखके बाह्य व्यवहार ढुढकोंकाही रखके कार्यसिद्धि करनी ठीक है अवसर पर सब अच्छा होजावेगा " ऐसा निश्चय करके श्रीआत्मारामजी चौमासे बाद सरसेसें सुनाममें आये, वहा " कनीराम " रोहतक वाला ढुढक साधु मिला तिसके साथ ढुढक साधुके भेष, और पडिक्रमणेंका विधि, और ढुढकाचारकी बाबत वार्तालाप हुआ परतु कनीरामने कुच्छ भी शास्त्रानुसार ठीकठीक जवाब न दिया, और कहा कि,"तुमारी श्रद्धा भ्रष्ट होगई है,जो तुम अपने गुरु, दादगुरुओंके कथनमें शका करते हो ? " तब श्रीआत्मारामजीने कहा कि,"मैं कोई गुरु, दादगुरुओंका बधा हुआ नहीं हु, मुझें तो श्रीमहावीर स्वामीके शासनके शास्त्रोंका मानना ठीक है यदि किसीके पिता, पितामह कूपमें गिर होवे तो, क्या उसके पुत्रको भी कूपमेंही गिरना चाहिये? " तब कनीराम क्रोध करके चला गया और श्रीआत्मारामजी भी सुनामसें विहार करके मालेर कोटलामे आये, वहा लाला " कवरसेन " और " मगतराय " के आगे अपने अतरग जो सनातन जैनधर्मका श्रद्धान बैठा था, सुनाया उन्होंने भी अच्छी तरहसें समझके श्रीआत्मारामजीका कथन, जैनशास्त्रानुसार यथार्थ होनेसें अगीकार किया और श्रीआत्मारामजीकोही सद्गुरु सत्योपदेष्टा मानने लगे पजाबमें इस वखत पूर्वोक्त दोही श्रावक, प्रथम शुद्ध श्रद्धान वालोंकी गिनतीमे हुए वहासें विहार करके शहर लुधीयानामें आये वहा लाला " गोपीमल " पाटणी को शास्त्रानुसार समझायके श्रीआत्मारामजीने अपना तीसरा श्रावक बनाया यहा इस समय श्रीविश्नचदजी, और तिनके चेले चपालालजी वगैरह भी आये हुएथे चपालालजीके मनमें कितनेक सशय ढुढकमत सबधी पडे हुएथे इसवास्ते अपने गुरु विश्नचदजीको अवसर पाकर पूछतेही रहतेथे परतु श्रीविश्नचदजी अवसरके जानकार होनेसें,यद्यपि अपने अदर श्रीआत्मारामजीकी सोबतसें शुद्ध श्रद्धान हुआथा, और श्री सनातन जैनधर्मका शुद्ध स्वरूप जानते थे, तोभी खुलकर कथन करनेका अवसर अबतक न होनेसें पूरा पूरा जवाब नहीं देतेथे किंतु गोलमोल जिससें पूछने वालेको ज्यादा शका पडे, वैसे जवाब देतेथे इसवास्ते एक दिन श्रीचपालालजीने श्रीविश्नचदजीको जोर देकर कहा कि, "महाराजजी साहिब ! हमने जो घर, हाट, पुत्र, परिवार आदि छोडके साधुपणा लियाहै,और आपका शरणा अगिकार कियाहै,सो कुच्छ डूबनेके वास्ते नहीं,किंतु तिरनेके वास्ते है इसवास्ते आप हमको शुद्ध अत करणसें यथार्थ जैनमत, जो कि महावीर स्वामीके शासन पर्यंत सनातन चला आया, सो बताओ, हम आपका वडाही उपकार मानेंगे जैसे आपने उपदेश देकर हमको ससारसे बचा-

या, ऐसेंही इस सशयसें भी बचाइये आपके विना ओर किसके आगे हम अपने दिलकी बातें करें ?? तब श्रीविश्नचदजीने श्रीआत्मारामजीके पास अपने चेले चपालालजीके प्रत्यक्ष सवाल जवाब करके चपालालजीको ठीकठीक निश्चय करा दिया उस दिनसें चपालालजीने भी शुद्ध श्रद्धा धारण की बाद श्रीविश्नचदजीने तो, लुधीयानासें विहार कर दिया, और रस्तेमें गुरुके झडीआलाके श्रावक " मोहरसींघ " " वशासीमल्ल मालकोस " और अमृतसरवाले लाला " बूटेराय " ज्वहरीको प्रतिबोध किया तथा साधु " हुकमचदजी–हाकमरायजी " को भी श्रीविश्नचदजीने प्रतिबोध किया, इसतरह श्रीविश्नचदजी, और चपालालजीकी मददसें श्रीआत्मारामजीकी श्रद्धाके आदमियोंकी गिनती बढने लगी, और ढुढक श्रद्धान रूप अजीर्ण दूर होता चला अनुक्रमे श्रीविश्नचदजी वगैरह पट्टी गाममें गये वहा लाला ' घसीटामल्ल " जो पूज्य अमरसींहका मुख्य श्रावक था, तिसके साथ वातचीत हुई जिससें लाला घसीटामल्लके दिलमें भी कितनेही शक पैदा होगये तब घसीटामल्लने पूर्वोक्त सशयको दूर करके निर्णय करनेके वास्ते, श्रीविश्नचदजीके कहनेसें अपने पुत्र " अमीचदजी " को व्याकरण पढाना शुरू कराया जब वो पढकर तैयार होगया, तब घसीटामल्लने कहा कि, " पुत्र ! किसीका भी पक्षपात न करना जो शास्त्रमें यथार्थ वर्णन होवे, सो तू मुजे सुनाना ' तब अमीचदने कहा कि, " पिताजी ! जो कुच्छ, श्रीमहाराज आत्मारामजी, तथा विश्नचदजी वगैरह कहते हैं, सो सर्व ठीक ठीक हैं और पूज्य अमरसींहजी, तथा उनके पक्षके ढुढक साधुओंका जो कुच्छ कथन है, सो सर्व असत्य, और जैनमतसें विपरीत है ' यह सुनकर लाला घसीटामल्ल भी ढुढकमतको छोडके शुद्ध श्रद्धानवाले होगये पूर्वोक्त अमीचद इस समय गुजरात–मारवाड–पजाब वगैरह देशोंमें "पडित अमीचदजी " के नामसें प्रसिद्ध है, ओर प्राय श्रीआत्मारामजीके सवेगमत अगीकार किया पीछे, जितने नूतन शिष्य हुये, सर्वने थोडा बहोत जरूरही पडितजी अमीचदजीके पास विद्याभ्यास किया, बल्कि अबतक कियेही जाते हैं

पट्टीसें विहार करके श्रीविश्नचदजी, हुकमचदजी, हाकमरायजी, चपालालजी वगैरह श्रीआत्मारामजीके पास, जो लुधीयानासें विहार करके शहर "जलधर ' में आये हुये थे, पहुचे क्योंकि, वहा श्रीआत्मारामजीकी, और अजीवपथी "रामरतन और "वसतराय ' की अजीवपथ सबधी चर्चा होनेके वास्ते निश्चय होगया था इस अवसर पर २७ शहरोंके श्रावक आये हुये थे, और पादरी तथा ब्राह्मण पडितोंको मध्यस्थ नियत किया था जिसमें रामरतन और वसतराय हार गये, और श्रीआत्मारामजीकी जीत हुई तथापि रामरतन वगैरहने अपना हठ छोडा नहीं सत्य है कि, जिसका जो स्वभाव पडजावे, मरणपर्यंत भी वो स्वभाव प्राय तिसका दूर नहीं होता है

यत ॥ यो हि यस्य स्वभावोस्ति । स तस्य दुरतिक्रम ॥
श्वा यदि क्रियते राजा । किं न अत्ति उपानहम् ॥ १ ॥

भावार्थ –जो जिसका स्वभाव है, वो तिसका दूर होना मुश्किल है क्या यदि कुत्तेको राजा बनाइये, तो वो जुतीको भक्षण नहीं करता है ? अपितु करताही है

जालधरसें जयपताका लेकर विहार करके श्रीआत्मारामजी, तथा विश्नचदजी वगैरह अमृतसरमें आये और श्रीआत्मारामजीने, लाला " उत्तमचदजीकी बैठकमें उतारा किया, और

व्याख्यानमें "श्रीभगवती सूत्र" सटीक वाचना प्रारभ किया जो सुननेके वास्ते पूज्य अमरसीघजी भी, अपने सब चेलोंके साथ आया करते थे श्रोताका जमाव इतना होता रहा कि, मकानमें बैठनेकी जगा भी मिलनी मुश्किल होगई तब सबने सलाह करके व्याख्यानके वास्ते दूसरा वडा भारी मकान मजुर किया, और वहा व्याख्यान होने लगा श्रीआत्मारामजीका व्याख्यानामृत सुन करके भी, श्रोताजनोंको तृप्ति नही होतीथी, अर्थात् श्रवण करनेकी तृष्णा, बढतीही जातीथी उस समय पूज्य अमरसींघजी तो ऐसे मोहित होगये कि, एक दिन श्रीआत्मारामजीको कहने लगे कि, किसीतरह मेरे चेलोंको भी, यह ज्ञान, सिखाना चाहिये जिससें जैनमतका वडा भारी उद्योत होवे तब श्रीआत्मारामजीने कहा कि, " पूज्यजी साहिब ! व्याकरणका अभ्यास विना किये, यह ज्ञान पाना बडाही मुश्किल है, इस लिये प्रथम इनको व्याकरण पढाना चाहिये " इससें पूज्य अमरसींघजीके प्राय. सब साधु उसवखत पचसधि पढने लग गये

एक दिन श्रीआत्मारामजीने व्याख्यानमें अवसर देखकर कहा कि, "पूर्वाचार्योंके कथन करे अर्थको छोडकर मन.कल्पित अर्थ करनेवालोंका परलोकमें खबर नही क्या हाल होवेगा ?" यह सुनकर, पूज्य अमरसींघजीको गुस्सा आया, और सोदागरमल्ल ओसवाल, श्यालकोटका वासी, ढुढक श्रावकोंमें मुखी और जानकार किसी कारणसें अमृतसरमें आयाथा, तिसको कहने लगे कि, "आज काल आत्मारामको बडाही अभिमान आगया है, परतु में इसका अभिमान दूर करूगा, मेरे आगे यह क्या चीज हे ?" सत्य है अपने चित्तका माना हुआ गर्व किसको सुखदाई नही होता है ?

यत —टिट्टिभः पादमुत्क्षिप्य, शेते भंगभयाद्भुवः ॥
स्वचित्तनिर्मितो गर्वः, कस्य न स्यात् सुखप्रदः ॥ १ ॥

भावार्थः—टिट्टिभ (टटीरी) जानवर, मेरे पैर रखनेसें पृथिवीका भग न होजावे ! इस भयसे अपने पैरोंको ऊचे करके सोवे हें इसवास्ते अपने चित्तसें बनाया हुआ गर्व (अहकार) किसको सुख देनेवाला नहीं है ?

अमरसींघको पूर्वोक्त अहकारमें आये हुऐ जानके, सोदागरमल्लने समझाये कि, " पूज्यजी साहिब ! आप आत्मारामजीके साथ मत सबधी चर्चा कदापि मत करो, यदि करोगे तो, याद रखना ! तुमारे मतकी जड काटी जायगी मेंने अच्छी तरह समझ लिया है कि, इनके (आत्मारामजीके) सामने कोई भी जवाब देनेको समर्थ नहीं है " सोदागरमल्लका पूर्वोक्त कहना सुनकर, पूज्य अमरसींघजी हैरान होगये और सुनकर चूपके हो रहे, और श्रीआत्मारामजीकी बराबरी करनेमें असमर्थ होकर, खुशामत करने लग गये सत्य है "डरती हर हर करती " श्रीआत्मारामजीको एकदिन एकातमें ले जाकर ऐसे कहने लगे कि, "बेटा आत्मारामजी ! तू हमारे मतमें लाल (रत्न) पैदा हुआ है इस वास्ते तुजको ऐसा काम करना चाहिये कि, जिससें हमारा तुमारा आपसमें मतभेद न पडे " तब श्रीआत्मारामजीने कहा, " पूज्यजी साहिब ! जो पिछले आचार्योंका लेख शास्त्रोंमें चला आयाहै, मैं उससें उल्टी प्ररूपणा कदापि न करूगा और आपको भी यही उचित है कि, आप जरुर सत्यासत्यका निर्णय कर लेवें क्योंकि, यह मन-

ध्यका जन्म, वारवार मिलना मुश्किल है इस जूठे हठको छोडदे " इत्यादि अनेक प्रकारकी हित शिक्षा, श्रीआत्मारामजीने अमरसींघजीको दी. परतु अमरसिंघजीको इस हित शिक्षाने कुछ भी फायदा नही किया क्योंकि–

अज्ञः सुखमाराध्यः सुखतरमाराध्यते विशेषज्ञः ॥
ज्ञानलवदुर्विदग्धं ब्रह्मापि तं नरं न रंजयति ॥ १ ॥

भावार्थ –अनजानको समझाना सुखाला है, इससें भी जो सरस अच्छे बुरेको समझताहै, और हठी कदाग्रही नहीं है, ऐसे पंडितको समझाना अतीव सुकर (सुखाला) है परतु जो प्राणी, ज्ञानके दो अक्षर आनेसें दुर्विदग्ध होगया, (अर्थात् थोडासा पढके अपने आपको बृहस्पति तुल्य मानने लग गया, हठ कदाग्रहसें प्रीति करने लग गया) ऐसे सखसको तो ब्रह्मा भी रंजित नही कर सकताहै अर्थात् पूर्वोक्त लक्षणोंवाले पंडितायते (पंडिताभिमानी) को तो ब्रह्मा भी नहीं समझा सकताहै तो औरका तो क्याही कहना ?–गुस्सा करके अमरसिंघजी पराङ्मुख होगये तब श्रीआत्मारामजीने भी विचारा कि–

उपदेशो हि मूर्खाणां प्रकोपाय न शांतये ॥
पयःपानं भुजंगानां केवलं विषवर्द्धनम् ॥ १ ॥

भावार्थ –मूर्खोको उपदेश देना क्रोध बढानेके वास्ते है, परतु शांतिके वास्ते नहींहै, जैसे कि, सापको दूध पिलाना, केवल विषका बढानाहै इस वास्ते इनको ज्यादा कहना, नुकशान कर्त्ता है, ऐसा विचारके श्रीआत्मारामजी भी अपने स्थानपर चले गये कितनेक दिन पीछे अमरसिंघजी तो पट्टीको विहार करगये, और श्रीआत्मारामजी विश्नचंदजी आदि अमृतसरसें विहार करके जालंधर शहरमें आये और "खरायतीमल्ल" (श्रीआत्मारामजीका गुरुभाई) और "गणेशीलाल" (शिष्य) येह दो साधु, कितनेक दिन पहिलेही हुशीआरपुर चले गये थे वहा इन दोनोंका आपसमें कलह हुआ, इससें गणेशीलाल मुहपत्तीका डोरा तोडकर, श्रीआत्मारामजीको विना मालुम किये, हुशीआरपुरसें विहार करके शहर गुजरावालामें "श्रीबुद्धिविजयजी" (बूटेरायजी)* संवेगी तपगच्छके साधूके पास चला गया

* तसवीर देखो इन महात्माका जन्म, देशपंजाबमें लुधीआना शहेरके तरफ बलोलपुरसें सात आठ कोश दक्षिणके तरफ दूलुवां गाममें टेकसिंघ नामा कुटुंबीक (कुणबी–पटेल) की कर्मो नामा स्त्रीकी कूखसें विक्रम संवत १८६३ में हुआथा माताकी आज्ञा लेके विक्रम संवत् १८८८ में इनोंने संसार छोडके, मलुकचंदके टोलेके नागरमल्ल नामा ढूंढक साधुकेपास साधुपणा लियाथा परतु शास्त्रोंके देखनेसें, और देशदेशावरोंमें फिरनेसें, ठिकाने ठिकाने श्रीजिनमंदिरोंको देखनेसें, ढूंढकमत मन कल्पित मालुम होनेसें, देश गुजरात शहर अहमदावादमें आके "गणि श्री मणिविजयजी" महाराजजीके पास अनुमान विक्रम संवत् १९११–१२में तपगच्छका वासक्षेप लेके, पूर्वोक्त महात्माको गुरु धारन करके, ढुंढकमतका त्याग करा यद्यपि ढुंढकमतका श्रद्धान तो इन महात्माके मनसें विक्रम संवत् १८९३ में निकल गयाथा, परतु पूर्वोक्त संवत् तक यथार्थ गुरु नही धारण करनेसें ऐसा लिखा है इन महात्माका विशेष वर्णन जिसको देखनेकी इच्छा होवेतो, इनकी बनाई "मुहपत्ती चर्चा" नाम पोथीसें देखलेवें इन महात्माके पाच शिष्य प्राय अधिक





श्रीमन
मुक्तिविजयजी गणि
(मलचदजा)
आदि सद्गुरु



मुनिराज श्री वृद्धिचदजी
मूल नाम-कृपाराम ज्ञाति-ओसवाल
जन्म -स० १८९
दीक्षा स० १९०८
बालब्रह्मचारी
श्रीमान् बूटेरायजीके शिष्य
स्वर्गवास स० १९४९

मुनिराज श्री नीतिविजयजी
मूल सूरतके
नाम-नगीनदास
दीक्षा स० १९१०
बहुधा खभातमे रहे
श्रीमान् बूटेरायजीके शिष्य
स्वर्गवास, स० १९४७



मुनिराज श्री शांतिविजयजी
(तपस्वीजी)
मूल नाम-सरूपतिमल
ढूढक दीक्षा स १९१८
सवेगी दीक्षा स० १९२०
श्रीमान् बूटेरायजीके शिष्य
काठिआवाडमे विचरे है
स्वर्गवास स १९५९
(जैन चरित्र-पृष्ठ ४०)

मुनि श्रीमन्महोपाध्याय
श्री लक्ष्मीविजयजी
(विश्नचन्दजी)
मूल-पुष्करणा ब्राह्मण
ढूढक दीक्षा स १९१४
श्री आत्मारामजीके य
बडे और विद्वान शिष्य थे
स्वर्गवास स० १९४०
(जैन च पृष्ठ ४४ ०)



मुनि महाराज
श्री १००८
श्रीबुद्धिविजयजी
(बूटेरायजी)
जन्म-स० १८ २
ढूढक दीक्षा,
स १८८८
स्वयमेव सवेगी दीक्षा,
स १९०३
बाल ब्रह्मचारी
तपगच्छ दीक्षा
स १,११
स्वर्गवास स १९ ८



ये गणेशीलाल श्री "बूटेरायजी" सें संवेगी दीक्षा लेकर "विवेक विजय" नामसें विचरने लगा और ठिकाने ठिकाने कहने लगा कि, 'श्रीआत्मारामजीके अदर शुद्ध सनातन जैनमतका श्रद्धा होगई है, और प्रत्यक्षमें ढुढक भेष, और व्यवहार रक्खा है परतु ढुढकमतकी आस्था, बिलकुल नहीं है " इसके ऐसे अनुचित समयमें इसतरहके कथनसें, और पूर्वोक्त काररवाई अगीकार करनेसें कितनेही शहरोंके लोगोंको सनातन जैनमतकी शुद्ध श्रद्धा प्राप्त होनी बध होगई क्योंकि, बहुत अनजान लोकोंने विनाही समझे हठ कदाग्रह करके श्रीआत्मारामजी वगेरहके पास जाना आना बध करदिया *

जालधरसें विहार करके श्रीआत्मारामजी, "हुशीआरपुर" गये और सवत् १९२३ का चौमासा वहांही किया, जिस चौमासेमें "भक्त नथ्थुमल्ल बिल्लामल्ल, मानामल्ल" वगेरह बहुत लोकोंने शुद्ध सनातन जैनमतका श्रद्धान अगीकार किया और लाला "गुज्जरमल्ल" वगेरह कितनेक अतरग शुद्ध श्रद्धानवाले थे, उनका श्रद्धान परिपक्व होगया चौमासे बाद हुशीआरपुरसें विहार करके दिल्लीशहर तरफ गये, और सवत् १९२४का चौमासा, दिल्लीसें विहार करके जमना नदीके पार, "बिनौली" गाममें जा किया, जहा भी कितनेही लोकोंने सनातन जैनधर्मका श्रद्धान अगीकार किया. इस चौमासेमें श्रीआत्मारामजीने "नवतत्त्व" ग्रथ बनाना शुरु किया, चौमासे बाद विचरते विचरते "डोंगर" नाम गाममें गये, जहा एक "रणजीतमल्ल" ओसवाल जो मारवाडसें पंजाब देशको रामबक्षके साथ आयाथा, श्रीआत्मारामजीको मिला, तब श्रीआत्मारामजीने तिसको पुराणा मिलापी समझके, यथार्थ तत्त्वका स्वरूप सुनाया, क्योंकि, प्रथम भी जयपुर देहली वगेरहके चौमासेमें श्रीआत्मारामजी "रणजीतमल्ल" को कई प्रकारका ज्ञान पढाते रहेथे इस बातसें रणजीतमल्लके मनमें शक पेदा होनेसें ढुढक "चदनलालजी" साधुको, (जो जोगराजीये ढुढक रुडमल्लजीके चेले थे—"श्रीआत्मारामजी" भी जोगराजियेही कहातेथे) श्रीआत्मारामजीके पास ले आया चदनलालजीने "श्री आत्मारायजी" सें साधुके उपगरण, और प्रतिक्रमण सबधी बातचित करी, तब "श्रीआत्मारामजी" ने शास्त्रके पाठ, चदनलालजीको दिखलाया देखतेही "श्रीचदनलालजी" ने "श्रीआत्मारामजी" का कहना, सत्य सत्य अंगीकार करलिया, परतु रणजीतमल्लने हठ नही छोडा, और कहने लगा कि, मेरे साथ तो ऐसा हुआ, "लेनेगई पुत, खो आई खसम" "मैं तो श्रीआत्मारामजीको समझानेके वास्ते, श्रीचदनलाल-

---

प्रसिद्ध हुये जिनमें भी श्रीमद्विजयानदसूरि (आत्मारामजी) अधिकतर प्रसिद्ध हुए हैं तिन पाच शिष्योंके नाम—(१) श्रीमुक्तिविजयजी गणि (मूलचदजी) (२) श्रीवृद्धिविजयजी (वृद्धिचदजी) (३) श्री नीतिविजयजी (४) श्रीखातिविजयजी (५) श्रीमद्विजयानदसूरि (आत्मारामजी) जिनमेंसें श्रीमुक्तिविजयजीकी छबी मिली नहीं, दसरे महात्माओंकी छबी आगे देखलेवें

* इस समयमें भी ऐसेही होरहाहै सवेगी साधुके पास कोई जाना न पावे, इसवास्ते ढुढक साधु हरएक अपने श्रावक जो कि कोरे रहगये हैं, तिनको प्रतिज्ञा प्राय कराते हैं कि सवेगी साधुके पास जाना नही, तिनका उपदेश सुनना नही, तिनको वदना करनी नही, अहार पानी देना नही, जैसे कि पिछले दिनोंमें श्रीआत्मारामजी पशहरमें गयेथे, जहां पानीके न मिलनेसें उसही दिन पीछली पहरको विहार करना पडा, हाय, ! अफसोस ! कैसी समझ!! ढुढकश्रावकोंमें भी कितनेक हठग्राही अनजानोंने ऐसा बदोबस्त प्राय कियाहै कि "सवेगी साधु आवे, उसके पास जावे, पचास दड पावे, नही तो जात बहार थावे" ऐसा सुननेमें आता है

जीको लेआया था, परतु यहा तो, उलटे श्रीचदनलालजी भी, फस गये ! ", श्रीआत्मारामजीने भी अयोग्य समझके उपेक्षा करली श्रीचदनलालजीने जाकर अपने गुर "रुडमल्ल" जीको श्री आत्मारामजीका कहना सुनाया तब रुडमल्लजीने कहा, "श्रीआत्मारामजीका कथन सत्य है, हम भी ऐसेही मानेंगे, प्रथम भी हमारे मनमें कितनेही सदेह थे, सो अब निकल गये " ऐसे श्री रुडमल्लजीने भी शुद्ध श्रद्धान अगीकार करलिया बाद शेषकाल आर और ठिकाने विचरके स वत् १९२५ का चौमासा श्रीआत्मारामजीने " बडौत " गाममें किया, जहा " नवतत्त्व ' ग्रथ समाप्त किया जिस ग्रथको देखनेसेंही, ग्रथकर्त्ताका बुद्धिवैभव मालुम होताहै

इधर पजाब देशमें, "श्रीआत्मारामजी" की श्रद्धावालोंकी कुच्छ वृद्धि होती देखके, ढुढकोंके पूज्य अमरसिंघजीने, एक लेख (मेजरनामा) तैयार कराया, जिसमें लिखवाया कि, 'जो कोई जिन प्रतिमाके माननेका, वा पूजनेका उपदेश करे, डोरेके साथ मुखपर बधीहुई मुहपत्तीको निंदे, (अर्थात् न माने,) और बावीस अभक्ष्य (नहीं खाने योग्य वस्तुओं) का नियम करावे, उसको, अपने समुदायसें बाहर निकाल देना ' ऐसा लेख लिखवाके, सब साधुओंके प्राय हस्ताक्षर करालिये, जिसमें श्रीआत्मारामजीके गुर, " जीवणमल्लजी " के भी छल करके दसखत करालिये और " जीवणमल्ल, " " पन्नालाल " वगैरह चार साधुओंका लेख देकर " श्रीआत्मारामजी "के पास, दसखत करानेके वास्ते भेजे, और दिल्लीके तरफ ऐसे पत्र लिखवा भेजे कि, "आत्माराम"की श्रद्धा जिन प्रतिमा पूजनेसें मुक्ति माननेकी, बावीस अभक्ष्य वस्तु नही खानेकी और मुखोपरि डोरेसें मुहपत्ती नहीं बाधनेकी होगई है इसवास्ते हमने उसको इस देशसें निकाल दिया है, तुम भी अपने देशमें आत्मारामको रहने मत दो तथा आत्मारामकी सगत मत करो पजाब देशमें भी गामोगाम और शहर शहर, पत्र भेजवाये कि, ' आत्मारामकी श्रद्धा भ्रष्ट होगई है, इसवास्ते तुम आत्मारामकी सगत मत करो ' परतु जो लोग जानते थे कि, श्रीआत्मारामजी जैनमतके शास्त्रानुसारही, कथन करते हैं, और ढुढक लोग अपनी मन कल्पित बाते बतातें हैं वे लोग तो, पत्रको देखके पत्र भेजने भेजवानेवालोंकी हासी करने लगे, और कहने लगे कि, " ढुंढक लोक फक्त दूर दूरसेंही तडाके मारते हैं परतु श्रीआत्मारामजीके सामने, कोई भी नही हो सकता है, जिसका मूलकारण यह है कि, ढुढकलोक " व्याकरण ' को " व्याधिकरण " मानके तिसका अभ्यास नहीं करते हैं और श्रीआत्मारामजीके परिवारमें तो, प्राय व्याकरणका प्रचार मुख्य है यह तो प्रगटही है कि, " विद्वानके साथ मूर्खकी बात होही नहीं सकती है "

जीवणमल्ल, पन्नालाल वगैरह साधु, अमरसिंघजीका दिया हुवा लेख लेकर, विहार करके "काधला" गाममें आये कि जहा "श्रीआत्मारामजी" बडौतसें विहार करके आये हुए थे और "श्रीआत्मारामजी" सें मिले तब जीवणमल्लजी तो चूपही रहे, और पन्नालालने "श्रीआत्मारामजी"सें कहा कि, "तुम भी, इस लेखपर अपने दसखत कर दो, अन्यथा समुदायसें बहार होना पडेगा " तब श्री आत्मारामजीने कहा कि, "मेरे गुरुजी तो कुच्छ भी नही कहते हैं, तो तू दसखत करानेवाला कौन है" ? सुनकर पन्नालाल तो, कापने लग गया और जीवणमल्लजीने कहा कि, "मैं क्या करू ? मेरेपास, जोरावरी दसखत छल करके करा लिये हैं ' तब श्रीआत्मारामजीने कहा कि, " महाराजजी! आप कुच्छ चिंता न करें, मैं आपही सभाल लेऊगा '

ऐसा कहकर अपने गुरुको धीरज देके गुरुके साथही विहार करके "श्रीआत्मारामजी" शहर दिल्लीमें गये दिल्लीके ढुढक श्रावकोंने, अमरसिंघजीके पत्र पहुचनेसें इरादा किया कि, "आत्मारामजी"को चरचामें निरुत्तर करके निकाल देवें परतु वहापर "श्रीआत्मारामजी"ने श्री "उत्तराध्ययन" सूत्र सटीक अध्ययन २८ मा व्याख्यानमें वाचना शुरु किया जिसके सुननेसें दिल्लीके श्रावक बहुत खुश हुए कि, "हमने आजतक किसी भी ढुढिये साधुका इसतरहका व्याख्यान नही सुना" व्याख्यानके सुननेसेंही लोगोंको निश्चय होगया कि, "हम यदि इनसें चरचा करेंगे तो जरूर हम हार जावेंगे क्योंकि, यह बडे पढे हुए हैं, हमारी शक्ति इनको जवाव देनेकी नही है और चरचाके होनेसें, यातो समग्र, नही तो आधे तो, जरूरही इनके पक्षमें होजावेंगे इस वास्ते चरचा चुरचाको छोडके, जिसतरह भाव भक्तिके साथ विहार करजावे वैसा करना चाहिये" ऐसा निश्चय करके सब चूपके होरहे सत्य है—

तावद्गर्जति खद्योत, स्तावद्गर्जति चद्रमाः ॥
उदिते तु सहस्रांशौ, न खद्योतो न चंद्रमाः ॥ १ ॥

भावार्थ—तवतकही खद्योत (जुगनु खजुआ टटाणा-आगीआ) गर्जताहै,(अर्थात् अपना चादना दिखाताहै) और तवतकही चद्रमा भी गर्जताहै कि, जवतक सूर्यका उदय नही होता है, जव सूर्योदय होताहै तो, फिर न तो खद्योत, और न चद्रमा,दोनोंमेंसें कोई भी नही गर्जताहै

दिल्लीसें विहार करके, "श्रीआत्मारामजी," "हुहारा" गाममें आये, जहा रातके समय फिर जीवणमल्लजी रोकर कहने लगे कि, "आत्मारामजी! तैंने कव भी मेरे हुकुमका अपमान नहीं किया है मैं अच्छी तराह जानताहु कि, तू वडाही विनयवान् है, परतु मैं क्या करु? अमरसिंघके वहकानेसें तेरे जैसे लायक शिष्यके साथ अणवनाव (नाइतफाकी) का काम, मैंने किया, जोकि, विना विचारे लेखपर मैंने अपने दसखत करादिये अब मैं इस वातका बडा पश्चात्ताप कर रहा हु" तव फिर भी "श्रीआत्मारामजीने" धीरज देकर कहाकि, "स्वामीजी! आप इसवातका विलकुल फिकर न करें, अपना पुण्यतेज होवे तो, दुश्मन क्या करसकता है? यदि अमरसिंघने दसखत करालिये हैं तो, क्या हुआ? और अमरसिंघ मेरा क्या कर सकताहै?" यह सुनकर, जीवणमल्लजी चूप होगये वाद हुहारा गामसे विहार करके "श्रीआत्मारामजी," वडौत गाममें आये, जहा श्री आत्मारामजीको मालुम हुआ कि, दिल्लीके कितनेही ढुढक श्रावकोंने, अमरसिंघजीके पत्रकी प्रेरणासें, वहुत शहरोंमें पत्र भेजेहैं, जिनमें लिखाहै कि, "आत्मारामजीकी श्रद्धा ढुढकमतसें वदल गई है, और पूज्यजी साहिव अमरसिंघजीने, इनको पजाव देशसें निकाल दिया है, इत्यादि" —इस वर्णनके सुननेसें, "श्रीआत्मारामजीने" अपने दिलमें पूर्ण धर्मश्रद्धा होजानेसें विचार किया कि, "जहा मै जाऊगा, वहाही इस तरहके पत्र प्रथमही पहुच गये होंगे इस तरह तो किसी जगा भी रहना नहीं होसकेगा, इसवास्ते पीछे पजावदेशमेंही जाना ठीक है जैसा होवेगा, देखा जायगा यद्यपि इसवखत पजावमें, निःशक होके, मुजे मदद देनेवाले कोई नहीं हैं, तथापि सच्चे धर्मके प्रतापसें,कोई न कोई,पुण्यवान्, साहायक, होजावेगा" ऐसा निश्चय करके, "श्रीआत्मारामजी" वडौतसें विहार करके शहर अवालामें आये, और

निडर होकर, यथार्थ सत्य सनातन जैनधर्मका उपदेश, जो कि इतने समयतक प्रच्छन्नपणे कि॰ सी किसीको सुनातेथे पर्षदाके बिच सुनाने लगगये, जिससें " जमनादास " " सरस्वतीमल " " नानकचद " " गोंदामल्ल. " गगाराम, " " लालचद, " आदि बहुत श्रावकोंने जैनमतका सच्चा श्रद्धान, अगिकार किया, जिससें " श्रीआत्मारामजी"को भी, उत्साह अधिक हुआ सत्यहै, ' साचको आच कभी नही '

अबालासें विहार करके "पटियाला, नाभा" होकर "मालेर कोटला "में आये और सत्यधर्मकी प्ररूपणा करी, जिसको बहुत श्रावकोंने अगिकार की,और चौमासा करनेके लिये विनती की चौमासेको देर होनेसें कोटलेसें विहार करके " श्रीआत्मारामजी " शहर " लुधिआना " में आये, और खुब सन्मार्गका प्रकाश किया यहा " घोलुमल्ल, सेढमल्ल, बधावामल्ल, निहालचद, प्रभदयाल नाजर " वगैरह श्रावकोंके दिलसें ढुढक तिमिरका नाश किया, और एक मीहने बाद विहार करके, सवत् १९२६ का चौमासा, " मालेरकोटला" में जा किया, और भव्य जीवोंको प्रतिबोध दिया चौमासे बाद कोटलासें विहार करके एक शिष्यकी लालचसें, " श्री आत्मारामजी" बिनौलीके तरफ गये और सवत् १९२७ का चौमासा, बिनौलीमें किया और अध्यात्ममय " आत्म बावनी " नाम छोटासा ग्रथ तैयार किया इधर पजाब देशमें " श्रीविश्नचदजी, हुकमचदजी " वगैरह, बडे बडे शहेरोंमें फिरकर प्रच्छन्नपणे श्रावकोंको प्रतिबोध करने लगे, जिससें " श्रीआत्मारामजी " के श्रावकोंकी वृद्धि होती रही

चौमासे बाद बिनौलीसें विहार करके " श्रीआत्मारामजी", अबाला पटियाला, नाभा, कोटला, रायदाकोट होते हुए " जगरावा " गाममें आये, और जगरावासें विहार, " जिरा' को किया रस्तेमें "किशनपुरा" गामके पास, दैवयोगसें अनायासही, कितनेही चेलोंके साथ " पूज्य अमरसिंघजी" जोकि जिरेसें विहार करके जगरावाको आतेथे, " श्रीआत्मारामजी"को मिले "श्रीआत्मारामजी" को देखके, लाल आखे करके, रस्ता छोडके, किनारे होके, जाने लगे तब श्रीआत्मारामजीने, जोरावरी हाथ पकडके, अमरसिंघजीको बेठा लिया वदना करके, सुखसाता पूछके, हाथ जोडके, नम्रता करके, पूछाकि, " पूज्यजी महाराज मेंने आपका क्या गुनाह किया है? आपने मेरे ऊपर इतना गुस्सा क्या किया? " तब पूज्य अमरसिंघने लाल आखे करके कापते कापते कहा कि, " तू लोगोंके आगे कहता फिरता है कि, अमरसिंघ मेरी रोटी, वदना वगैरह बध कराता है सो तू इस बातको सत्य करदे, नही तो अट्ठाइ (आठ व्रत) का दड ले ' तब " श्रीआत्मारामजी" ने कहाकि " महाराजजी! " " मोहनलाल, " और ' छज्जुमल्ल ' तुमारे श्रावकोंने. यह समाचार कहाहै यदि यह बात सत्य है तो, इसका दड आपको लेना चाहिये और यदि जूठ है तो, " मोहनलाल, छज्जुमल" तुमारे श्रावकोंको यह दड लेना चाहिये परतु मुजे किसीतरह भी, दड नही चाहिये यह सुनकर, अमरसिंघजी निरुत्तर होगये, और क्रोध करके पराङ्मुख होकर, अपने रस्ते चलते होगये सत्य है " जूठेको क्रोधकाही शरण है " श्रीआत्मारामजी वहासें चलकर, जिरामें गये यहाके ओसवालोंको अमरसिंघजी धीरज देकर, बडे पक्के करके कहगयेथे कि, " तुम आत्मारामका कहना, नही मानना " परतु जिराके लोग बडे अक्कलमद, और इलमवाले होनेसे, " श्रीआत्मा

रामजी " के पास आकर प्रश्नोत्तर करने लगे प्रश्नोंका जवाब पूरा पूरा मिलनेसें कितनेही श्रावक तो, उसी वखत शुद्ध मार्गमें आगये, और कितनेकने यह दावा किया कि, " हम ढुढक साधुओंको पूछके, निर्णय कर लेवेंगे, पीछे जो हमको सत्य सत्य मालुम होवेगा, अगिकार करलेवेंगे " ऐसें कहकर, पन्नूराम वगैरह चार पाच श्रावक, "पटियाला" शहेरमें, " रामबक्षजी " के पास गये, और कितनेही प्रश्न किये, परतु एक बातका भी ठीक ठीक उत्तर न मिला अतमें रामबक्षजीने गुस्सेमें आकर कहा कि, " तुमारे अदर अज्ञान बढगया है यदि तुमको हमारे ऊपर निश्चय है तो, जैसें हम कहते, और करते है, वैसही करे जाओ, नही तो तुमारी मरजी आवश्यक जो हमारे पास है, सोही है, तुमारे वास्ते हम कोई नया अवश्यक बनावे क्या ? " तब उन श्रावकोंने कहा कि, " महाराजजी साहिब ! आप गुस्सा न करें क्योंकि, " श्रीआचाराग " वगैरह सूत्र प्राकृत वाणीमें है तो आवश्यक भी, प्राकृतवाणीमेंही होना चाहिये, और आपके पास जो है, सो गुजराती वगैरह भाषाओंसें मिश्रित खीचडी हुआ हुआहै इसको सच्चा किसतरह माना जावे ? " तब रामबक्षजीने कहा, " हम बहोत झगडा मत करो तुमारी श्रद्धा तुमारे पास, और हमारी श्रद्धा हमारे पास "

यह सुनकर उनको निश्चय होगया कि, जो कुच्छ श्रीआत्मारामजी बताते हैं, सब सत्य है और ढुढक साधुओंका कहना, असत्य है तब रामबक्षजीके पासही ढुढकमतको त्यागन करके जिरे चले गये, और सब वृत्तात, जिरेके लोगोंको कह सुनाया सुनकर सबनेही श्रीआत्मारामजीका कहना सत्य मानकर, शुद्ध श्रद्धान अगिकार करलिया इसवखत जीवणमल्लजी श्रीआत्मारामजीके ढुढक अवस्थाके गुरु भी, जिरामें आपहुचे, उनको भी सत्य धर्मका कुच्छ असर होगयाथा परतु " फिरोजीपुर " जानेंसें वहाके ढुढीयोंके बहकानेंसे बहक गये

जिरेमें श्रीआत्मारामजीने कल्याणजी साधुको समझाया, और सन्मार्ग अगिकार कराया यह बात सुनकर पूज्य अमरसिंघने हुकुमचदको, कल्याणजीके साथ पत्र भेजकर" भदौड" गाममें बुलाया और गुस्से होकर कहा कि "तू मेराही घर पुटने लगाहै ? तू कल्याणजीको लेकर क्यों जिरेको गयाथा ?" तब हुकुमचदजीने शाति करके कहा कि, " स्वामीजी ? में भूलगया मेरा गुन्हा माफ करें आगेको ऐसा नकरूगा " यह नम्रता करनेका सबब यह था कि हुकुमचदजी अच्छी तरह जान गयेथे कि, ढुढकमत मन.कल्पित है परतु अबतक हमको इस घरमें रहकर बहोत कुच्छ कार्य करनेके हैं, इसवास्ते धीरजसें जो बने सो अच्छा है--सत्य है--सहज पके सो मीठा हो इसवखत विश्नचदजी भी, वहा आये हुयेथे उनोंने भी पूज्यजीको समझायके शात करे और श्रीविश्नचदजी वगैरह विहारकी तैयारी करने लगे तब अमरसिंघजीने कहा, " रस्तेमें जिरेसें विहार करके जगरावामें आकर आत्माराम बैठाहे, उसको मिलनेका नियम करो " तब श्रीविश्नचदजीने कहा, " हम नही मिलेंगे " ऐसा कहकर विहार करके जगरावामें आये, और श्रीआत्मारामजीको मालुम न होवे ऐसे पृथक् मकानमें जा उतरे परतु क्या चाद निकला छीपा रहता है ? एक ओसवालने जाके श्रीआत्मारामजीको मालुम किया कि, " श्रीविश्नचदजी आये हैं, और फलाने मकानमें उतरे हैं " यह सुनतेही श्रीआत्मारामजी बडे खुश हुवे, और विश्नचदजी जिस मकानमें उतरे थे, वहा जाकर कहने लगे कि, " मिलनेका नियम तु-

मको पूज्यजीने कराया है, परतु मुझको तो नही कराया है? मैं तुमको मिला, तुम मुझे नही मिले, इसवास्ते तुमारा नियम भग नही है "तब श्रीविश्वचदजीने कहा कि "महाराजजी! मनसें तो हम सदाही आपके साथ मिले हुये है क्योंकि, आपने शुद्ध सनातन जैन मतका यथार्थ स्वरूप दिखलाके हमारे ऊपर जो उपकार किया है, हम इसका बदला भव भवमें भी नही दे सकते हैं परतु क्या करें? अपनी मतलब सिद्ध करनेके वास्ते ऊपर ऊपरसें जुदाई रखते हैं यदि इतनी भी जुदाई न रखे तो, पूज्यजी नाराज हो जाते हैं, और उनके नाराज होनेसें अपना कार्य, सिद्ध होना मुश्किल है " तब श्रीआत्मारामजीने कहा कि "खबरदार? पूज्यजीसें अलग होनेका इरादा, कदापि न करना, जबतक यह विद्यमान है, इनको दु ख न होना चाहिये, पीछे जो तुमारी मरजी होवे, तुम करना, क्योंकि तुमारे अलग होनेसें पूज्यजीको ज्यादा दु ख होवेगा और तुम जो कार्य करना चाहते हो, वह भी पूर्ण न होवेगा " इत्यादि हित शिक्षा देकर श्रीआत्मारामजी श्रीविश्वचदजीको हाथ पकडके अपने मकानमें जहा आप उतरेथे, लेगये, और बडे आनदपूर्वक ज्ञानालाप किया दूसरे दिन श्रीविश्वचदजी जगरावासें विहार करके "लुधीआना" तरफ गये, और श्रीआत्मारामजीने भी लुधीआने जानेकेवास्ते श्रीविश्वचदजीसें एक दिन पीछे विहार जगरावास किया परतु रस्तेमें वर्षाके सबबसें दैवयोगसें अनायासही सात कोशपर "बोपाराया" गाममें, दोनोंका मिलाप होगया वहा कोई भी ओसवाल ढुढकका उपद्रव न होनेसें, दोनोंही अपने साथके साधुओं सहित एकही मकानमें उतरे, और खूब आनदसें ज्ञानगोष्टी करते रहे सध्याका प्रतिक्रमण भी, एकत्रही किया तब श्रीआत्मारामजीने कहा कि, "तो आज मैं तुमको श्रीमहावीर स्वामीके शासनका प्रतिक्रमण विधि सहित कराउ प्रतिक्रमणका विधि देखके, सब साधु चकित हो गये, और कहने लगे कि, "महाराज हमारे नसीबमें भी कभी ऐसी विधि कहनेका दिन आवेगा और यह जैनाभास ढुढक मन कल्पित फासी हमारे गलेसें फाटी जायगी? " तब श्रीआत्मारामजीने कहा, "धैर्य रखो, हिम्मत मत हारो, सब अच्छा होजायगा " दूसरे दिन विश्वचदजी वगैरह, पमाल होकर लुधीआने पहुचगये और श्रीआत्मारामजी, एक दिन पीछे लुधीआना शहेरमें पहुचे यहा भी जूदे जूदे मकानमें उतरे परतु श्रीआत्मारामजीका व्याख्यान सुननेको, निरतर श्रीविश्वचदजी वगैरह आतेथे जिनमेंसें एक साधु "घनैयालाल" नामा जिसको ऐसी उधी पाटी पढा रखीथी कि, आत्माराम जहेरके बूटे लगाता है साधुओंके बहुत कहनेसें एक दिन कथा सुनने गये सुनकर कहने लगे कि, 'यह तो सत्य सत्य कथन करते हैं इनको क्यों असत्यप्रलापी कहते हैं? ऐसा अपने मनसें विचारके "गणेशजी" नामा अपने गुरु भाईसें पूछा कि, "तुम जो मेरे दूसरे साधुओंके पास अनिष्टाचरण कराते हो और तुम खुद भी करते हो, सो ऐसा काम करना, किस जैनमतके शास्त्रमें लिखाहै? वो पाठ मुझे दिखलादो, अन्यथा आज पीछे ऐसा काम मैं कभी भी न करुगा " तब गणेशजी साधुने कहा कि, "भाई! साधुओका काम ऐसेही चलता है ' तब घनैयालालने कहा कि "पहेले चलगया सो चलगया अब आगे तो जबतक शास्त्रका पाठ नही दिखावोगे तबतक नही चलेगा " ऐसा कहकर घनैयालालने भी श्रीआत्मारामजीका कथन सत्य सत्य अंगिकार कर लिया यह बात अमर

सिंहजीको पत्रद्वारा भदाडमें मालुम हुई तब चिताके सबबसें अमरसिंहजीको ताप चढने लगा, और तापके बिच बकवाद करने लगे, और "तुलशीराम" नामक अपने चेलेसें कहने लगा कि, "उठ! लुधीआने चलके आत्मारामको सरकारमें कैद करादेवें! क्योंकि, इसने मेरे सब चेले बहका दिये हैं." तब तुलशीरामने बहुत धीरज देके शात किया क्योंकि, तुलशीरामकी भी श्री आत्मारामजीकीही श्रद्धा थी, इसवास्ते जानतेथे कि, यह जूठे ढोंग करते हैं

कितनेक दिनों पीछे अमरसिंहजीकी तरफसें पत्र ऊपर पत्र आनेसें लाचारहोकर श्री विश्वचद-जी लुधीआनेसें विहार करके, अबाला शहेरमें जा चौमासा रहे, और श्री आत्मारामजीने सवत् १९२८ का चौमासा, "लुधीआने" मेंही किया

चौमासे बाद श्रीआत्मारामजी, लुधीआनासे विहार करके "हुशीआरपुर" में आये वहा श्री विश्वचदजी वगैरह बारा (१२) साधुओंने अमरसिहके कितनेक साधुओंका भ्रष्टाचार मालुम होनेसें असरसिहजीको कहा कि, "इन चौथे व्रतके भ्रष्टाचारीयोंको रखना आपको योग्य नहीं" तब अमरसिंहने, उनका कहा नही माना, और कहा कि "हमारी श्रद्धा भ्रष्ट होगई है, तुमारा हमारा रस्ता पृथक् पृथक् है" तब श्रीविश्वचदजीने बहुत नम्रतासें कहा कि, "पूज्यजी साहिब! आप विचार करें! अन्यथा पीछे आपको बडा पश्चात्ताप करना पडेगा" परतु अमरसिंहजीने बिलकुल शोचा नही तब श्रीविश्वचदजी वगैरह अमरसिंहजीसें अलग होकर श्री-आत्मारामजीको आन मिले, जब श्रीआत्मारामजीने कहा कि, 'तुमने अच्छा काम नहीं किया विना अवसर अलग होगये! अभी अलग होनेका समय नहीं था" तब श्री-विश्वचदजी वगैरहने कहा कि, "हम क्या करें? हमतो बहोतही समझाते रहें, परतु पूज्यजी साहिब बिलकुल नही समझे क्या हम भी उन भ्रष्टाचारीयोंके साथ मिलकर, अपना जन्म निष्फल करें?" तब श्रीआत्मारामजीने कहा कि, "अच्छा जो होवे सो हो परतु यदि तुमको इस देशमें विचरना होवे तो, जोर लगाकर शहेरोंशहेर, और गामोंगाममें फिरके शुद्ध श्रद्धानका उपदेश करके श्रावकसमुदाय बनाओ क्योंकि, बिना श्रावकसमुदायके इस पचम कालमें, सजमका पालना कठिनहै और यदि इस देशमें विचरना न होवे तो, चलो गुजरात देशमें चलके शुद्ध सनातन जैनधर्मके अव्यवच्छिन्न परपरायके गुरु धारण करें, और उसी देशमें फिरें" तब कितनेक साधुओंने कहा कि, "महाराजजी साहिब! यह काम हमसें नही बनेगा इस देशको तो हम कदापि न छोडेंगे इसवास्ते आपकी आज्ञानुसार हम, दो दो तीन तीन साधु, अलग अलग विचरके क्षेत्रोंमें श्रावक समुदाय बनावेंगे यह कोई बडी बात नही है क्योंकि, प्राय' सबही क्षेत्रोंमें पैर रखने जितना ठिकाना तो, आपने, और आपकी मददसें हमने भी कर रखा है 'ऐसा कहकर श्रीविश्वचदजी वगैरह बारासाधु अमरसिंहजीको छोडके आये थे वे, और आठ साधु जोगराजके श्रीआत्मारामजी वगेरह, कुल वीस साधु, चारों तरफ जूदे जूदे शहरोंमें अपने पक्षके श्रावक समुदाय बनानेके वास्ते, विचरने लगे वे सर्वक्षेत्रोंमें प्राय. सत्योपदेशद्वारा अपना बिछोंना बिछाते चले, और ढुढकोंका बिछौंना उठाते चले ऐसे करते करते श्रीआत्मारामजी, तथा श्रीविश्वचंदजी वगैरह साधुओंने "हुशीआरपुर," "जालधर, "नीकोदर," "झडी-आला," "अमृतसर," "पट्टी," "वेरोवाल," "कसूर, "नारोवाल," "सनखतरा," "जीरा," "कोटला," "अबाला," "लुधीआना," "लाहोर," "[illegible]," "जेजो,"

"सरहिंद," "कुजरावाला," (गुजरावाला) "रामनगर," "पसरर," "जम्बु," वगैरह बहुत स्थानोंमें अपने पक्षके श्रावक बनाये इधर यह कारवाई देखकर, पूज्य अमरसिंहजीको घभराट होगया, और रुदन करके अपने श्रावकोंको कहने लगे कि, "मेरे अच्छे अच्छे पढेहुये बारा चेले आत्मारामके पास चलेगये, और आत्मारामके साथ मिलकर पंजाबके सब शहरोंको बिगाड रहे हैं इससें मेरे बाकी शेष रहेहुये चेलोंके वास्ते बडी मुश्किल होगी, और आहार पानी भी मिलना मुश्किल हो जावेगा इसवास्ते इस बातका बदोबस्त करना चाहिये यदि तुम इस बातका बदोबस्त न करोगे तो, मैं इस पंजाब देशको छोडके मारवाड वगैरह देशमें जाकर, अपनी जींदगी गुजारुगा ! !"

तब "पटियाला" वगैरह दो तीन शहरोंके ढुढक श्रावकोंने, पूज्य अमरसिंहजीके लिखाये मुजब, पत्र लिखकर ब्राह्मणको देकर प्राय पंजाबके सब शहरमें भेजे, जिसमें लिखाथा कि, आत्मारामजी वगैरह जितने साधु,ढुढकमतसें उल्टी श्रद्धावाले होवे, उनको किसी भी श्रावक वदना नहीं करे, उतरनेको जगा नहीं दे, वस्त्रपात्र नही दे, आहार पानी भी नहीं देना, इनका उपदेश भी नहीं सुनना, इनकेपास जाना भी नहीं, सामायिक भी नहीं करना,वगैरह यह खबर हुशीआरपुरके श्रावकोंने भी सुनी, तब" नथ्थुमल्ल " भक्त, लाला " प्रभुदयालमल्ल " आदि बहुत श्रावक कहने लगे कि, " जिसने यह पत्र भेजवाये हैं, इनकेवास्तेही यह बदोबस्त है " और शहरोंवालोंनेभी यही जबाब दिया सवत् १९२९ का चौमासा, श्रीआत्मारामजीने जिरामें किया और श्रीविश्नचदजी वगैरह साधुओंने भी, जूदे जूदे क्षेत्रोंमें चौमासा किया चौमासे बाद सर्व साधु पूर्वोक्त रीतिसें फिरते रहे और लोकोंको सत्योपदेश सुनाते रहे जिससें अनुमान सात हजार (७०००) श्रावकोंने ढुढकमत छोडके, शुद्ध सनातन जैनधर्म, अगिकार किया सवत् १९३० का चौमासा, श्रीआत्मारामजीने अबाला शहरमें किया, वहा श्रीहुकमचदजीकी प्रार्थनासें चौवीस भगवान्के चौवीस स्तवन, बडे गभीर अर्थ, और वैराग्य रससें भरे हुए बनाये सवत् १९३१ का चौमासा, श्रीआत्मारामजीने शहर हुशीआरपुरमें किया इस चौमासेके बाद सब साधु, लुधीआना शहरमें एकत्र हुये तब श्रीविश्नचदजी वगैरह साधुओंने श्रीआत्मारामजीको कहा कि, " कृपानाथ! जैन शास्त्रसें विरुद्ध इस ढुढकमतके वेषमें हमको कहातक फिरावोगे? अब तो जैन शास्त्रके मुजब जो गुरु होवे उनके पास फिरसें दिक्षा लेके, शास्त्रोक्त वेष धारण करके, " यथार्थ गुरु," धारण करना चाहिये तथा "श्रीशत्रुजय, उज्जयत " (गिरनार)वगैरह जैन तीर्थोकी यात्रा करायके,हमारा जन्म सफल कराना चाहिये" यह बात श्रीआत्मारामजीको भी पसद आनेसें सब साधु शहर लुधीआनासें विहार करके, "कोटला," "सुनाम," "हासी," "भियाणी," वगैरह शहरोंमें होकर शहर पालीमें (देश मारवाड) गये वहा "नवलखा" "पार्श्वनाथ" की यात्रा करके, " वरकाणा " गाममें श्री " वरकाणा पार्श्वनाथ," "नाडोलमें" "पद्मप्रभु,""नारलाईमें" "श्री ऋषभदेव" वगैरह(११) जिनालय, " घाणेराव " में " श्रीमहावीर स्वामी," "सादडी" में तथा " राणकपुर " में " श्री ऋषभ-

१ कुजरांवाला, रामनगरमें श्री " बूटेरायजीके उपदेशसें सवेगमत प्रचलित हुआथा परतु पूर्वोक्त साधुओंके विचरनेसें, वे श्रावक परिपक्व होगये

२ पसरुर और जम्बुके ओसवाल प्राय सब श्रीविश्नचदजीके उपदेशसें श्रीआत्मारामजीकी श्रद्धावाले होगये थे परतु पीछेसें अशुभ कर्मके उदयसें फिर गये

देवजी," "सीरोहीमें" (१४) जिनालय जो एकही नींव (थडा–चौतरा–पाया) ऊपर है, वगैरहही यात्रा करते करते, श्री "आबुराज" पधारे, जिनकी यात्रा करके दिलसें खुश खुश हो गये श्रीआबुजीकी श्लाघा करनेको, जुवानमें ताकत नहीं है जो आखोंसे देखता है, चकित हो जाता है जिसके देखनेके वास्ते कई अंग्रेज विलायतसें आते हें, और लिखते हैं कि आबुजीके मदिर सरिखी इमारत दुनीयाभरमें भी होनी मुश्किल है कई युरोपियन इसका फोटो (आकस) भी उतार कर लेगये हैं, जिसकी नकल चिकागो धर्मसमाजके तरफसें छपे हुए पुस्तक वगैरह वहोत जगे पाई जाती है "टॉडके राजस्थान" ग्रंथमें इनका बहुत वर्णन है आबुजी देलवाडेके मदिरोंकी यात्रा करके, श्रीआत्मारामजी, विश्वचदजी वगैरह(१६) साधु[†] श्री "अचलगढ" की यात्रा करनेको गये जहा वडे भारी मादिरमें चौदासौ चवालीस(१४४४) मण सोनेकी चौदा (१४) मूर्तियोंके दर्शन करके आबुजीके पहाडसें उतरके श्रीआत्मारामजी "पालनपुर" पधारे कितनेक दिन वहा ठहरके विचरते विचरते "भोयणी" गाममें श्री "मल्लीनाथस्वामी" की यात्रा करके, ग्रामो ग्राम जिन मदिरके दर्शन करते हुए, और श्रावकोंको दर्शन देते हुए, शहर "अहमदाबादमें" पधारे, श्रीआत्मारामजीका आगमन सुनकर नगरशेठ "प्रेमाभाई हिमाभाई" तथा शेठ "दलपतभाई भगुभाई" वगैरह अनुमान तीन हजार (३०००) श्रावक श्राविका तीन कोसपर सामने लेनेको गये क्या आश्चर्य है? जहा अनुमान सात हजार घर श्रावकोंके, औ पाचसें जिन मदिरहें, तहां तीन हजारका सामने जाना कुछ वडीवात नही हे सबने श्रीआत्मारामजीको देखतेही सार विधिपूर्वक वदना करके वडी धामधूमसें नगरमें ले जाकर, शेठ दलपत भाईके वगलेमें उतारे जहा आदमीयोंके एकत्र होनेमें कुछ कसर न रही

व्याख्यान सुनकर श्रावकवर्ग लोट पोट होतेथे, केइ सरसोंके हृदयको कुलगुरुओंके उत्सूत्र वचनाधकारने वासा करके स्याम कर दियाथा, तिनको इन महात्माके वचन भास्करने दूर करके उज्ज्वल कर दिये उत्सूत्र प्ररूपक शिरोमणि शातिसागर जिसने शहर अहमदावादमें जैनमतसें विरुद्ध वर्णन करके एक उपद्रव खडा कर रखाथा, वह श्रीआत्मारामजीके साथ चरचा करने को तैयार होगया श्रीआत्मारामजीने भी, शास्त्रानुसार जवाब देकर उसको निरुत्तर कर दिया तिस दिनसें शाति सागरका जोर नरम होगया तब शहर अहमदाबादके जैनसमुदायने श्रीआत्मारामजीका अपूर्व ज्ञान, और बुद्धिवैभव देखके बहुत प्रशसा करी, और कहा कि महाराजजी साहिब! आपका इस वखत इस शहरमें आना ऐसा हुआहै कि, जैसें दावानलके लगे वर्षाका आगमन होवे!" अहमदाबाद थोडेही दिन रह कर श्रीआत्मारामजी वगैरह साधुओंने श्रीशत्रुजय तीर्थकी यात्रा करनेके वास्ते "पालीताणा" शहर तरफ विहार किया, और क्रम करके शहर पालीताणामें पधारे और दूसरे दिन सूर्योदयके लगभग "श्रीशत्रुजय" पर्वत पर चढे एक तरफ तो सूर्य उदय होकर चढता जाता था, और दूसरी तरफ श्रीमहाराजजी सूर्य समान दिदार लोकोंको देते हुये क्रम उठाते चढते जाते थे, इस तीर्थका वर्णन करनेको इद्र भी समर्थ नहीं है तो, औरोंका तो क्याही कहना है? इस तीर्थ ऊपर नव वसी(टूक)याने हिस्से हैं, जिनमें अनुमान (२७००) जिन मदिर हे प्राय सपूर्ण दिन ऐसे दर्शनामृतसें तृप्त हुये कि, न तृषा लगी, न

[†] चदनलालजीके गुरु रुडमलजी, वृद्ध होनेसें दोनों (शिष्य–गुरू) उस वखत गुजरात देशमें नहीं गयेथे तथा एक दो जने, साधुपणेको छोड गये थे, इसवास्ते कल सोला साधु लिखे हैं।

भूख ऊपरसें नीचे आनेको दिल बिलकुल कबूल नहीं करता था, परन्तु कोई भी यात्री भाय ऊपर न रहनेका रिवाज होनेसें, लाचार होकर "श्रीऋषभदेवजीकी" यात्रा करके नीचे उतर आये सायकालका प्रतिक्रमण करके, तीर्थराजके गुण गाते हुये फिर दर्शन करनेको सूर्योदयकी आकाक्षा करते हुये सोगये प्रात काल होतेही प्रतिक्रमण, प्रतिलेपणादि साधुकी क्रिया करके फिर ऊपर चढे इसी तराह निरतर करते रहे तीर्थयात्रा करके पालीताणासें विहार करके, "गोघा बदर," "भावनगर, "वला" "पछी" "लासेणी, "लाठीधर." "बोटाद," "राणपुर," "चुडा," "लींबडी, वगैरह गामोंमें विचरते हुये, सेंकडोंही जिन मदिरोंकी यात्रा करते हुये, हजारोंही श्रावकोंको दर्शन व उपदेश देते हुये, फिर शहेर अहमदाबादमें आये जहा "गणि श्री मणिविजयजी" महाराजजीके शिष्य "गणि श्री बुद्धिविजयजी" (बूटेरायजी) महाराजजीके पास, श्री "तपगच्छ" का वासक्षेप लिया ओर इनही महात्माको श्रीआत्मारामजीने, गुरु धारण किये आर शेष साधुओंने श्रीआत्मारामजीको अपने सद्गुरु धारण किये इसवक्त श्रीबुद्धिविजयजी महाराजजीने सब साधुओंके पिछले नाम, बदल दिये जैसेंकी।

(१)	श्री आत्मारामजी—	श्री आनदविजयजी
(२)	श्री विश्नचदजी—	श्री लक्ष्मीविजयजी +
(३)	श्री चपालालजी—	श्री कुमुदविजयजी
(४)	श्री हुकमचदजी—	श्री रगविजयजी
(५)	श्री सलामत रायजी—	श्री चारित्रविजयजी
(६)	श्री हाकम रायजी—	श्री रत्नविजयजी
(७)	श्री खूबचदजी—	श्री सतोषविजयजी
(८)	श्री घनैयालालजी—	श्री कुशलविजयजी
(९)	श्री तुलशीरामजी—	श्री प्रमोदविजयजी
(१०)	श्री कल्याणचदजी—	श्री कल्याणविजयजी
(११)	श्री नीहालचदजी—	श्री हर्षविजयजी
(१२)	श्री निधानमल्लजी—	श्री हीरविजयजी
(१३)	श्री रामलालजी—	श्री कमलविजयजी
(१४)	श्री धर्मचदजी—	श्री अमृतविजयजी
(१५)	श्री प्रभुदयालजी—	श्री चद्रविजयजी
(१६)	श्री रामजीलाल—	श्री रामविजयजी

सवत् १९३२ का चौमासा, श्री "आनदविजयजी" (आत्मारामजी) वगैरह साधुओंने शहेर अहमदाबादमें ही किया चौमासे बाद शत्रुजय गिरनार वगैरह तीर्थोकी यात्रा करके श्री आनदविजयजीने सवत् १९३३ का चौमासा, शहर भावनगरमें किया, चौमासे बाद "वहोरा अमरचद, जसराज, झवेरचद" के सघके साथ, "शत्रुजय, तलाजा, डाठा, महुवा दीव, प्रभासपाटण, वेरावल, मागरोल," होकर तीर्थयात्रा करते हुए शहर जुनागढ ती "गिरनार" की यात्रा करके शहर जामनगरमें पधारे यहासें सघने फिर भावनगर चलने

+ तसवीर नं० १

वास्ते वहुत प्रार्थना करी परतु देश पजाबमें, जो सत्यधर्मका वीज लगायाथा, तिनको प्रफुल्लित करनेका इरादा करके, सबसें जूदे होकर, " मोरवी, ध्रागध्रा, झींझुवाडा, " होकर "शखेश्वर" गाममें, श्री " शखेश्वर पार्श्वनाथ " की मूर्ति, जो शखपति, " कृष्णवासुदेव " को " धरणेंद्र " की आराधनासें मिलीथी, और जिसके स्नात्रजलके छिटकनेसें, " जरासिंध " नामा प्रतिवासुदेवकी जरा विद्या, कृष्ण वासुदेवके लश्करसें दूर हुई थी ऐसे प्रभाववाली श्री पार्श्वनाथकी मूर्तिके दर्शन करनेसें सब साधु, बहोतही आनदित हुए यहासें विहार करके श्री " आनदविजय जी, " " पाटण " शहरमें पधारे तहा प्राचीन जैन पुस्तकोंके भडार देखे, तिनमेसें कितनेक ग्रथोंकी नकलें भी करवाई पाटणसें विहार करके "तारगाजी " तीर्थपर, " राजाकुमारपाल " के उद्धार किये बडे भारी मदिरमें बिराजमान, श्री " अजितनाथ स्वामी " की यात्रा करी और विहार करके " पालणपुर, आबु, शिरोही, पचतीर्थी, " वगैरहकी यात्रा करते हुए शहर " पाली " में आये तहा शहर " जोधपुर " के श्रावकोंका पत्र, श्रीआत्मारामजीको मिला जिसमें लिखाया कि, " यहा (जोधपुरमें) इसवखत (३५) ढुढक साधु, आपके साथ चरचा करनेके वास्ते एकत्र हुए हैं जिसमें दिवान् " विजयसिंह " मेहता, पडित मडल सहित, मध्यस्थ नियामित किये गये हें इसवास्ते आप कृपा करके जलदी शहर जोधपुरमें पधारके, हम सेवकोंकी अभिलाषा पूर्ण करें" इसवास्ते श्री आनदविजयजीने, थोडेही दिन पालीमें रहकर, शहर जोधपुरके तरफ विहार किया, और क्रम करके शहर जोधपुरमें पहुचे इनके वहा पहुचनेसेंही अगले रोज (३८) ढुढक साधु तो, सभा होनेके एकदिन पहिलेंही, विना चरचा किये, चूपचाप इस तराह चले गये, जैसें सूर्योदयसें अधेरा दूर होजाता है परतु " हर्षचद " नामा एक ढुढक साधु, रहगयाथा सो श्रीआनदविजयजीसें बातचित करके, शुद्ध श्रद्धानमें आगया श्रीविश्नचदजी गुरु नाम धराया, और " हर्षविजयजी " निज नाम पाया इस वखत ढुढकोंके अनिष्टाचरणसें राज्यके भयसें कितनेही ओसवाल, जेनमतको छोडके वैष्णवादि मतका आश्रय लेने लग गयेथे इसवास्ते इन लोकोंपर कृपादृष्टि करके, श्री आनदविजयजी महाराजने सवत् १९३४ का चौमासा, शहर जोधपुरमेंही किया जिसमें प्रथम पचास घर अनुमान ठीक ठीक श्रद्धानवाले रहेथे, सो वधके अनुमान पाचसो होगये क्यों न होवे ? सूर्यके उदय होनेसें अधकार दूर होताही हे यदि ऐसे महात्माके आनेसें भी हृदयगत अज्ञानाधकार दूर न होता तो, कब होता ? चौमासे बाद जोधपुरसें विहार करके, दुकालके सबबसें रस्तेमें भूख प्यासको सहन करते हुए, श्रीआनदविजयजी, " जयपूर, दिल्ली " होकर देश पजाबमें शहर अबालामें आये इसवखत सूर्योदयसें घूक जानवरको जेसें चिंता होती हे, तैसें पजाबी ढुढकोको हुई परतु सूर्यविकाशी कमलकी तराह अन्य श्रावकोंके मुखारविंद खिड गये

अबालासें विहार करके शहर लुधीआनामें आये, वहा " श्री उत्तमऋषि " लोंकामतके यति, (पूज) अबालावालेने सब डेरा छोडके, श्रीआनदविजयजीके पास पाच महाव्रत अगीकार किये, और गुरुजीका दिया, श्री " उद्योतविजयजी" नाम धारण किया

कितनेक दिनों बाद शहर लुधीआनामेंही जील्ला फिरोजपुर गाम मुदकीका रहनेवाला दुनीचद ओसवाल, हुशीआरपुरका रहनेवाला, उत्तमचद ओसवाल, शहेर पाली देश मारवाडका रहनेवाला हर्षचद ओसवाल, जेजोंका रहनेवाला मोतीचद ओसवाल, इन चार जैनों-

की वडी धूम धामसें दीक्षा हुई, जिसमें अनुक्रम करके श्रीआनद विजयजी महाराजजीने उन्होंके यह नाम रखे(१) "विनय विजयजी (२) कल्याण विजयजी (३) सुमति विजयजी(४) मोती विजयजी" बाद चौमासेके दिन नजदीक आजानेसें सवत् १९३५ का चौमासा, श्रीआनद विजयजीने शहर लुधीआनामें किया इस सालमें देश पजाबमें कितनेही शहरोंमें बिमारीका बहुत जोर था जीसमें भी लुधीआनामें अधिकतर बिमारीका जोरथा जिस बिमारीमें मगसर महिनेमें श्रीआनद विजयजी महाराजजीके शिष्य "रत्नविजयजी" (हाकमरायजी) स्वर्गवास हुये और श्रीआनद विजयजीको भी, कितनेक दिनोंतक ताप आया जिस तापका ऐसा जोर बध गया कि, श्रीआनद विजयजी बेहोश होगये यह हाल देखकर सकल श्रीसघको अतीव खेद पैदा हुआ अब इस वखत क्या करना चाहिये ? ऐसे विचारमेंही सकल श्री सघ दिग्मूढ होगया, परतु मालेर कोटला निवासी लाला "कवरसेन" जो कि जैनमतके रहस्य उत्सर्ग अपवादादि षड्भगीका अच्छा ज्ञान धारण करताथा, तिसने आके लाला "गोपीमल्ल," और "प्रभदयाल नाजर" वगैरहको समझाया कि, "विचार करने करनेमेंही तुम काम बिगाड देवोगे। यह समय विचारनेका नहीं है, जलदी श्रीमहाराजजी साहिबको, शहर अबालामे लेचलो क्यों कि, वहाकी आब हवा इस वखत बहोत अच्छी है" यह सुनकर कितनेकके मनमें तो यह बात रुचि नहीं, परतु कवरसेन बडा लायक होनेसें उसका कथन, कोई भी अन्यथा नहीं कर सकता था वहासें शहेर अबालामें लेगये वहागये बाद दो दिन पीछे, जब श्रीआनद विजयजीको तपका जोर कुछ नरम हुआ, और कुछ होश आया, तब दखते हैं तो, अपने आपको शहर अबालाके उपाश्रयमें देखें आश्चर्य प्राप्त होकर कहने लगे कि, "यह क्या हुआ ? मुजे कोई स्वप्न आया है? अथवा यह कोई इद्रजाल हो रहा है? या मुझे कोई मतिभ्रम होगया है ? क्योंकि, मैं तो लुधीआनेमें था, और इस वखत मुझे अन्यही अन्य भान हो रहा है" ऐसे अनेक प्रकारके सशया दोलारूढ हुये विचार कर रहेथे, इतनेमें लाला कवरसेन वगैरह श्रावक समुदाय, हाथ जोडकर कहने लगे कि, "महाराजजी साहिब ! आप शोच मत करें आपको लुधीआनासें हम यहा (अबालामें) ले आये हैं" इत्यादि सब वृत्तात सुनाया अनुमान दो महिने बाद जब श्रीआनद विजयजीको आराम होगया, तब पूर्वोक्त सब हाल लिखकर शहर अहमदाबादमें गणिजी "मुक्ति विजयजी" (मूलचदजी) महाराजजीके पास भेजा उन्होंने श्री जैनशास्त्रानुसार, जो कुछ प्रायश्चित्त देना ठीक समझा, दिया जिसको श्रीआनदविजयजी महाराजजीने भी, बडी खुशीसें स्वीकार किया इस वखत शहर अबालामें "श्रीवीरविजयजी," "श्रीकातिविजयजी," "श्रीहसविजयजी" की दीक्षा हुई बाद अबालासें विहार करके लुधीआना, जालधर होते हुये गुरुके "झडीआले" आये और सवत् १९३६ का चौमासा, श्रीआनदविजयजीने झडीआलामें किया "नारोवाल," "सनखतरा" चौमासे बाद विहार करके "जीरा," "पट्टी," "अमृतसर," होते हुये शहेर "गुजरावाला" में पधारे और सवत् १९३७ का चौमासा, वहा ही किया चौमासे पहिले इस जगा, श्रीमाणिक्य "विजयजी," और "श्रीमोहनविजयजी" की दीक्षा हुई, और चौमासेमें श्रीआनदविजयजी महाराजजीनें, बहुत लोकोंके कहनेसें, सस्कृत, प्राकृत नहीं जाणनेवालोंको बोध होनेके लिये, "जैनतत्त्वादर्श" (जैनधर्मके तत्त्वोंका सीसा दर्पण)इस नामका ग्रथ, बनाना सुरु किया चौमासे बाद विहार करके "पींडदादनखा" में गये,

और " मोतीचंद " ओसवाल शहर अमृतसरके रहनेवालेको दीक्षा देकर " श्रीसुदर-विजयजी " नाम रखा यहासें विहार करके श्रीआनदविजयजी, अपने परिवारसहित गाम " कलश " (महाराजजीकी जन्मभूमि) में पधारे जिनको देखके श्रीआत्मारामजीके सासारिक परिवारके " मगलसेन " " प्रभदयाल " वगैरह पितृव्य भाई, वडे आनदको प्राप्त हुये उनकी बहुत प्रार्थनासें एक रात वहा रहे वहासें विहार करके " रामनगर, " " पपना-खा, " " किला दिदारसिंघ, " " गुजरावाला, " " लाहौर " " अमृतसर, " "जालधर," होकर शहेर हुशीआरपुरमें पधारे, और सवत् १९३८ का चौमासा, वहाही किया इस चौमा-सेमें " जैनतत्वादर्श " ग्रथ समाप्त किया चौमासे वाद विहार करके "जालधर, "नीकोदर, " "जीरा, " कोटला" होके " लुधीआना " शहेरमें पधारे. और " श्रीजयविजयजी, " "श्री-अमृतविजयजी, " " श्री अमरविजयजी, " तीन शिष्य नये किये वाद लुधीआनासें विहार करके श्री आनदविजयजी महाराजजी, शहेर अवालामें पधारे और सवत् १९३९ का चौमासा वहाही किया इस चौमासामें जैनतत्त्वादर्श नामा ग्रथ, जो प्रथम बनाया था, सो छपवानेके वास्ते, रायबहादुर धनपतिसिंघ, जो शहेर अवालामें श्री महाराजजी साहिबके दर्शन करनेको आयेथे, उनको दिया जो छपवाके प्रसिद्ध किया गया हे, और " अज्ञानतिमिरभास्कर " नामा दूसरा ग्रथ, बनाना प्रारभ किया परन्तु कितनेक वेदादि पुस्तक,जिनकी बहुत जरूरत थी और जे उस वखत पासमें नहीं थे,इस वास्ते थोडासा लिखके,बध कियाथा इस चौमासेमें, पजाब-के श्रावकसमुदायकी प्रार्थनासें, श्रीआनदविजयजी महाराजजीने "सत्तरभेदीपूजा "बनाई इतने वर्षोमें श्रीआनद विजयजी महाराजजीके परिवारमें ' हर्षविजयजी " "उद्योतविजयजी " वगैरह (१९) शिष्य नये हुये, जिनमें जिस जिसकी दीक्षा, श्री महाराजजी साहिबके हाथसें हुई, तिस तिसके नाम, यहा लिखेहैं, और भी नाम, वश वृक्षसें मालुम होगा यह पाच चौमासेमें देश पजाबमें श्री आनदविजयजी महाराजजीने, श्री जैनधर्मका बडा भारी उद्योत किया, और कितनेक लोकोंके दिलमें, ढुढकोंका अनिष्टाचरण देखनेसें, जैनधर्मके ऊपर द्वेष हो रहाथा दूर किया क्योंकि, लोकोंको मालुम होगया कि, जो मुखबधे है, वे मलीन हैं और यह पीताबर धारण करनेवाले, उज्ज्वल धर्म प्ररूपक हैं, अब इस वखत भी, किसी क्षत्रीय ब्राह्मणके साथ बातचीत होने लगती हैं तो, उसी वखत वे कहने लग जाते हैं कि, " पजाब देशके ओसवाल (भावडे) तथा खडेरवालको तो, श्री आनदविज-यजी (आत्मारामजी) महाराजजीने सुधार दिये " क्योंकि, प्रथम तो येह भावडे लोक, मुहबधे गदे गुरुओंकी सोबतसें, वडेही मलीन होगये थे, और इसी वास्ते पजाब देशमें प्रायः सब जगा, येह लकाके चुडेके नामसें प्रसिद्ध थे अब भी जो शेप ढुढक रह गये हैं, उनको लोक बुरे समझते हैं, और उनसें परेहज भी रखते हैं धर्मको लगा हुआ यह कलक, दूर किया, येह कोई श्रीआनद विजयजी महाराजजीने थोडा पुण्य पैदा नहीं किया ! सब जगा जहा जहा जावे, वहा वहां अनेक प्रकारके मत मतातरोंवालेके साथ चर्चावार्ता होनेसें लोकोंमें जैनधर्मकी " फिलोसोफी " (तत्वज्ञान) मालुम होगई, इत्यादि बहुत उपकार कर रहेथे परतु नूतन शि-ष्योंको जैनशास्त्रानुसार, " छेदोपस्थापनी " नामा चारित्रका सस्कार कराना था सो उसवखत गणिजी महाराज श्री, " मुक्तिविजयजी " (मूलचदजी) सिवाय, औरको " श्री बुद्धिविजयजी

(बूटेरायजी) महाराजजीके परिवारमें अधिकार नहीं होनेसें देश गुजरात, शहेर अहमदा-बादके तरफ विहार करनेका इरादा करके, शहर अंबालासें विहार करके दिल्लीमें पधारे वहा तिनको ढुंढकोंका छपवाया ' सम्यक्त्वसार ' नामा पुस्तक, भावनगरकी " श्री जैनधर्म प्रसारक सभा " तरफसें मिला तिसका उत्तर, सभाकी प्रेरणासें श्रीआनंदविजयजीनें लिखना सुरु किया शहर दिल्लीसें " हस्तिनापुर" की यात्रा करके " जयपुर " " अजमेर " " नागौर " आदि शहरोंमें विचरते हुये, " बीकानेर " पधारे और संवत् १९४० का चौमासा, यहा किया और चौमासेमें " वीशस्थानकपूजा " बनाई इस चौमासेमें श्रीआनंदविजयजीके बडे शिष्य, " श्रीलक्ष्मीविजयजी (विश्नचंदजी) " बहुत बिमार होगये बीकानेरसें शनै शनै विहार करके श्री आनंदविजयजी, श्रीलक्ष्मीविजयजी आदि शिष्यों सहित, शहर पालीमें पधारे यहा श्रीलक्ष्मीविजयजी स्वर्गवास हुये ! अफसोस ! ! महाराजजीकी बडी बांह टूट गई ! ऐसे लायक विनयवान् पंडित शिष्यके स्वर्गवास होनेसें सब श्री संघको बडा खेद हुआ परंतु श्रीआनंदविजयजीको देखके हौंसला किया कि, फिकर नहीं एक न एक दिन तो मरनाही था अस्तु ! अब परमेश्वरसें यही प्रार्थना है कि हमारे शिरपर, श्रीआनंदविजयजी महाराजजी के उत्र छाया, चिरकाल बनी रहे !

श्रीआनंदविजयजी पाली शहरसें विहार करके पंचतीर्थी, आबुजी आदिकी यात्रा करते हुए शहर अहमदाबाद पधारे और बडौदाके राज्यमें गाम डभोईके रहनेवाले मोतीचंदको दीक्षा देके " श्री हेमविजयजी " नाम रखा तथा " उद्योतविजयजी " आदिको, श्री गणिजी महाराजजीके पास बडी दीक्षा दिलुवाई और संवत् १९४१ का चौमासा, वहांही किया चौमासेमें " आवश्यकसूत्र " बाईस हजार, जो प्रथम संवत् १९३७ के चौमासेमें वाचना प्रारंभ किया था, अधूरा रहनेसें, अब भी व्याख्यान उसहीका करते रहें, और भावनाधिकारमें " श्रीधर्मरत्न प्रकरण " सटीक वाचते रहे जिसको सुननेके वास्ते अनुमान (७०००) श्रावक श्राविका आतेथे इस चौमासेमें श्री जैनधर्मका बडाही उद्योत हुआ, सेंकडोही अट्ठाई महोत्सव हुवे, पूजा प्रभावना भी बहुत हुई, अनेक प्रकारकी तपस्या भी हुई, स्वधर्मीवात्सल्य भी बहुत हुये एक दिन श्रीसंघने सलाह करके, श्रीमहाराजजी साहिब श्रीआनंदविजयजीसें प्रार्थना करिकि, " आपने देशपंजाबमें जो नये श्रावक बनाये हें, तिनको हम मदद देनी चाहाते हैं," तब श्री महाराजजीने कहा कि, " तुमारी मरजी तुमारा धर्मही है के, अपने स्वधर्मियोंको मदद देनी " बाद श्रीसंघने बहुत जिन प्रतिमा धातुकी, और पाषाणकी, देशपंजाबके शहर " अंबाला, " " लुधीआना, " " कोटला, " " जिरा, " " जालंधर, " " नीकोदर, " " हुशीआरपुर, " " गुरुका झंडियाला, " " पट्टी, " " अमृतसर, " " नारोवाल, " " सनखतरा, " " गुजरांवाला, " वगैरह बहुत शहरोंमें श्रावकोंके पूजने वास्ते भेजी तथा इस चौमासेमें, श्रीआनंदविजयजीने, सम्यक्त्वसार पुस्तकका उत्तर लिखके पूर्ण किया जो " सम्यक्त्वशल्योद्धार " के नामसें भावनगरकी सभाके तरफसें छप गया है जिसमें भावनगरकी सभाने भी, अपने तरफसें कितनाक हिस्सा बढाया है इस ग्रंथके वाचनेसें ढुंढकमत, और सनातन जैन धर्ममें, कितना फरक है, मालुम होजाताहै परंतु कितनेक शब्द सभाके तरफसे कठिन पडनेसें बहुत ढुंढक लोक वाचते नहीं है, तथा गुजरात देशकी बोलीमें होनेसें, कितनेकको ठीक ठीक

समझ भी नहीं आती है, इस वास्ते कितनेक लोगोंका इरादा है कि, इसको जिस ढबपर श्रीआनंदविजयजी महाराजजीने अपनी कलमसे प्रथम लिखा है, उसही ढबपर हिंदिभाषामें छपवाना चाहिये जिससे, बहुत फायदा होनेका संभव है, सो प्रायः थोडेही कालमें यकीन है, छप जायगा चौमासे बाद श्रीआनंदविजयजी वगैरह साधु अहमदाबादसे विहार करके, श्री शत्रुंजय तीर्थकी यात्रा करनेको पधारे एक महीना " पालीताणा " शहेरमें रहे, और निरंतर यात्रा करके अपना मनुष्यदेह, पावन करते रहे इस श्री शत्रुंजय तीर्थ ऊपरसे " शेठ प्रेमाभाई," "शेठ नरशी केशवजी, " " शेठ वीरचंद दीपचंद " वगैरह देश गुजरातके सबकी मददसे बडे अद्भुत सुन्दर, और देखनेसें चित्त शांत होवे, ऐसे (३५) जिनबिंब देश पंजाबमें भेजे गये इन जिन प्रतिमाके आनेसे देश पंजाबमें जैनधर्मका बडा उद्योत हुआ, और इन प्रतिमाके रखनेके वास्ते पंजाबके श्रावकोंको अपने २ शहेरमें जैनमंदिर बनवानेका ख्याल आया, और जिन मंदिर बनने शुरु हुये पालीताणासे विहार करके ' शिहोर, वरतेज, भावनगर" होकर "गोघा बंदर" में श्रीआनंदविजयजी पधारे तहां " श्री नवखंडा पार्श्वनाथ " की यात्रा करके " वला, बोटाद" होकर " लिंबडी " शहेर पधारे, जहां पांचसो घर श्रावकोंके, और तीन जिन मंदिर है, श्री महाराजजीके पधारनेकी खुशीमें श्रावकोंने समवशरणकी रचना वगैरह महोच्छव किये यहांके राजा साहिबने भी, श्रीआनंदविजयजी (आत्मारामजी) महाराजजीके दर्शन पाये, और बातचीत करके बडेही आनंदको प्राप्त हुये एक महीनेबाद लींबडीसे विहार करके वढवाण धंधूका, धोलेरा होकर शहेर खंभात बंदर पधारे, जहां अनुमान एक हजार घर श्रावकोंके और दोसो जिन मंदिर है यहां बहुत पुराने ताडपत्रोंपर लिखे पुस्तक भंडार देखे, कईएक शास्त्रोंका उतारा भी, करवा लिया तथा पुस्तकादिककी मदद ठीक ठीक मिलनेसे " अज्ञान तिमिर भास्कर" नामा ग्रंथ जो शहेर अंबालामें बनाना सुरु किया था, यहां समाप्त किया, जो भावनगरकी "जैन ज्ञान हितेच्छु" सभाके तरफसे छपवाकर प्रसिद्ध किया गयाहै जिसके पहिले हिस्सेमें, वेदादि शास्त्रोंमें यज्ञादि धर्मका जैसा विचार है,तैसा सप्रमाण दिखलाया है, और दूसरे हिस्सेमें,जैनमतका संक्षेपसें वर्णन कियाहै और इस जगा "श्रीस्तंभन पार्श्वनाथजी" की, जो कि बडी प्राचीन प्रतिमा है, यात्रा करके बहुत खुश हुए खंभातसे विहार करके " जंबुसर " होकर "भरुच बंदर" पधारे, यहां अनुमान अढाईसें घर श्रावकोंके, और छ मंदिर बडे खुबसुरत है, और वीसमे तीर्थकर " श्रीमुनिसुव्रत स्वामी " की, बहुत प्राचीन मूर्त्तिके दर्शन करके अत्यानंद प्राप्त हुये भरुचसें विहार करके श्रीआनंदविजयजी, " सुरत बंदर " पधारे श्रावक लोकोंने बडे महोत्सवसे शहरमें प्रवेश कराया ऐसा प्रवेश महोत्सव हुवा कि, उसको देखके सुरतके वासी बडे बडे बुजर्ग जैन और अन्यमति भी, कहने लगे कि, " ऐसा आदर पूर्वक प्रवेश महोत्सव आजतक हमने किसीका भी नहीं देखाहै " श्रावकोंकी अतीव प्रार्थना होनेसे, संवत् १९४२ का चौमासा, सुरत शहेरमें किया चौमासेमें श्रावकोंकी अभिलाषापूर्वक, " श्रीआचारांग सूत्र" सटीक, और " धर्मरत्न प्रकरण " सटीक, पर्षदामें सुनाते रहे हजारों श्रावक श्राविका तिस वचनामृतको पीकर, मिथ्यात्व विषको दूर करते रहे, और अनेक प्रकारके उद्यापन, समवसरण रचना, अट्ठाई महोच्छव वगैरह महोत्सव करके, श्रीजैनधर्मका उद्योत किया इस चौमासामें श्रीआनंदविजयजीके धर्मोपदेशसे श्रावक लो-

कोंको ऐसा रंग चढा था के,जिससे अनुमान(७५०००)रूपैये धर्ममें खरच किये यहा रहकर श्रीआनदविजयजीने "जैनमत वृक्ष बनाया तथा इस बखत सुरत शहरमें "हुकममुनि" नामा एक "जैनाभास' साधु रहते थे, तिसने "अध्यात्मसार 'नामा एक ग्रथ बनाकर प्रसिद्ध किया था परतु वह ग्रथ जैनागमकी शैलिसे तद्दन विरुद्ध होनेसे, बहुत श्रावकोंके मनमें विपरीत श्रद्धान प्रवेश कर गया था इसवास्ते श्रीआनदविजयजी(आत्मारामजी)ने, अध्यात्मसारमेंसे (१४) प्रश्न निकाले, और हुकम मुनिको श्रावक मारफत खबर दिलवाई कि, "तुह्मारा बनाया अध्यात्मसार ग्रथ जो जैनमत से विरुद्ध है उसमेंसे निकाले यह(१४)प्रश्नका उत्तर देवो ' तिसके उत्तरमें हुकममुनिके तरफसे सतोषकारक जवाब नहीं मिलनेसे,सुरतके श्रीसघने वे(१४) प्रश्न और श्रीआनदविजयजीके और हुकममुनिके दिये उत्तर " धी जैन एसोसिएशन आफ् इन्डीया ' (भारतवर्षीय जैनसमाज) ऊपर भेजेगये वे सर्व प्रश्न, वहासे हिंदुस्थानके जैनमतके ज्ञाता साक्षर पडित जैन साधु यतियोंके पास निर्णय करनेके वास्ते जगे२ भेजे गये, तिन सर्वने पक्षपात रहित होकर,जैन शैलीके अनुसार अपना मतव्य जाहिर किया कि, "हुकम मुनिके बनाये ग्रथ अध्यात्मसारमेंसे जो (१४) प्रश्न श्रीआनदविजयजी (आत्मारामजी) ने निकाले हैं, वे धर्मसे विरुद्ध, और सशयसें भरे हुए हैं, तथा श्रीआनदविजयजीके दिये उत्तर जैन शास्त्रानुसार है, और हुकममुनिके दिये उत्तर जैन शास्त्रसे विरुद्ध है "देशावरोंसे जैन पडितोंके पूर्वोक्त अभिप्रायोंको,जैन एशोसिएशन आफ इडीयाने, अपनी सुरत ब्रेंच सभामें, सर्व श्रीसघको एकत्र करके, सवत् १९४२ का मगसर सुदि १४ के दिन, वाचकर सुना दिये, और सभामें आये हुये हुकममुनिके सेवकोंको खबर दी कि, "सर्व जैन पडितोंके अभिप्राय मुजिब, हुकममुनिका बनाया अध्यात्मसार ग्रथ, अप्रमाणिक सिद्ध हुआ है, जिससें हम भी तिस ग्रथको, जैन शैलीसे विरुद्ध मानके, हुकममुनिको खबर देते हैं के उनको अपने ग्रथमेंसें असत्य लिखानका सुधारा करना चाहिये, अथवा तिस लिखानको निकाल देना चाहिये जबतक इन दोनों बातोंमेंसे एक भी बात वे करेंगे नहीं, तबतक हम तिस पूर्वोक्त ग्रथको प्रमाणिक नहीं मानेंगे ' ऐसा निर्णय करके सभा विसर्जन हुई थी चौमासेबाद भी कितनाक समय तक पूर्वोक्त कारणसे श्रीआनदविजयजीका रहना सुरत शहरमेंही हुआ इस समयमें एक ढुढक साधु जिसका नाम " रायचद " था, और जिसने सवत् १९३९ में पोरबदर शहेरमें फागण वदि १३ को देवजीरिख नामा ढुढक साधुके पास दीक्षा ली थी, परतु सम्यक्त्व शल्योद्धार ग्रथके देखनेसें, ढुढकमतसें अनास्था होनेसें सवत् १९४२ आश्विन वदि १२ के दिन ढुढकमतको छोडके श्रीआनदविजयजी (आत्मारामजी) के पास आकर, सवत् १९४२ मगसर वदि ५ के दिन, शुद्ध सनातन जैनधर्मको अगीकार किया, और दीक्षा लेकर जैनमतका साधु हुआ, जिसका नाम श्रीआनदविजयजीने "श्रीराजविजयजी" रखा

सुरत शहेरसें विहार करके श्रीआनदविजयजी "भरुच" "मियागाम" "डभोई" होकर शहेर "बडोदा" में पधारे और "कस्तूरचद ' मारवाडी सुरत निवासीको दीक्षा देकर "कुवरविजय ' नाम रखा शहेर बडोदामें " श्रीशत्रुजय " तीर्थ सबधी बहुत मुदतकी तकरारका फैंसला होनेकी खुश खबर मिलनेसें, और कितनेक श्रावकोंकी प्रेरणासें, इस पवित्र तीर्थकी छायामें (पालिताणामें) चौमासा करनेकी श्रीआनदविजयजीकी इच्छा हुई इसवास्ते

बडोदेसें विहार किया. और "छाणी" "उमेटा" "बोरसद" "पेटलाद" वगैरह शहेरो विचरते हुये, "मातर" गाममें आये. यहा पाचवें तीर्थंकर "श्रीसुमतिनाथ" जो "साचे देव" के नामसें गुजरात देशमें प्रसिद्ध हैं, तिनके अपूर्व दर्शन पाये और इन देवके समक्षही, "पाटन" शहेरके रहनेवाले, "लेहराभाई" जिसकी उमर अनुमान अठारह वर्षकी थी तिसको दीक्षा देकर "श्रीसपतविजयजी" नाम दिया बाद विहार करके "खेडा" "अहमदावाद" "कोठ" 'लींबडी' "बोटाद "वला" वगैरह शहेरोंमें विचरते हुये, "पालीताणा" में पधारे यहा श्रीतीर्थाधिराजकी यात्रा करके, सुरत निवासी "माणेकचद" ओसवालके लडकेको दीक्षा देकर "श्रीमाणिक्यविजयजी" नाम रखा और सवत् १९४३ का चौमासा, चौवीस साधुओंके साथ, श्रीआनदविजयजीने पालीताणामें किया इन महात्माका चौमासा सुनकर सुरत निवासी शेठ "कल्याणभाई शकरदास" वगैरह, भरुच निवासी शेठ "अनूपचद मलुकचद" वगैरह, वडोदा निवासी झवेरी "गोकलभाई दुल्लभदास" वगैरह, जील्हा खानदेश-मालेगाव धूलीया निवासी शेठ "सखाराम दुल्लभदास" वगैरह, खभायतके रहनेवाले शेठ "पोपटभाई अमरचद" वगैरह, बहुत शहेरोंके अनुमान पाचसो श्रावक श्राविका, अपना सासारिक कार्य सब छोडके, जगम और स्थावर दोनोंही तीर्थोंकी युगपत् सेवा करनेका इरादा करके, पालिताणेमेंही आके चौमासा रहे इस चौमासेमें श्रीआनदविजयजीने श्रावकोंके उत्साहानुसार, "श्रीभगवतीसूत्र सटीक" तथा "उपदेशपद सटीक" व्याख्यानमें सुनाया

चौमासेकी समाप्ति समयमें, अर्थात् कार्त्तिकी पूर्णमासी ऊपर, यात्रा करनेके वास्ते बहुत लोकोंका मेला हुआथा. जिसमें कलकत्तावाले बाबु राय बहादुर "बद्रीदासजी" भी आये हुये थे तथा "गुजरात" "काठियावाड" "कच्छ" "मारवाड" "पजाब" "पूर्व" वगैरह देशोंके मुख्य शहेरोंमेंसें बहुत सभावित गृहस्थ भी आये हुयेथे अनुमान (३५०००) आदमी यात्राके वास्ते आये हुयेथे ऐसे शुभ प्रसगमें, महाराज श्रीआनदविजयजी (आत्मारामजी) की अपूर्व विद्वत्ता, और बुद्धि चातुर्यतासें प्रसन्न होकर, सर्व श्रीसघने मिलके, उनको "सूरि" पद देनेका निश्चय किया और सवत् १९४३ मगसर वदि (गुजराती कार्त्तिक वदि) पचमी पूर्णा तीथिको, पालीताणामें शेठ नरशी केशवजीकी धर्मशालामें, श्रीचतुर्विध सघ समुदायने मिलके, पडित मुनि श्रीआत्मारामजी (आनदविजयजी) को "सूरि पद" प्रदान करके, "श्रीमद्विजयानदसूरि" नाम स्थापन करके, अपने आपको पूर्ण किया इस दिनसें लेकर सर्व साधु, और श्रावक वगैरह, कागल पत्रमें "पूज्यपाद श्रीश्रीश्री १००८ श्रीमद्विजयानद सूरि" यह नाम लिखने लगे, और इस पूर्वोक्त नामसेही मानने लगे शासन नायक श्रीमन्महावीर स्वामिसे श्रीमद्विजयानद सूरि ७२ मे पट्टधर हुये, सो इस माफक हैं

शासन नायक श्रीमन्महावीर स्वामी—

(१) श्री सुधर्मा स्वामी
(२) श्री जबू स्वामी
(३) श्री प्रभवा स्वामी
(४) श्री शय्यभव सूरि
(५) श्री यशोभद्र सूरि
(६) { श्री सभूतविजयजी तथा
श्री भद्रबाहु स्वामी }

(७) श्री स्थूलभद्र स्वामी
(८) श्री आर्यसुहस्ति सूरि
(९) †श्री सुस्थित सूरि तथा श्री सुप्रतिबुद्ध सूरि
(१०) श्री इन्द्रदिन्न सूरि
(११) श्री दिन्न सूरि
(१२) श्री सिंहगिरि सूरि
(१३) श्री वज्र स्वामी
(१४) श्री वज्रसेन सूरि
(१५) *श्री चन्द्र सूरि
(१६) —श्री सामंतभद्र सूरि
(१७) श्री वृद्धदेव सूरि
(१८) श्री प्रद्योतन सूरि
(१९) श्री मानदेव सूरि
(२०) श्री मानतुंग सूरि
(२१) श्री वीर सूरि
(२२) श्री जयदेव सूरि
(२३) श्री देवानंद सूरि
(२४) श्री विक्रम सूरि
(२५) श्री नरसिंह सूरि
(२६) श्री समुद्र सूरि
(२७) श्री मानदेव सूरि
(२८) श्री विबुधप्रभ सूरि
(२९) श्री जयानंद सूरि
(३०) श्री रविप्रभ सूरि
(३१) श्री यशोदेव सूरि
(३२) श्री प्रद्युम्न सूरि
(३३) श्री मानदेव सूरि
(३४) श्री विमलचंद्र सूरि
(३५) श्री उद्योतन सूरि
(३६) +श्री सर्वदेव सूरि
(३७) श्री देव सूरि
(३८) श्री सर्वदेव सूरि
(३९) श्री यशोभद्र सूरि तथा श्री नेमिचंद्र सूरि
(४०) श्री मुनिचंद्र सूरि
(४१) श्री अजितदेव सूरि
(४२) श्री विजयसिंह सूरि
(४३) श्री सोमप्रभ सूरि तथा श्री मणिरत्न सूरि
(४४) ×श्री जगच्चंद्र सूरि
(४५) श्री देवेंद्र सूरि
(४६) श्री धर्मघोष सूरि
(४७) श्री सोमप्रभ सूरि
(४८) श्री सोमतिलक सूरि
(४९) श्री देवसुंदर सूरि
(५०) श्री सोमसुंदर सूरि
(५१) श्री मुनिसुंदर सूरि
(५२) श्री रत्नशेखर सूरि
(५३) श्री लक्ष्मीसागर सूरि
(५४) श्री सुमतिसाधु सूरि
(५५) श्री हेमविमल सूरि
(५६) श्री आनंदविमल सूरि
(५७) श्री विजयदान सूरि
(५८) श्री हीरविजय सूरि

---

† इन्होंने सूरि मंत्रका कोटि जाप किया,इस वास्ते निर्ग्रंथ गच्छका "कौटिक गच्छ" नाम प्रसिद्ध हुआ
* इन्होंसें कौटिक गच्छका नाम 'चन्द्र गच्छ" पडा
—इन्होंसें "वनवासी गच्छ" प्रसिद्ध हुआ
+इन्होंसें निर्ग्रंथ गच्छका पांचमा नाम "वडगच्छ" पडा
×इन्होंसें वडगच्छका नाम तपगच्छ प्रसिद्ध हुआ

(५९)	श्री विजयसेन सूरि	(६०)	श्री विजयदेव सूरि
(६१)	श्री विजयसिंह सूरि	(६२)	श्री सत्यविजय गणि
(६३)	श्री कपूरविजय गणि	(६४)	श्री क्षमाविजय गणि
(६५)	श्री जिनविजय गणि	(३६)	श्री उत्तमविजय गणि
(६७)	श्री पद्मविजय गणि	(६८)	श्री रूपविजय गणि
(६९)	श्री कीर्त्तिविजय गणि	(७०)	श्री कस्तूरविजय गणि
(७१)	श्री मणिविजय गणि	(७२)	श्री बुद्धिविजय गणि (बूटेरायजी)

(७३) § श्री विजयानद सूरि (श्री आत्मारामजी)—

पालीताणाके चौमासेमें श्रीआनद विजयजी महाराजने श्रीतीर्थाधिराजको भाव पूजारूप पुष्प भेट करनेके वास्ते, "अष्टप्रकारी पूजा" बनाई

चौमासे बाद कितनेक दिन यात्राके निमित्त रहकर, विहार करके " सीहोर, वला, बोटाद, लींबडी, वढवाण " होकर " लखतर " आये इस राज्यका दिवान "फूलचद कमलसी" श्रावक होनेसें, श्रीमद्विजयानद सूरिका आगमन राजासाहिबको भी मालुम हुआ, और वे भी श्रीमहाराजजी साहिबके पास आकर धर्मकी चर्चा करते रहे राजा साहिबने अपना दिल धर्मके तरफ लगा हुआ होनेसे, श्रीमहाराजजी साहिबको रहनेके वास्ते प्रार्थना करी परतु श्रावक समुदायके घर थोडे होनेसे, वहा ज्यादा रहना, श्रीमहाराजजी साहिबने ठीक न समझा लखतरसे विहार करके " वीरमगाम, रामपुरा " होकर " भोयणी " गाममें आये, और श्रीमल्लीनाथ स्वामीके दर्शन पाये बाद विहार करके " माडल, दशाडा, पचासर, " होकर " शखेश्वर " गाममें "श्रीशखेश्वर पार्श्वनाथजी " की यात्रा करके, चडावल, समनी, गोचीनार होकर शहेर "राधनपुर " जहा अनुमान पदरासो घर श्रावकोंके और (२५) मदिर है, पधारे यहा वडोदे शहेरके रहनेवाले " छगनलाल " नामा लडकेको, श्रावकोंका अत्याग्रह होनेसेही सवत् १९४४ वैशाख सुदि तेरस बुधवारके दिन, दीक्षा दी, और " श्रीवल्लभ विजयजी " नाम रखा बाद श्रीमद्विजयानद सूरि, यहासे विहार करके "उण, जामपुर, उदरा, " वगैरह गामोंमें होकर शहेर "पाटण में जहा अनुमान अढाई हजार श्रावकोंके घर, और (५००) जिन मदिर है, पधारे, और "श्री पचासरा पार्श्वनाथ " की यात्रा की यह मूर्त्ति " वनराज चावडा " ने, श्री शीलगुण सूरिके पास प्रतिष्ठा करायके, स्थापन करीथी, इस मदिरमें वनराज चावडेकी भी मूर्त्ति है इस शहरमें पुराणे जैन पुस्तकोंके भडार देखके, कई पुस्तकोंके उतारे कराय लिये अनुमान एक महिना रहकर शहेर राधनपुरके श्रावकोंके आग्रहसे पाटण शहेरसें विहार करके,पीछे राधनपुरमें पधारे, और सवत् १९४८ अषाट सुदि दशमी बृहस्पति वारको एक लडकेको दीक्षा दी, जिसका नाम श्री " भक्ति विजयजी " रखा—जो अब गुण विजयके नामसे कहाताहे सवत् १९८४ का चौमासा, यहाही किया, इस चौमासेमें श्रीमद्विजयानद सूरिने व्याख्यान नहीं किया,

§ श्री मुक्तिविजयजी गणि प्रसिद्ध नाम मूलचदजी महाराजजी भी श्री बुद्धिविजयजी गणि महाराजजीके पाट उपर हुए हैं अर्थात् श्री मूलचदजी और श्री आत्मारामजी दोनोंही श्री बूटेरायजी महाराजजीके पाट ऊपर हुये, तथा किसी पट्टावलिमें श्री विजयदेव सूरि और श्री विजयसिंह सूरि दोनों एकही पट्ट ऊपर गिने हैं, तो उस मुजब श्रीमद्विजयानद सूरि बहत्तर (७२) मे पट्ट ऊपर जानने

क्योंकि, आखमें मोतीया उतर रहाथा तथापि श्रावक लोकोंके आग्रहसे "चतुर्थ स्तुति निर्णय" नामा पुस्तक बनाया, जो छपकर प्रसिद्ध होगयाहै पूर्वोक्त कारणसें चौमासेमें व्याख्यान, "श्री हर्ष-विजयजी" महाराज करते रहे, और श्री सूयगडाग सूत्र, तथा धर्मरत्न प्रकरण सटीक सुनाते रहे

चौमासे वाद श्रीमद्विजयानद सूरि, राधनपुरसें विहार करके शखेश्वर पार्श्वनाथजीकी, तथा भोयणीमें श्री मल्लिनाथजीकी यात्रा करके, कडी शहेर होकर शहेर अहमदावादमें पधारे यहा जुनागढवाले प्रसिद्ध डाक्टर "त्रिभोवनदास मोतीचद शाह" जो श्रीमहाराजजी साहिबके परम भक्त श्रावक हैं, और जिनोंने श्री महाराज आत्मारामजीकेही उपदेशसें, ढुढकमतको त्याग करके, सनातन जैनधर्म अगीकार कियाहै, तिनोंने महाराज श्रीआत्मारामजीकी आखमेंसे मोतीया निकाला बाद श्रीआत्मारामजी, अहमदावादमें गोपाल नामा श्रावकको, दीक्षा देकर "श्रीज्ञानविजयजी" नाम स्थापन करके, तदनतर विहार करके "मेहसाणा" जहा पाचसो घर श्रावकोंके, और दस जैनमदिर है, पधारे और सवत् १९४५ का चौमासा, वहा किया यहा भी डाक्टरकी मनाई होनेसें श्रीमहाराज आत्मारामजीने व्याख्यान नहीं किया, किंतु " श्री हर्ष विजयजी महाराज" "श्रीभगवती सूत्र" सटीक, तथा "धर्मरत्नप्रकरण" सटीक सुनाते रहे चौमासेमें महोत्सवादि बहुत धर्म कार्य समयानुसार हुवे परतु एक कार्य बहुतही अद्भुत यह हुआ कि, दो हजार रुपैये, पुराने पुस्तकोंके उद्धारमें लगाये, और आगेके वास्ते भी श्रावकोंने ज्ञान सबधी बदोबस्त कर रखा

इस चौमासेमें कलकत्ताकी "रोयल ऐशियाटिक सोसाईटी" के ऑनररी सेक्रेटरी डाक्टर (भट्ट-पडित) "ए एफ रुडॉल्फ् होरनल" साहिबने, पत्रद्वारा शा० मगनलाल दलपतराम मारफत, महाराजजी श्रीमद्विजयानद सूरि (आत्मारामजी) को धर्म सबधी कितनेक प्रश्न लिख भेजे थे, तिनके जवाब श्री महाराज आत्मारामजीने, शास्त्रानुसार, ऐसी चतुराईसें लिख भेजे, जिनको वाचके पूर्वोक्त साहिब, बहुत खुश हुए, और महाराज श्रीका बहुत उपकार मानने लगे पूर्वोक्त अग्रेज विद्वान साथ, प्राय बहुत प्रश्नोत्तर हुए, जे बहुतसे भावनगरके "जैन धर्म प्रकाश" चोपान्यामें छपगये हैं तथा पूर्वोक्त साहिबने, "उपाशक दशाग" नामा जैन पुस्तक अग्रेजी तरजुमाके साथ छपवाया है, जिसमे श्री महाराजजीका उपकार मानके, बडी भक्तिके सूचक, चार श्लोकोंमें श्रीमहाराजजीका गुणानुवाद करके, तथा अग्रेजी लेखमें भी बहुत स्तुति लिखकर वह पुस्तक महाराजजीश्रीको अर्पण कियाहै [†] श्री महाराज आत्मारामजीने अहमदावाद निवासी

† अर्पण पत्रिकाके वे चार श्लोक येह है

उपजाती छद–दुराग्रहध्वान्तविभेदभानो। हितोपदेशामृतसिंधुचित्त ॥
सदेहसदोहनिरासकारिन्। जिनोक्तधर्मस्य धुरधरोसि ॥ १ ॥

आर्या———अज्ञानतिमिरभास्करमज्ञाननिवृत्तये सहृदयानाम् ॥
आर्हततत्वादर्शग्रथमपरमपि भवानकृत ॥ २ ॥

अनुष्टुप् छद–आनद विजय श्रीमन्नात्माराम महामुने ॥
मदीयनिखिलप्रश्नव्याख्यात शास्त्रपारग ॥ ३ ॥
कृतज्ञताचिन्हमिद ग्रथसस्करण कृतिन् ॥
यत्नसपादित तुभ्य श्रद्धयोत्सृज्यते मया ॥ ४ ॥

शेठ " गीरधरलाल हीराभाई, " जो उस वखत राज्य पालनपुरके न्यायाधीश थे, तिनकी प्रेरणासे छोटी उमरके बालकोंको भी प्रायः धर्मका स्वरूप मालुम होवे, उस ढबपर, " श्रीजैन प्रश्नोत्तरावली " नामा ग्रंथ प्रारंभ किया ऐसे आनंदसें चतुर्मास पूर्ण करके श्रीमहाराजजी साहिब विहार करके तारंगाजी वगैरह तीर्थकी यात्रा करते हुये, शहेर "पालनपुर" में पधारे और " जैन प्रश्नोत्तरावलि " ग्रंथ पूर्ण करके पूर्वोक्त महाशयको दिया जो उन्होंने छपवाकर प्रसिद्ध किया " वर्धमान " दशाडा निवासी, " वाडीलाल " शहेर पाटन निवासी वगैरह सात जनोंको दीक्षा देकर यह नाम रखे (१) श्रीशुभविजयजी (२) श्रीलब्धिविजयजी (३) श्रीमानविजयजी (४) श्रीजशविजयजी (५) श्रीमोतिविजयजी (६) श्रीचंद्रविजयजी (जिसका नाम इस समय " श्रीदानविजयजी " कहा जाताहै) (७) श्रीरामविजयजी ऐसे पांच वर्षमें गुजरात देशमें श्रीजैनधर्मका बहुत उद्योत किया कई भव्य जीवोंको प्रव्रज्यारूप नावमें बिठाकर, संसार समुद्रसें पार लंघाये हजाराही श्रावकोंने व्रत, नियम, प्रत्याख्यान, अंगीकार किये तथा शब्दांभोनिधि, गंधहस्तिमहाभाष्यवृत्ति, (विशेषावश्यक) वादार्णव सम्मतितर्क, प्रमाण-प्रमेयमार्तंड, खंडखाद्य वीरस्तव, गुरुतत्त्व निर्णय, नयोपदेश अमृत, तरंगिणी वृत्ति, पंचाशक सूत्रवृत्ति, अलंकार चूडामणि, काव्यप्रकाश, धर्मसंग्रहणी मूलशुद्धि, दर्शनशुद्धि, जीवानुशासन वृत्ति, नवपद प्रकरण, शास्त्रवार्त्ता समुच्चय, ज्योतिर्विदाभरण, अंगविद्या, वगैरह सैंकडों शास्त्र लिखवाके, अभ्यास किया ऐसे ऐसे अपूर्व ग्रंथोंको लिखवायके उद्धार कराया, जो हर एक ठिकाने मिलने मुश्कल होवे

पालनपुरसे विहार करके पंजाब देशके श्रावकोंको धर्मोपदेश द्वारा दृढ करनेके वास्ते, " आबुजी, सीरोही, पंचतीर्थी " होकर शहर " पाली " में पधारे यहां मुनि वल्लभविजयजी आदि नवीन साधुओंको योगोद्वहन करायके पुनःसंस्काररूप छेदोपस्थापनीय चारित्र प्रदान किया बाद पालीसे विहार करके श्रीमहाराजजी साहिब, शहेर " जोधपुर " में पधारे,और संवत् १९४६ का चौमासा वहां किया श्रावकोंकी अभिलाषा पूर्वक व्याख्यानमें श्रीमान् श्री " हेमचंद्र सूरि " विरचित, श्री " योगशास्त्र " वाचते रहे इस चौमासेमें श्रीमहाराजजी साहिबको युरोपमें छपा हुआ " ऋग्वेद " का पुस्तक, " डॉक्टर ए एफ रुडॉल्फ हॉरनल " साहिबके जरियेसे ब्रीटीश सरकारकी तरफसे, आबुके " एजंट टु धी गवरनर जनरल" साहिबकी मारफत भेट आया

चौमासे बाद महाराजजी श्री जोधपुरसे विहार करके " अजमेर " पधारे, जहां समवसरणकी रचना हुई, धर्मका अच्छा उद्योत हुआ बाद "जयपुर, अलवर" होकर शहेर दिल्लीमें पधारे यहां इनको, अपने रत्न समान शिष्य शिष्य, " श्री हर्ष विजयजी " का वियोग हुआ, अर्थात् श्री हर्ष

भावार्थ—दुराग्रह रूपी ध्वान्त अर्थात् अंधकारको नाश करनेमें सूर्य समान और हितकारी उपदेश रूप अमृत समुद्र समान चित्तवाले, संदेहका समूहसे उडानेवाले, जैन धर्मके धुरके धारण करनेवाले आप हो १

सज्जन पुरुषोंकी अज्ञानकी निवृत्तिके अर्थ आपने " अज्ञान तिमिर भास्कर" और "जैन तत्वादर्श" नाम ग्रंथ रचे, हैं २

महामुनि श्रीमन् आनंदविजयजी (आत्मारामजी) ने मेरे संपूर्ण प्रश्नोंकी व्याख्या की, इस लिये हे मुनि! आप शास्त्रमें पूर्ण हो ३

यत्नसे संपादित और संस्कार किया हुवा कृतज्ञताका चिन्ह रूप यह ग्रंथ श्रद्धा पूर्वक आपको अर्पण करताहूं ४

विजयजी स्वर्गवास हुए दिल्लीसे विहार करके बिनौली, बडौत वगैरह होकर शहेर अंबालामें पधारे यहा "गोविंद" और "गणेशी," नामा दो ढुढक साधु, दूसरे साधुओंसे लडके, संवेगमत अंगीकार करनेके वास्ते, श्रीमहाराजजी साहिबके पास आकर, प्रार्थना करने लगे तब श्री महाराजजी साहिबने कहा कि, " हाल तुम कमसे कम छ महिने तक हमारे साथ इसही (ढुढक) वेषमें रहो, और संवेगमतकी क्रियाका अभ्यास करो, पीछे तुमको रुचे तो अंगीकार करना, अन्यथा तुमारी मरजी " यह सुनकर कितनेक श्रावकोंकी, और साधुओंकी अरजसें श्रीमहाराजजीकी मरजी नहीं भी थी तो भी, संवेगमतकी दीक्षा देनी पडी परंतु अंतमें दोनोंही, भ्रष्ट होगये इस वखत सब श्रावक, और साधुओंको, श्री महाराजजी साहिबका कहना याद आया सत्य है –"वृद्धोंका कहना, और आमलेका खाना, पीछेसें फायदा देता है " अंबालासें विहार करके शहेर लुधीयाना में पधारे, यहा कितनेही आर्यसमाजी वगैरह मतोंवाले लोक, निरंतर आते रहे, अच्छी तरह वार्चालाप होतारहा, निरुत्तर होकर जाते रहे जिसमेंसे एक ब्राह्मणका लडका " कृष्णचंद्र " नामा जो आर्य समाजकी सभामें भाषण दिया करताथा, महाराजजी साहिबके न्याय सहित उत्तर सुनकर, बहुत खुश हुआ, और यथार्थ धर्मका निर्णय करके गुरुमंत्र धारण करके, श्री महाराजजी साहिबका उपाशक होगया एक महीने बाद विहार करके " मालेर कोटले " पधारे, और संवत् १९४७ का चौमासा, वहा किया चौमासेमें " श्री आवश्यक सूत्र, " और " धर्मरत्न" सटीक वाचते रहे " गोंदामल्ल क्षत्रीय, जीवाभक्त, " वगैरह कितनेही भव्यजीवोंको सत्य धर्ममें लगाये चौमासे बाद विहार करके " रायका कोट, जीगरावा, जीरा " होकर " पट्टी " पधारे इस वखत पट्टीका स्वरूप बदल गया, अर्थात् प्रथम, आठ दशही घर श्रावकके थे, परंतु श्रीमहाराजजी साहिबके पधारनेसें, यथार्थ निर्णय करके अनुमान अस्सी (८०) घर सनातन धर्मके तरफ ख्याल करनेवाले होगये श्रावकोंने चौमासा करनेकी विनती करी परंतु चौमासा दूर होनेसे जवाब दिया गया कि, "चौमासेके वखत यदि क्षेत्र फरसना होवेगी तो यहाही करेंगे भाव तो है, परंतु अबतक निश्चयसें नही कह सकतेहैं क्योंकि, न जाने कल क्या होवेगा?" बाद पट्टीसें विहार करके कसूर होकर शहर अमृतसर पधारे यहाके श्रावकोंने नवीन श्रीजिन मंदिर, बनाया था, जिसमें "श्रीअरनाथ स्वामी" की प्रतिष्ठा संवत् १९४८ का वैशाख सुदि ७ बृहस्पति वारके दिन करी इस प्रतिष्ठाकी क्रिया करानेके वास्ते, शहेर बडोदेसें झवेरी गोकलभाई दुल्लभदास और शेठ नहानाभाई हरजीवनदास गांधीको बुलाये थे निर्विघ्नपणे प्रतिष्ठा महोत्सव पूर्ण होने बाद, श्रीमहाराजजी साहिब, विहार करके झडीयाले पधारे यहा सुरतके चौमासेमें श्री महाराजजी साहिबने जो " जैनमतवृक्ष " बनायाथा. और भीमसिंह माणेकने छपवाया था, सो बहुत अशुद्ध छपनेसे, पुनः परिश्रम करके शुद्ध तैयार करके, वाचनेवालोंको सुगमता होनेके वास्ते, पुस्तकके आकारमें तैयार किया, जो इस वखत छपगयाहै यहा पट्टीके श्रावकोंकी विनतीसें झंडियालेसें विहार करके, पट्टी पधारे और संवत् १९४८ का चौमासा पट्टीमें किया चौमासे पहिले कितनेक साधुओंकी प्रार्थनासे " चतुर्थ स्तुतिनिर्णय " भाग दूसरा बनाया और चौमासामें "नवपदपूजा" बनाई श्रीउत्तराध्ययनसूत्रवृत्ति कवलसंयमी, और श्री रत्नशेखर सूरि विरचित श्राद्ध प्रतिक्रमणवृत्ति अर्थदीपिका, वाचते रहे, सुनकर लोक बहुत दृढतर होगये सत्य है– " गुरुविना ज्ञान नही "

यतः ॥ विनागुरुभ्यो गुण नीरधिभ्यो, जानाति धर्मं न विचक्षणोपि ॥
आकर्ण्ण दीर्घोज्वल लोचनोपि, दीपं विना पश्यति नांधकारे ॥ १ ॥

भावार्थः—गुण समुद्र गुरुओंके विना, विचक्षण पुरुष भी, यथार्थ धर्मको नहीं जानता है, जैसे कानपर्यंत लंबे निर्मल नेत्रवाला भी पुरुष, अंधकारमें विना दीपकके, नहीं देखता है

चौमासे बाद, यहा संवत् १९४८ मगसर वदि पंचमीके दिन, गुजरात देशमें शहेर अहमदाबाद-के पास बलाद नामा गामके रहेनेवाले डाह्याभाईको दीक्षा दीनी, और "श्री विवेक विजयजी" नाम स्थापन करके,उसही दिन जीरेके श्रावकोंकी नूतन जिन मंदिरकी प्रतिष्ठा करानेकी विनती मंजूर करके, पट्टीसे विहार किया, और जीरा गाममें पधारे ‡

वडोदेसे पूर्वोक्त श्रावक आये, तथा भरुच निवासी शेठ 'अनूपचंद मलूकचंद" सपरिवार, नूतन स्फाटिक रत्नके जिनबिंबकी अंजनशिलाका (मंत्रपूर्वक संस्कार) करानेके वास्ते, आये और भी देश देशावरोंके बहुत लोक आये संवत् १९४८ मार्गशीर्ष सुदि एकादशी (मौन एका-दशी पर्व) के दिन, विधि पूर्वक नूतन बिंबको अंजन करके, "श्री चिंतामणि पार्श्वनाथजी"-को नवीन जिन मंदिरमें गद्दी ऊपर पधराये निर्विघ्नतासे महोत्सव पूर्ण होनेके बाद, जीरासे वि-हार करके नीकोदर, जालंधर, होकर शहेर हुशीआरपुरमें पधारे क्योंकि, यहाके रहनेवाले परम उपकारी शेठ लाला गुज्जरमल्लजीने नवीन जिन मंदिर, बनायाथा तिसकी प्रतिष्ठा करानेका मुहूर्त, साधना था यहा भी पूर्वोक्त वडोदेवाले गृहस्थही आये थे संवत् १९४८ माघ सुदि पंचमी (वसंत पंचमी) के दिन, निर्विघ्नतापूर्वक "श्री वासुपूज्य स्वामी"-को गद्दी ऊपर स्थापन करे बाद, आसपासके गामोंमे कितनाक समय व्यतीत करके

---

‡ जीराके श्रावकोंका आनंद यह स्तुतिसें जाहिर होताहै

(पंजाबी-हिंदी भाषामें)

चलो जी महाराज आए प्यारे, मात रूपदेवी जाए ॥ अचली ॥
भाग्य उनोंदे तेज भए जब, सूरि पदवी पाई ॥
नगर पट्टीमें किया चौमासा, लोक सभी तर जाई ॥ च० ॥ १ ॥
मुनी इग्यारह (११) संग उनोंदे, एकसें एक सवाए ॥
महेरवान जब होए सभीजी, जीरे नगर उठ धाए ॥ च० ॥ २ ॥
सुनी बात जब सब सेवकने, मनमें खुशी मनाई ॥
लगे शहेरमें बाजे वजन, ध्वजा निशान सजाए ॥ च० ॥ ३ ॥
धूमधामसे जले लैनको, महिमा कही न जाए ॥
एक दूसरा चले अगाडी, आगेही कदम उठाए ॥ च० ॥ ४ ॥
तीन कोशपर मिले सबी जा, चरणी सीस नमाए ॥
सीस उठाके दर्शन पाए, धन्य रूपदेवी जाए ॥ च० ॥ ५ ॥
सभी संघ होकर आनंदी, तरफ शहेरदी आए ॥
नगर विच परवेशही कीना, आन बैठक उतराए ॥ च० ॥ ६ ॥
चौंकी ऊपर आनही बैठे, मंगलिक आख सुनाए ॥
भरी सभामें दीनानाथ और, खुशीराम गुण गाए ॥ च० ॥ ७ ॥

सवत् १९४९ का चौमासा, शहेर "हुशीआरपुर" में जा किया चौमासामें श्री मानविजयोपाध्याय विरचित "धर्म सग्रह," तथा श्री सवतिलकसूरि विरचित "तत्त्व कौमुदी" नामा सम्यक्त्व सप्ततिका वृत्ति, वाचले रहे चौमासे बाद जमू शहेरके नजदीकमें रहनेवाले ब्राह्मणक पुत्र "कर्मचद" और बडोदेके रहनेवाले श्रावक' लल्लुभाई' को दीक्षा दीनी, जिनके नाम, अनुक्रमसे "कपूरविजयजी" और "लाभविजयजी" रखे बाद हुशीआरपुरसे विहार करके श्रीमद्विजायनदसूरि (आत्मारामजी) महाराज, जालधर होकर "वेरोवाल" पधारे यहा श्री महाराजजी साहिबको मुबाईकी "धी जैन एसोसीएशन ओफ इन्डिया" की मारफत, चीकागो (अमेरिका) का पत्र मिला तिसमें चीकागोमें होनेवाले विश्व प्रदर्शनके वखत देश परदेशके धर्मगुरुओंका जो बडा मेला (समाज—The Worlds Parliament of Religeons) होनेवाला था तिसमें पधारनेका आमत्रण करनेमें आयाथा, और सबसीडियरी कमीटिके मेम्बर मुकरर किए गएथे परतु अपनी साधुवृत्तिको खलल होवे इसवास्ते वहा नहीं जा सकनेसें, श्री महाराजजी साहिबने, चीकागोके पत्रकी नकल और चीकागोवालेकी मागणी मुजब अपना सक्षेपसे जीवन वृत्तान्त, तथा फोटो (छबि) वगेरह, मुबई श्रीसघको भेजवा दिये जिससें मुबईके श्रीसघने एक सभा करके "मि० वीरचद राघवजी गाधी, बी ए" (फोटो देखो) को जैन धर्मका प्रतिनिधि करके, चीकागो भेजनेका ठराव किया इस वखत महाराज श्रीका मुकाम, वेरोवालसे झडीआले होकर शहेर "अमृतसर" में हुआ था वहा मि० वीरचद राघवजीने आकर, श्रीमहाराजजी साहिबको प्रार्थना करी कि, "मुजको चीकागो जानेके वास्ते श्रीसघने फरमाया है, इसवास्ते मे श्रीसघकी आज्ञाको मस्तकोपरि धारण करके, आपकी सहायतासे चीकागो जानेको तैयार हुआहु, आप कृपा करके मुजको मदद तरीके थोडासा जैनधर्मसबधी ब्यान, लिखदेवें" इस प्रार्थनाको स्वीकार करके, श्रीमहाराजजी साहिबने, एक महिने तक परिश्रम उठाकर, एक लिखाण (निबध) तैयार करादिया §

अमृतसरसें विहार करके श्रीमहाराजजी साहिब, झडीआलामें पधारे, और सवत् १९५०

---

§ यह निबध चीकागो प्रश्नोत्तर के नामसे ग्रथके आकारमें छप रहाहै धर्मसमाजकी १७ दीनकी काररवाई और भाषणका जो हाल पुस्तकद्वारा चीकागोमें छपाहै, जिसमें महाराजजी श्रीकी तसबीर रखी गई है और उसके नीचे इस माफक लेख है

No man has so peculiarly identified himself with the interests of the Jain Community as 'Muni Atmaramji' He is one of the noble band sworn from the day of initiation to the end of life to work day and night for the high mission they have undertaken He is the high priest of the Jain Community and is recognized as the highest living "Authority on Jain religion and literature by oriental scholars

भावार्थ —जैसी विशेषतासे मुनी आत्मारामजीने अपने आपको जैनधर्ममें सयक्त वा लीन किया है ऐसे किसी महात्माने नहीं किया है सयम ग्रहण करनेके दिनसे जीवन पर्यंत जिन प्रशस्त महाशयोंने स्वाङ्गत श्रेष्ठ धर्ममें अहोरात्र रत वा सद्योद्योग रहनेका निश्चय वा नियम किया है उनमेंसें यह मुनिराज है जैनधर्मके आप परमाचार्य हैं, तथा प्राच्य वा पौरस्त्य विद्वान जैनमत और जैनशास्त्रोंके सबधमें विद्यमान जनोंमें सबसे उत्तम प्रमाण इस महर्षिको मानते हैं

का चौमासा, वहा किया चौमासेमें " सूयगडाग सूत्र वृत्ति," और " वासुपूज्य स्वामी चरित " वाचते रहे इस चौमासेमें श्रावकोंके आग्रहसें " स्नात्रपूजा " बनाई चौमासे बाद भी यहा जानुओंके (घूटणोंके) दरदसे, कितनाक समय रहना पडा तिस समयमें नूतन दीक्षित साधुओंको-बृहद् योगोद्वहन कराया, और पट्टीमे जाके छेदोपस्थापनीय चारित्रका सस्कार दिया बाद पट्टीसें विहार करके जीरामें पधारे और सवत् १९५१ का चौमासा, वहा किया इसी चौमासेमें, " तत्त्वनिर्णय प्रासाद " नामा ग्रथ पूर्ण किया, जो ग्रथ, इस समय अस्मदादिकोंके दृष्टिगोचर हो रहाहै, और जिस ग्रथको हाथमें लेकर, ग्रथकर्त्ताके जीवन चरितामृतका पान कर रहे हैं

इस ग्रथकी समाप्ति अनतर श्रीमहाराजजी साहिबने, " महाभारत " का आद्योपात स्वाध्याय करा "ऋग्वेदादि चारों वेदों" का, तथा"ब्राह्मण भाग" जितने छपेहुए मिले तिन सर्वका स्वाध्याय तो, श्रीमहाराजजीने प्रथमसेंही कराथा स्वमत (जैनमत) विना अन्य मत मतातरोंका भी, श्रीमहाराजजी साहिबको पूर्ण ज्ञान था जो इनके बनाये " जैनतत्त्वादर्श, " " अज्ञान तिमिर भास्कर, " और " तत्त्वनिर्णय प्रासाद " वगैरह ग्रथोंके देखनेसें, साफ साफ मालूम होताहै महाभारतका स्वाध्याय किये बाद, पुराणोंका स्वाध्याय भी अनुक्रमसें करा

जीरेके चौमासेसे पहिले जीरेमें ऐसा अद्भुत बनाव बना कि, जिससें पजाब देशके श्रावकोंको अतीव आनदामृतका स्नान हुआ क्योंकि, इस पजाब देशमें आजतक कोई भी यथार्थ सनातन जैनधर्मकी वृत्तिवाली " साध्वी " न थी सो देश मारवाड शहेर " बीकानेर " से, साध्वी श्री " चदनश्रीजी, " और " छगनश्रीजी, " विहार करके रस्तेमें अनेक प्रकारके कष्ट सहन करके जीरामें पधारीं और श्रीमद्विजयानदसूरीश्वरजीके दर्शनामृतके स्नानसे, मार्गका सर्व परिश्रम भूलायके, पजाबके श्राविका सघको अतीव सहायक हुईं इनके साथ एक बाई बीकानेरसे दीक्षा लेनेकेवास्ते आई हुई थी, तिसको दीक्षा दीनी, और " उद्योतश्रीजी " नाम रखा चौमासेबाद जीरासे विहार करके श्रीमहाराजजी साहिब, पट्टीमें पधारे और सवत १९५१ माघ सुदि त्रयोदशीके दिन, गुजरात देशसे आये हुये स्फाटिक जिनबिंब, और पजाब देशके श्रावकोंके कितनेक नूतन जिनबिंब मिलाके (५०) जिनबिंबकी, अजनशिलाका करी तथा नवीन जिन मदिरमें " श्री मनमोहन पार्श्वनाथजी " को स्थापन किये इस पूर्वोक्त क्रिया कराने वास्ते भी, वेही श्रावक आये थे प्रतिष्ठा महोत्सव पूर्ण होनेके बाद, विहार करके लाहोर तरफ पधारनेका इरादा, श्रीमहाराजजी साहिबका था परतु शहेर अबालाके श्रावक नानकचद, वसतामल्ल, उद्दमपल्ल, कपूरचद, भानामल्ल, गगाराम, वगैरह प्रतिष्ठा महोत्सवपर आये थे उनोंने विनती करी कि, " महाराजजी साहिब ! हमारे शहेरमें आपकी कृपासे जिन मदिर तैयार होगया है सो कृपानाथ ! कृपा करके आप शहेर अबालामें पधारो और प्रतिष्ठा करके हमारे मनोरथ पूर्ण करो हमारी यही अभिलाषा है कि, हमारे जीते जीते प्रतिष्ठा हो जावे, कालका कोई भरोसा नहीं, खबर नहीं कलको क्या होवेगा ? इस वास्ते हम अनाथोंकी प्रार्थना जरुर अगीकार करके, हमको सनाथ करने चाहिये " यह सुनकर श्रीमहाराजजी साहिबने पूर्वोक्त विचार बदलके, शहेर अबालाके तरफ विहार कर दिया और अनुक्रमे शहेर अबालामें पधारे यहा जुनागढके " डाक्टर त्रिभोवनदास-मोतीचद शाह, एल एम "ने आके, श्रीमहाराजजीकी दूसरी आखका मोतीया निकाला था इस हेतुसे सवत् १९५२ के चौमासेमें श्री महाराजजी साहिब व्याख्यान नहीं करते थे पर्युषण पर्वके

लगभग, मि० वीरचद गाधी चीकागोसे आके, यहा श्रीमहाराजजी साहिबको मिले, और अपनी कारवाई, सुनाई सुनके श्रीमहाराजजी साहिबको इतना हर्ष प्रकर्ष हुआ,जो लिखनेसें बाहिरहै.

चौमासे बाद भी कितनाक समय शहेर अबालामेंही रहे क्योंकि, सवत् १९५२ का मगसर सुदि पूर्णिमाको, "श्रीसुपार्श्वनाथ" सप्तम तीर्थंकरकी जिन प्रतिमाको नूतन जिन मदिरमें स्थापन करनेका मुहूर्त्त था तिस मुहूर्त्तपर वहाके श्रावकोंने अपूर्वही रचना करीथी जो समग्र उमरमें भी देखनेमें नहीं आई थी एक साक्षात् देवलोकका नमुना बना दियाथा दूर दूरसे यावत् देश गुजरात–मेहसाणासे चादीका रथ वगैरह असबाव, मगवायाथा निर्विघ्नपणेसें विधिपूर्वक पूर्वोक्त मुहूर्त्त साधके, श्री सूरिमहाराज, लुधीयाना शहेरमें आये इनके शुभागमनसें आनदित होकर श्रावक समुदायने, किसी सासारिक कार्यके सबबसे अपनी नाति (बिरादरी) में कितनेही वर्षोसे जो झगडा पडाथा, सो सलाह सप करके दूर कर दिया और " श्री कलिकुडपार्श्वनाथ " (जिसके साथकी दो मूर्त्ति, देश गुजरातमें भावनगरके पास वरतेज गाममें, श्रीसभवनाथके जिन मन्दिरमें देखनेमें आती है) का जिन मदिर बनवाना प्रारभ किया इस जिन मन्दिरके प्रारभमें अग्रता, रामदत्तामल्ल क्षत्रीय, जिसको श्रीमहाराजजी साहिबने जैनधर्मानुरागी बनायाहै, तिसकी है क्योंकि, इसने अपनी दो दुकानें, श्री जिन मन्दिर बनानेके वास्ते प्रथम दी तदनतर लाला गोपीमल्लके पुत्र,खुशीराम वगैरहने अपनी दो दुकानें दी बाद सकल श्रीसघने मदद देकर, श्रीजिनमन्दिर बनाना सुरू करदिया यहा बहुत अन्यमति लोक भी, व्याख्यानमें आतेथे क्योंकि, इस पजाब देशमें प्राय इतना पक्षपात नहींहै किंतु मत मतातरोंका जोर होनेसे, हर एक मतवालेके पास, हरएक मतवाला प्राय चरचा वार्त्ता करनेके वास्ते आता जाता है इस समय जितनी मतमतान्तरोंकी प्रचोलना, देश पजाबमें है, अन्य स्थानोमें नहीं होगी श्री महाराजजी साहिबकी शात मूर्त्तिको देख,और हरएक बातका पूरा पूरा दिलको शाति करनेवाला जवाब सुनके, और अपूर्व ज्ञानामृतका स्वाद चखके, शहेर लुधीआनेके लोक बहुत मोहित होगये, और चौमासेकी प्रार्थना करने लगे श्री माहराजजी साहिबके मनमें भी, प्रार्थना मजूर करनेकी सलाह होगई परतु इस अवसरमें, जिल्ला स्यालकोट गाम सनखतरेके रहनेवाले श्रावक, गोपीनाथ, अनन्तराम, प्रेमचद, ताराचद खण्डेरवाल भावडेकी विनती आई कि, " महाराजजी साहिब ! आपने शहेर अबालामें, भाई अनन्तरामको फरमायाथा कि,'यदि मन्दिरका काम तैयार होगया होवे, और प्रतिष्ठा करानेका इरादा होवे तो, सवत् १९५२ का वैशाख सुदि पूर्णिमाका मुहूर्त्त आताहै ' तब अनन्तरामने कहाथा कि, ' मैं घर जाकर सब भाइयोंसे सलाह करके आपको जवाब लिखवा देऊगा और मैं तो परम राजीहू कि, धर्मका कार्य जलदी हो जाना अच्छा है, सो महाराजजी साहिब ! हम अनन्तरामका कहा सुनकर, परमानन्दको प्राप्त हुवे है हमारे भाग्यमें ऐसा दिन आ जावे तो,और क्या चाहिये ? हमको आप साहिबका हुकम मजूर है, आपका फरमाया मुहूर्त्त हमको मान्यहै, परतु आप जानते हैं कि हमलोक अनजान हैं क्या करना, और क्या नहीं हम कुच्छ जानते नहीं है इतना तो, हमको यकिन हैही कि, आप प्रतापी महाराजके प्रभावसे, हमरा सर्व कार्य सानन्द समाप्त हो जायगा तथापि हम, पामर सेवक, आपके चरणोंमें सीस रखके, प्रार्थना

करते है कि,आप दया करके प्रतिष्ठाके दिनोंसे महिना दो महिने पहिलेही, यहा (सनखतरामें) पधारोगे, जिससे हमको शाति हो जावेगी "

इस विनतीको हृदयमें धारण करके श्री महाराजजी साहिब लुधीआनेसे विहार करके फगवाडा, जालधर,झडीआला,अमृतसर,होकर नारोवालमें पधारे यहा अनुमान पदरा दिन रहकर प्रतिष्ठाके सबबसें श्री सूरिमहाराज,"सनखतरे"पधारे, जहा अलौकिक जैन मदिर, देखके अत्यानद हुआ मदिरके सोपान(पउडी)चढते हुये,श्री महाराजजी साहिब अपने शिष्य "वल्लभ विजय"से कहने लगे कि,"अरे वल्लभ! क्या शत्रुजय ऊपर चढते हैं?" इस वखत शत्रुजयके याद आनेका हेतु यही है कि, वो मदिर शत्रुजय तीर्थ ऊपर मूल नायक श्री ऋषभदेव भगवान्‌की टुकका जेसा नकशा है, वेसीही ढब पर बना हुआहे अहा! वृद्धोंके, और फिर महात्माओंके, जिसमें भी ऐसे गुण-समुद्र महात्मा कि, जिसके गुणोंका वर्णन करना मुश्किल है, ऐसे महात्माके मुखारविंदसे पूर्वोक्त वचन वासना अनायासही, ऐसी निकली के, जिसने सनखतरेके मदिरको वासित करदिया अर्थात् उस समय वो मदिर, साक्षात शत्रुजयकाही अनुभव देने लगा क्योंकि, श्री महाराजजी साहिबके पधारनेसे सनखतराके श्रावक समुदायने, देश परदेश प्रतिष्ठा महोत्सव सबधी आमत्रण पत्र भेजे जिसको वाचके कपडवजका श्रावक शाह शकरलाल वीरचद ओर अहमदावादका श्रावक ठकोरदास,नवीन जिनबिंबको अजनशिलाका करानेके वास्ते लेके सनखतरे पहुचे, इनको उतारा दे रहे थे, इतनेमेंही, मुबईसें " शेठ तलकचद माणेकचद जे पी " के भेजे मणिलाल, और छगनलाल नवीन जिनबिंबको अजनशिलाका कराने वास्ते लेकर आये जिनके साथ शत्रुजय तीर्थ ऊपरसे शेठ मोतीशाहके कारखानेसे नवीन जिनबिंबको अजन-शिलाका वास्ते लेकर, माली, मदिरका पूजारी, आयाथा तथा बडोदेवाले, " गोकलभाई दुल्लभदास " और छाणीवाले " नगीनदास गरबडदास," प्रतिष्ठाकी क्रिया कराने वास्ते आये थे, वे भी,"बडोदा," "अहमदावाद," " मेहसाणा, " "छाणी," "वरतेज," "जयपुर" "दील्ही," वगेरह शहेरोंके श्रावकोंके बनवाए रत्नमय, ओर पाषाणमय, जिनबिंब, ले आये थे एव पौने-दोसौं (१७५) जिनबिंब अजनशिलाकाके वास्ते, सनखतरेके मदिरमें तीन वेदिका ऊपर स्थापन किये गये जिसमें मूलनायकजी, श्री ऋषभदेवजी,स्थापन किये गये थे इस वखत शत्रु-जय तीर्थके सिद्धगिराका अनुभव, देखनेवालेको होरहा था श्रीसूरि महाराजजीकी निगा नीचे, श्रीवर्द्धमान सूरि विरचित आचार दिनकर ग्रथके अनुसार पूर्वोक्त श्रावक सकल क्रिया कराते रहे लग्नका समय प्राप्त हुए, श्रीसूरि महाराजने, " श्री धर्मनाथ स्वामी" को, नूतन मदिरमें गद्दी ऊपर स्थापन करके, मूलनायक श्री "ऋषभदेवजी वगेरह नूतन जिनबिंबको, विधि पूर्वक अजन किया इन अंजन किये नवीन जिनबिंबमेंसे कितनेक तो, श्रीशत्रुजय तीर्थ ऊपर, कपडवजवाली शेठाणी माणेकबाईका बनवाए नवीन जिन मदिरमें स्थापन किये गये मी० तलकचद माणेकचदने, सुरतमें जिन मदिर बनायके स्थापन किये एव अपने अपने शहेरमें, जिनबिंब बनवानेवालोंने, श्री जिन मदिरमें स्थापन किये मोतीशाह शेठवाले जिनबिंब, शत्रुजय तीर्थ ऊपर, मोतीशाहकी टुकमें स्थापन किये गये एक मूर्त्ति लाजवर्द रत्नकी, श्री नेमनाथ स्वामीकी, अजनशिलाका, और प्रतिष्ठा महोत्सवके याद करनेके वास्ते, सनखतरेके मदिरमें स्थापन की गई

ऐसे वैशाख सुदि पूर्णिमा, सोमवार, स्वाति नक्षत्र, रवियोग, तथा सिद्धयोगादि, शुभ दिनमे

अजनशिलाका ओर श्रीधर्मनाथ स्वामीकी प्रतिष्ठा करके बडे आनदको प्राप्त हुए और जेठ वदि छठको, सनसतरासे गुजरावालेके श्रावकोंकी विनती मान्य करके, विहार करके, "किलाशोभा सींघका" होकर, शहेर "पशरूर" में पधारे वहा, प्रथम पाच सात दिन रहनेका इरादा था, परतु सनातन जैनधर्मानुरागीके अभावसे, उष्ण जलके न मिलनेसें जिस दिन गये, उसही दिन अनुमान चार बजे विहार करदिया इस वखत नगरके क्षत्रीय ब्राह्मण वगैरह लोकोंने, वहाके रहीस ढुढकमतानुसारी भावडोंका, बहुत तिरस्कार किया जिससें कई भावडे लाचार होकर, और कितनेक अतरग श्रद्धावाले, अपने बापदादाके डरसें प्रकटपणे कारवाई नहीं करनेवाले, आकर बहुत विनती करके कहने लगे कि, "महाराजजी साहिब ! हमारा गुन्हा माफ कीजिये, आगेको ऐसा काम नहीं होगा" परतु कालके जोरसे, उस वखत, इन महात्माके मनमें, बिलकुल करुणा नहीं आई हाय ! काल कैसा निष्करुण है कि, जो अपने आनेके समयमें, करुणासागरको भी निष्करुण, करदेताहै !

पशरूरसें विहार करके छछरावाली, सतराह, सेरावाली, होकर वडाला गाममें पधारे तहा रात्रिके पिछले प्रहरमें, दम (श्वास) चढना सुरू होगया इस श्वास रोगने इतना जोर एकदम कर दियाके, कदम भरना भी, मुश्कल होगया तथापि इस रोगको, श्रीमहाराजजी साहिबने, कुच्छ नहीं गिना, मनोबलसे चलते रहे परतु शरीरने, जवाब दे दिया इसवास्ते वडालेसे गुजरावालेका एक दिनका रस्ता भी, तीन दिनमें समाप्त किया, और जेठ सुदि दूजके रोज बडी धूमधामसें श्रावक लोकोंने नगरमें प्रवेश करायके श्रीमहाराजजी साहिबको उपाश्रयमें उतारे

सोला (१६) वर्ष पीछे श्रीमहाराजजी साहिबका आगमन, इस शहेरमें होनेसें लोकोंको बडाही उत्साह प्राप्त हुआ था कितनेही जिज्ञासु, चरचा वार्त्ता करते रहे पूर्वोक्त रोगकी चिकित्सा करानेके वास्ते, अन्य साधुओंने कहा परतु कालकी प्रबलतासें, चिकित्सा करानेको मान्य नही किया इतनाही नही, बलकि साधुओंसे कहने लगे कि, "ऐसे थोडे थोडे रोग पीछे क्या दवाई करानी ?" साधुओंने भी "विनाशकाले विपरीत बुद्धि" इस कहावत मुजब, श्रीमहाराजजीका कहा, जो इस वखत मान्य नहीं करने योग्य था वो भी मान्य करलिया, जिसका फल थोडेही दिनोंमें, साधु और श्रावकोंको मिलगया अर्थात् सवत् १९५२ जेठ सुदि सप्तमी मगलवारकी रात्रिको, प्रतिक्रमण करके, अपना नित्य नियम सथारा पौरुशी वगैरह कृत्य करके सो गये अनुमान रात्रिको बारा बजे नींद खुलगई, और दम उलट गया दिशाकी हाजत होनेसे दिशा फिरके शुचि करके, आसन ऊपर बैठे हुए, "अर्हन् ! अर्हन् ! अर्हन् !" ऐसे तीन वेरी मुखसे उच्चारण करके, "लो भाई, अब हम चलते हे, आर सबको खमाते हैं ऐसा कहके, पुन "अर्हन्" शब्द उच्चारण करते हुए, अतर्ध्यान होगये † इस वखत साधु श्रावकोंको जो दु ख पैदा हुआ, वाणीके अगोचर है इस दु खको सहन न करके, चद्रमा भी, मानु अपनी चादनीको सकोचके, अदृश्य होगया होवे ऐसे अस्त होगया ! और अज्ञान रूप भाव अधारा, अब ज्ञान सूर्यके अस्त होनेसे प्रकट होगया, ऐसा मालुम करनेको, द्रव्य अधारा, होगया दुर्जनके हृदयवत् काली रात्रिको

† जिस वखत महाराजका स्वर्गवास हुवाथा, उसवखत अष्टमी पहिलेसेही लग चुकी थी, ईस लिये काल तिथि जेठ सुदि अष्टमी गीनीगई

देखके, सब सेवकोंके मुखका तेज, उडगया किसीका जोर नही चला कई सेवक जन, स्नेह विव्हल होके,कहने लगे, "महाराज ! आपने इतनी शीघ्रता क्यों करी" ? कोई कहता है, " रे ! दुष्ट ! काल ! ऐसे उपकारी पुरुषका नाश करते हुऐ, तेरा नाश क्यों नहीं हुआ?" कोई कहता है, "महाराज साहिबने,अपना वचन सत्य करलिया क्योंकि, जब कभी किसी जगेपर, गुजरावालेके श्रावक विनती करते थे तो, उनको यही जवाब देते थे कि, 'भाई क्यों चिंता करते हो ? अतमें हमने बाबाजीके क्षेत्र गुजरावालेमें बैठना है "

यथा—हे जी तुम सुनीयोजी आतम राम, सेवक सार लीजोजी ॥ अंचली ॥
आतमराम आनंदके दाता, तुम बिन कौन भवोदधि त्राता ॥
हुं अनाथ शरणि तुम आयो, अब मोहे हाथ दीजोजी ॥ हे० ॥ १ ॥
तुम बिन साधु सभा नवि सोहे, रयणीकर विन रयणी खोहे ॥
जैसे तरणि विना दिन दिपे, निश्चय धार लीजोजी ॥ हे० ॥ २ ॥
दिन दिन कहते ज्ञान पढाऊं, चूप रहे तुज लड्डु देऊं ॥
जैसे माय वालक पतयावे, तिम तुमे काहे कीजोजी ॥ हे० ॥ ३ ॥
दिन अनाथ हुं चेरो तेरो, ध्यान धरूं हुं निश दिन तेरो ॥
अबतो काज करो गुरु मेरो, गोहे दीदार दीजोजी ॥ हे० ॥ ४ ॥
करो सहाज भवोदधि तारो, सेवक जनको पार उतारो ॥
वारवार विनती यह मोरी, वल्लभ तार दीजोजी ॥ हे० ॥ ५ ॥

इत्यादि अनेक सकल्प विकल्प करते हुए, आधि रात्रि आधे जुग समान होगई प्रात'काल होनेसे, शहेरमें हाहाकार हो रहा हिंदुसें लेके मुसलमान पर्यंत कोईकही निर्भाग्य शहेरमें रहगया होगा कि, जिसने उस अत अवस्थाका दर्शन, नहीं पाया होगा' जो देखता रहा, मुखसें यही शब्द निकालता रहा कि, "इन महात्माने तो समाधि धारण करी है, इनको काल करगये, कौन कहता है ?" यह वखतही ऐसा था, ऐसा तेज शरीर ऊपर छायाथा, देखनेवालेको एक दफा तो भ्रमही पडजाता था. स्कूलके मास्तर छुटी होनेके सबबसे पिछली मुलाकातसे मिलनेको, और वातचित करनेको आते थे, रस्तेमें सुनके हैरान होकर कहने लगे कि, "क्या किसी दुश्मनने यह बात उडाई है ? क्योंकि, कल शामके वखत, हम महात्माके दर्शन करके, और मतमतातरों सबधी वातचित करके, आज आनेका करार करगये थे रात रातमें क्या पत्थर पडगया ?" आनके देखे तो सत्यही था दर्शन करके कहने लगे, " महात्माजी आप हमसें दगा करगये ! हमतो आपसे, बहुत कुच्छ पूछके धर्म सबधी निर्णय करना चाहते थे आपने यह क्या काम किया ? क्या हमारेही मद भाग्यने जोर दिया, जो आप हमको भूला गये ?" वगैरह जितने मुख, उतनीही वातें होती रहीं परतु सब,उजाडमें रुदन करने तुल्य था क्योंकि, कितनाही विरलाप करें, कुच्छ भी बनता नहीं है काल महा बली है वडे२ तीर्थंकर चक्रवर्ती, वासुदेव, किसीको भी कालने छोडे नहीं है

रातो रात देशावरोंमें तारद्वारा पूर्वोक्त वज्रपातके समाचार, पहुच गये परतु यह अविचारित समाचार, सेवकजनोंको सत्य भान नहीं हुआ यही मनमें आया कि, "किसी द्वेषीने हमारे हृदयको दुःखानेके वास्ते, यह खोटी वार्ता फैलाई है क्योंकि, प्रथम भी दो वखत द्वेषी लोकोंने ऐसी खोटी वार्ता फैलाइ थी " पुन गुजरावाले तार भेजके खबर मगवाई कि " यह क्या बात है ? ' बदलेका जबाव पहुचगया कि, " क्या बात पूछते हो ? अधकार हो गया ज्ञान सूर्य अस्त हो गया " प्रात काल होतेही लाहोर, अमृतसर, जालधर, जडीयाला, हुशीआरपुर, लुधीआना, अबाला, जीरा, कोटला, वगैरह शहेरोंके श्रावक समुदाय निस्तेज होकर, आने लग गये निरानद होकर, अश्रुजलकी वर्षासें बाह्यतापको शात करते हुये, और अतरग तापको तेज करते हुये, चदनकी चितामें स्थापन करके महात्माके शरीरका अग्नि सस्कार, बहुत धूम धामसे किया उस वखतके चितारका स्वरूप यह गायनसे मालुम होगा

सतगुरुजी मेरे दे गये आज दिदार स्वामीजी मेरे,
दे गये आज दिदार श्री श्री आतमराम सूरीश्वर,
विजया नद सुखकार स्वामीजी ॥ अचलि ॥
गुरु होए निर्वान, सघ हो गया हैरान,
टूट गया मन मान, ज्ञान ध्यान कैसे आवेगा,
अब उपजीया शोक अपार, स्वामीजी० ॥ १ ॥
ये गंभीर धुनि वानी, जिनराजकी वखानी,
गुरुराजकी सुनानी, ऐसे कौन सुनावेगा,
अब किसका मुझे आधार ॥ स्वामीजी० ॥ २ ॥
धन्य धन्य सूरिराज, होये जैनके जहाज,
बहु सुधारे धर्म काज, अब कौन डका लावेगा,
श्री गुण ज्ञान अपार ॥ स्वामीजी० ॥ ३ ॥
मुनि सार्थवाह प्यारे, जीव लाखोंही सुधारे,
चद दर्शनी दिदारे, नहीं सोही पछतावेगा,
अब होगइ हाहाकार ॥ स्वामीजी० ॥ ४ ॥
जैसे सूरज उजारे, मतमिथ्यात निवारे,
अधकार मिटे सारे, कौन चादना दिखावेगा,
दास खुशी कैसे वार ॥ स्वामीजी० ॥ ५ ॥

॥ गजल ॥ (चाल रासधारीयोंकी)

जहा व्रजराज कल पावे, चलो सखी आज वावनमे—यहदेशी—

विना गुरुराजके देखे, मेरा दिल वेकरारी है ॥ अचलि ॥

॥ बहिर्लापिका ॥

आनद करते जगत जनको, वयण सत सत सुना करके—विना० ॥ १ ॥
तनु तस शात होया है, पाया जिने दर्श आ करके—विना० ॥ २ ॥
मानो सुर सूरि आये थे, भुवि नर देह धर करके—विना० ॥ ३ ॥
राजा अरु रक सम गिनते, निजातम रूप सम करके—विना० ॥ ४ ॥
महा उपकार जग करते, तनु फनाह समझ करके—विना० ॥ ५ ॥
जीया वल्लभ चाहताहै, नमन कर पाव परकरके—विना० ॥ ६ ॥

इत्यादि गुणानुवाद करतेहुये सब लोक एकत्र होकर श्रीमहाराजजी साहिबकी सदा यादगारी कायम रखनेके वास्ते, द्रव्य सग्रह करके, स्तूप (समाधि) बनानेका निश्चय करके, निरानद होकर अपने अपने स्थानोंपर चले गये *

जिस वखत श्री महाराजजी साहिबका स्वर्गवासका समाचार नगरमें फैलगया, उसही वखत किसी प्रतिपक्षीने पूर्वला वैर लेनेका इरादा करके किसीको स्यालकोट भेजके, गुजरावालेके "डीप्युटी कमिश्नर" को कल्पित नामसे तार दिलवाया कि, "साधु आत्मारामका मृत्यु जहेरसें हुवा मालूम होताहै और इधर आप वे प्रतिपक्षी, श्री महाराजजी साहिबजीके सेवकोंसे आनके कहने लगे कि, "यद्यपि हमारा तुमारा अनुष्ठान मिलता नहीं है, तथापि श्रीआत्मारामजी जैनी साधु कहाते थे, तुम हम दोनोंही जैनी कहातेहैं, इनका मरना क्या वारवार होना है ? तथा पिछली अवस्थाका हमारा भी कुच्छक हक है, इस वास्ते इनके इस निर्वाण महोत्सवमें हम भी, भाग लेवेंगे तब श्रीमहाराजजी साहिबके सेवकोंने, उनकी वक्रता, और सलता विना समझे, सरल स्वभावसें उनका कहना मजूर कर लिया परतु यह नहीं विचारा कि, यद्यपि इस वखत यह हमारे सज्जन होकर आये हैं, तथापि वास्तविकमें तो यह दुर्जनही है इसवास्ते सर्प्पकी तरह इनका विश्वास करना, दु खदायी है

यत.—दोजीहो कुडिलगइ, परछिड्डगवेसणिक्कतल्लिच्छो।
कस्स न दुज्जणलोओ, होइ भुयगुव्व भयहेऊ ॥ १ ॥
उवयारेण न घिप्पइ, न परिचएण न पिम्मभावेण।
कुणइ खलो अवयारं, खीराइपोसिय अहिव्व ॥ २ ॥

*गुजरांवालमें गाम बहार बडा भारी स्तूप (छत्री) बन गइ है जिसके दर्शनका सर्व जानिके बहुत लोकोंको नियम है

भावार्थ —जैसे सर्पको दो जुबान होती है, ऐसे दुर्जीभा अर्थात् चुगलखोर, सर्पकी तरह कुटिल वाकी गतिवाला, अर्थात् कहना कुच्छ, और करना कुच्छ, तथा जैसे सर्प परके छिद्र (खुड-बिल) ढुढनेमें रक्त होताहै, तैसे यह दुर्जन परके छिद्र, अर्थात् अवगुण ढुंढनेमें रक्त होताहै, ऐसे पूर्वोक्त विशेषणों विशिष्ट दुर्जन पुरुष सर्पकी तरह, किसको भयका हेतु कारण नहीं है? अपितु सबकोही है

तथा दुर्जन पुरुष उपकार करनेसे, परिचय करनेसे, स्नेहभावसे, किसी प्रकारसे भी वश नहीं होताहै किंतु अवसर पाकर, अपकार करनेमें कसर नहीं रखताहै, दूधसे पोषे सर्पकी तरह परंतु वे क्या करे? जब भाग्य वक्र होवे तो, कितनाही पुरुषार्थ करो, सब निष्फल होताहै

यतः—कैवर्त्तकर्कसकरग्रहणच्युतोपि ।
जाले पुनर्निपतित सफरो वराकः ॥
दैवात्ततो विगलितो गिलितो बकेन ।
वक्रे विधौ वद कथं पुरुषार्थसिद्धिः ॥ १ ॥

भावार्थ — किसी एक कैवर्त्त (धीवर) ने, कठोर हाथोंसें मच्छ पकडा, सो हाथसें निकलके जालमें पडगया, दैवयोगसें जालमेंसें भी निकलगया तो, तिसको बक (बगला) जानवरने निगल लिया (खा लिया) तो अब कहो दैवके वक्र हुवे क्या पुरुषार्थ सिद्धि होसक्ती है ? कदापि नही

अब श्रावकोंने उन प्रतिपक्षीयोंका कहना मंजूर करलिया तब वे बहुत खुश होकर धूर्त्तता करके दुर्जनवत्, मित्रता प्रकट करते हुए,

यतः—प्रारंभगुर्व्वी क्षयिणी क्रमेण, तन्वी पुरा वृद्धिमती च पश्चात्,
दिनस्य पूर्वार्द्धपरार्द्धभिन्ना, च्छायेव मैत्री खल सज्जनानाम् ॥ १ ॥

भावार्थ —दुर्जनकी मैत्री, दिनके पूर्वार्द्ध भाग समान होती है, जैसें दिनके पूर्वार्द्ध भागमें छाया, प्रथम बहुत होती है, और पीछे क्रम करके घटती जातीहै, ऐसेही दुर्जनकी मैत्री, प्रथम तो अत्यत गाढी होतीहै, और पीछे क्रमकरके घटती जाती है और सज्जन पुरुषोंकी मैत्री, दिनके पिछले भाग समान होतीहै, अर्थात् जैसे दिनके पिछले भागकी छाया, प्रथम थोडी होतीहै और पीछेसे क्रमकरके बढती जाती है, ऐसेही सज्जन पुरुषोंकी मैत्री, थोडी होती है, और पीछेसे क्रमकरके बढती जाती है

धूर्त्ततासे सर्वकार्यमें, वे लोक, अग्रगामी होते चले जब श्रीमहाराजजी साहिबके शरीरके विमानको बहार, वास्ते अग्नि सस्कारके ले चलेथे तब वे लोक, अपनी अतरग पापकी प्रेरणासे, रस्तेमें बहुत ठिकाने सज्जन बनके रोकते रहे,तथापि कुच्छ नहीं बना क्या बिल्लीके भागको छिका टूटताहै? जिसका पुन्य तेज होवे, उसको दुर्जन कितनीही चालाकी करे, कुच्छ नहीं कर सक्ता है दैवयोगसे उस दिन अंग्रेजोंका कोई तेहवारका दिन होनेसे, तार, रातको नव बजे आया जब यहा अग्निसस्कार हो चुकाथा डिप्युटी कमिश्नरने, विचार नहीं किया कि यह साधु किस मतके है? इनका आचार विचार कैसा है? डेराधारी है, वा रमते फकीर है? कोई,

पैसा रखतेहैं, वा नहीं ? वगैरह विचार किये विनाही, पोलीस कमिश्नरको बदोबस्त वास्ते हुक्म भेज दिया श्रावकोंने बारीस्टर वगैरह भी बुलाया था कमिश्नरने तलास करके अपना निश्चय करलिया कुच्छ भी नहीं बना श्री महाराजजी साहिबके सेवक जीत गये और प्रतिपक्षीको लोकोंकी तरफसे गालियां तिरस्कारका सिरोपाव मिलतारहा !

देशदेशावरोंमें स्वर्गवासकी खबर पहुचतेही बजार हाट बधकरके हडताळ पडी, हाहाकार होगया हजारों रुपयोंका दान पुन्यहुआ जगेजगे पूजा भणाई गई, वगैरह हजारों धर्म कार्य हुए

इस तरांह श्रीमद्विजयानदसूरि (श्रीआत्मारामजी) महाराजका जीवन चरित, सक्षेपसे वर्णन किया इससे मालूम होगा कि, इन महात्माने विद्याकी प्राप्ति, धर्म शोधन और जैनधर्मके उद्धारके वास्ते, कितना वडा परिश्रम उठाया और अतमें कैसा जय प्राप्त किया था ऐसे महात्मा पुरुषोंको धन्य है !

इन महात्माके उपकारकी यादगीरीमें, प्रायः हरएक ठिकाने विद्याशाला स्थापन होरहीहै, और उनके चरण, तथा तिनकी मूर्तिकी स्थापना होगई है और भी करनेकी हिलचाल होरहीहै

पजाब देशमें इनके अपूर्व जयकी यही निशानीहै कि, अमृतसर, जीरा, हुशीआरपुर, पट्टी, अंवाला, सनखतरा, कोटला, नीकोदर, लुधिआना,जालधर, झडीयाला,वेरोवाल, जेजो, रोपड, कसूर, नारोवाल, आदि क्षेत्रोंमें श्रीजिन मदिर बनगये हैं और अन्य ठिकाने बने जाते हैं

॥ इति शुभम् ॥

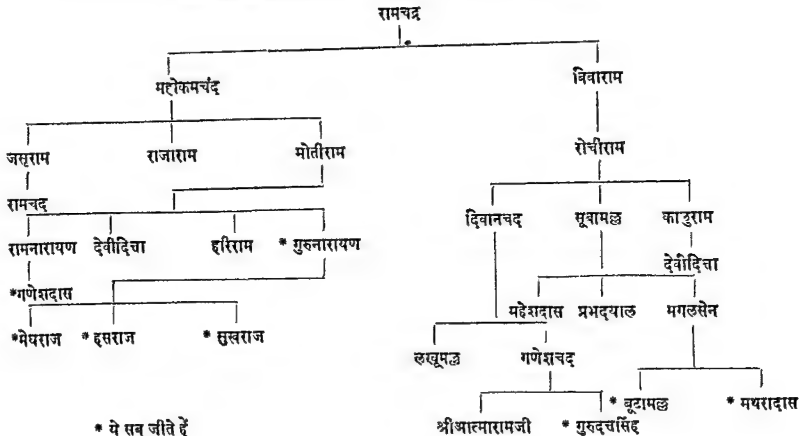
वेदे बाणांके इंद्वब्दे नभोमासे सिते दले,
प्रतिपद्वासरे शुक्रे, चरितं श्रुतिसौख्यदम् ॥ १ ॥
नारोवालपुरे रम्ये, सुव्रतजिनमंडिते,
चतुर्मासीस्थितेनेदं, विजयानंदसूरीणाम् ॥ २ ॥
यद्दृष्टं यच्छ्रुतं यचा-नुभूतं किल तन्मया,
वल्लभविजयाख्येन, भाषायां ग्रथितं मुदा ॥ ३ ॥

इति तपगच्छाचार्य श्रीमद्विजयानदसूरि शिष्य महोपाध्याय श्रीमल्लक्ष्मी विजय
शिष्योपाध्याय श्रीमद्धर्ष विजय शिष्य मुनिवल्लभ विजय
विरचितं श्रीमद्विजयानदसूरि चरित समाप्त ॥

॥ शुभं लेखक पाठकयोरिति ॥

मुनि श्री आत्मारामजीका जन्मचरित्रमें पृष्ठ ३४ देखो

मुनिराज श्रीआत्मारामजीका कुरसीनामा (वंशवृक्ष) खानदान कपूरक्षत्रियान्-गाम कलश-तहसील पिंडदादनखान-जिल्ला जेहलम-पंजाब कपूर यह कोम पंजाबमें सब हिंदुओंमें प्रथम दरज्जेका है





SETH VEERCHUND DEEPCHUND J P C I E

रा. रा. शेठ वीरचंद दीपचंद सी. आई. इ., जे. पी.

(गोधावी-अहमदाबाद-मुंबई).

शेठ वीरचंद दीपचंद सी. आई. इ. जिनका शांत फोटो सामने दृष्टी गोचर हो रहाहै, असलमें अहमदाबाद जिलेमें गोधावी ग्रामके रहनेवाले वीसा श्रीमाली ज्ञातिके है, परंतु वहुत कालसे अहमदाबादके निवासी हो गये हैं. इनका जन्म सन १८३२ में हुवाहै गुजराती, और कुच्छ अंग्रेजीका अभ्यास करके सतरह वर्षकी उमरमें यह म्युनीसीपालिटीमें रु २४ की छोटी नोकरीपर रहे, सं. १९१४ में अहमदाबादमें नगरशेठ प्रेमाभाई हेमाभाईके संयोगसें बंबईमें इन शेठकी नोकरीमें प्रथम दाखल हुवे. कार्यकुशलता दिखाकर आपने दुकानका कार्य साफल्यतासे चलाया सन १८६२ में मी. स्टर्नकी तरफसे इनको गुप्त खबर मिली कि अमेरिकामें भारी लडाई होगी जिसपरसे आपने सर रुस्तमजी जीजीभाई, शेठ प्रेमाभाई वगैरहके हिस्सेमें भारी व्यापार करके, वहुत धन प्राप्त किआ. खंडी एकका रूईका भाव, उस समय रु. ७५० तक वढ गया था, इसलिये यह समय ऐतिहासिक कहलाया. और मी. झवेरीलाल उमीयाशंकरको मदद देकर उनके नामसे एक कुंपनी जारी की जिसको मेसर्स नुप कुंपनीकी एजन्सी मिलीथी. इसके सिवाय करसनदास माधवदासकी कुंपनीमें भी इनका साजा था.

सन १८६३ के वर्षसें यह ओरियंटल मिल बॉन्डेड वेरहाउस, कुं० ली०, माणेकजी पीटीट मिल, बेंक ऑफ इंडिया, ब्रोच कोटन मिल आदिके डायरेक्टर नियत हुवे थे.

तदनंतर सन १८७४ में मुंबईके भाटिया ज्ञातिके प्रसिद्ध शेठ मोरारजी गोकलदासने इनकी योग्यतासे प्रसन्न होकर इनको अपने कार्ममें शामिल कर लिया, केवल इतनाही नही परंतु अपना भागीदार वनाकर अपने सब कामका वोझा इनपर डाल दिया इन्होंने भी सब कामोंमें सफलता प्राप्त की और वडा नाम पाया.

सन १८७५ में सोलापुरमें एक मिल शेठ वीरचंदजीने शेठ मोरारजी गोकलदास कुं० की एजन्सीमें स्थापित कर वडी सफलता प्राप्त की. मोरारजी मिल और महालक्ष्मी मिलकी एजन्सीका भी कारभार ये लक्ष देकर करतेथे और शेठ मोरारजीने अपने विलमें आपको एक एक्झीक्युटर नियत कियेथे, जिस लिये दोनोंही कार्य इनको करने पडते थे.

स्वर्गवासी शेठ मोरारजीके कुटुंबकी खबर रखनेमें, उचित सलाह देनेमें, सुप्रबंध रखनेमें और उत्तम व्यवस्था करनेमें शेठ वीरचंदजीने अच्छी कुशलता दिखाई, और मेसर्स मोरारजी गोकलदास कंपनीकी साफल्यता वहुधा इन्हींके कारणसें हुई है.

उक्त शेठ मोरारजी मिल, सोलापुर मिल, शेठ लालभाई दलपतभाईवाली सरसपुर मिल, झवेरी मिल, धी ओ० नसरवानजी वाडियावाली सेंच्युरी मिल और ग्लोब मिलके डायरेक्टर हैं. और वहुधा मिलवाले इनका अनुभव देखके उनकी सलाहपर चलते हैं.

इन्होंने वहुत अच्छा धन संपादन करके, उसका सदुपयोग भी किआ है. सन १८७६-७७ में सोलापुरके दुर्भिक्षमें इन्होंने लोगोंको वडी भारी मदद दीथी और गवर्नमेंटने इनके कार्यकी कदर ता. १ जनवरी सन १८७७ को एक सरटीफिकेट और ता. २४ डीसेंबरको

सरकारी गेजीटमें लेखद्वारा* की है, जिसमें इनकी अमूल्य सेवाकी स्तुति करके धन्यवाद दिया है. संवत १९५६ के दुर्भिक्षके समय सोलापुर, गुजरात आदि स्थानोंमें सस्ते भावपर अन्न वेचनेकी दुकानें खोलकर गरीबोंको मदद देनेमें और जानवरोंको बचानेमें इन्होंने बहुत कुच्छ परिश्रम उठायाथा गुप्तदान करनेमें इनकी अच्छी प्रतिष्ठा है

शेठ वीरचदजी विद्याके उपासक हैं, और विद्याके, साक्षरके, पुस्तक प्रसिद्धकर्त्ता आदिके सदा सहायक वनते है जैनधर्म कार्यमें आप सदा अगुआ रह कर काम करते है "धी जैन एसोसिएशन ऑफ इडिया," "धी वीरचद करमचद जैन युनीयन रीडिंगरूम ऍड लायब्रेरी" और "मेवाड जैन मदिर जीर्णोद्धार सभा" के ये अध्यक्ष है मुबईमें श्रीलालबागके ट्रस्टी और श्री शातिनाथजीके मदिरके ये मेनेजिंग ट्रस्टी हैं और वहाका प्रवध बहुत उत्तम प्रकारसें चलाते है यद्यपि अब ७० वर्षके वृद्ध होगये है तथापि ऐसी कोई जैन सभा नहीं होगी, जहां शेठ वीरचदजी हाजर न होते हों मक्षीजी तीर्थके, पालीताणेके और कई धर्मके मुकद्दमोंमें इन्होंने मदद दी है कई पाठशाला और साधुओंको पढानेके लिये पडितोंको महावार मदद देते है गोघावीमें कन्याशाला, और अग्रेजी स्कूल, अहमदाबादमें खानगी लायब्रेरी और अभ्यासवर्ग आदि चलाकर विद्याकी उन्नतिपर वडा लक्ष देते है

शेठ वीरचदजी मुबईके "जस्टिस ऑफ धी पीस" इ. सोलापुर म्युनीसीपालिटीके कमीशनर और एसेसर थे, और मुंबईकी हायकोर्टके खास ज्यूरर है दुष्कालके समय इनकी सेवासें राजी होकर मान्यवर ब्रिटिश सरकारने महाराणी विक्टोरियाके दस्तखती सनद § वख्शके इनको सन १८९८ म सी आई. इ. (कपेनियन आफ धी आर्डर ऑफ धी ईंडियन एम्पायर) की प्रतिष्ठित उपाधि प्रदान की, जो पहिले किसी जैनको मिली नहीं है

ता. २ मार्च सन १८९८ को फेमिन कमिशनको आपने सोलापुरके दुष्काळ संबंधी अपने अनुभवका रिपोर्ट दिया था जो कमीशनने बहाल रखा था.

---

† सर्टिफिकेट—By Command of His Excellency the Viceroy and Governor General, this Certificate is presented in the name of Her Most Gracious Majesty Victoria Empress of India, to Veerchand Dipchand in recognition of his valuable aid in relieving distress caused by the failure of the monsoon of 1876

January 1st, 1877 (Sd) P WODHOUSE,
Governor

---

* लेख—Extract from para 65 of a minute by the Governor, Bombay dated 24th December 1877 on the Famine of 1876–77 in the Bombay Presidency, is forwarded to Mr Veerchand Dipchand
(Sd) C J Merriman Col R. E.
Ag Secretary to Government.

The following gentlemen have deserved the gratitude for charitable munificence or for benevolent exertion personally during this trial

+ + + + +
Mr Veerchand Deepchand SHOLAPUR.

(Sd) VICTORIA

§ सनद—Victoria by the Grace of the United Kingdom of Great Britain and Ireland, Queen Defender of the Faith, Empress of India and Sovereign of the Most Eminent Order of the Indian Empire

सन १८९९ में इनके ऊपर एक बडी भारी सांसारिक आपत्ति आई कि इनके ज्येष्ट पुत्र मी० वाडीलाल जो एक बडे बुद्धिमान और दृढ पुरुष थे, ४२ वर्षकी उमरमें काल कर गये.

शेठ वीरचंदजीका भारी संबन्ध सरकारी आफिसरोंमें और बडे व्यापारीओमें है, इतनाही नहीं, परंतु महीसूर आदि राज्योंके साथ दोस्ताना हक है जूनागढ, कच्छ, वडोदा आदि राज्योंमें भी उनका बडा वसीला है. सलाह मसलत करने और इनके अनुभवसे लाभ उठानेको बहुत बडे आदमी पसंद करते है पुरानी और नई दोनों प्रणालिका आपको पूरा अनुभव होनेसें प्रत्येक कार्यमें सफलता प्राप्त करते हैं

सन १९०३ में ब्रिटिश सरकारकी ओरसे इनको विशेषरूपपर आमंत्रण होनेपर आप दिल्ली दरबारमें पधारे थे, और अच्छा मान पाया था.

शेठ वीरचंदजीके बडा कुटुम्ब है और अब उनको एक पुत्री रुक्षमणी (दो काल करगई) मी. भोगीलाल और साराभाई दो पुत्र तथा दलसुख और कांतिलाल दो पौत्र और समर्थ एक पौत्री है, जिनके भी संतान विद्यमान है. इनके विद्याभ्यासके लिये ये पूरा परिश्रम करते हैं और मी भोगीलाल इनके धंधेमें प्रवृत्त रहे है

स्वर्गवासी मि० वीरचंद राघवजी गांधीको विद्याभ्यास करानेमें, उनको अमेरिका भेजनेमें, उनको ब्यारिस्टर बनानेमें और वहांसे पीछा आनेपर अपने मकानपर रखकर इन्होंने द्रव्यसे बडी मदद दीथी और उनकी बिमारीमें भी औषध आदि करानेमें पूरा परिश्रम उठाया था परंतु खेद है कि ये वीरपुरुष न जिये, नहीं तो इन वृद्धात्माको बडा आनंद प्राप्त होता

धर्मसंबन्धी ज्ञातिसंबंधी अथवा आपसमें कोई बखेडा खडा होनेपर यदि शेठ वीरचंदजी बीचमें पडते हैं, तो दोनों पक्षको राजी करके झगडा आगे बढने नहीं देते हैं, ये इनकी खूबी है. इनकी बदौलत इनके कुटुंबीही नहीं, वरन बहुतसे जैन और दूसरे लोग भी अपनी रोटी कमा रहे है, और उनको धन्यवाद देते है

जैनोंकी धार्मिक, सामाजिक और औद्योगिक स्तिथिकी उन्नतीका प्रयास करनेवाली बंबईकी दूसरी जैन (श्वेतांबर) कॉन्फरन्सकी रीसेपशन (स्वागत) कमिटीके ये अध्यक्ष चुने गये थे

ये महाशय स्वभावके अति नम्र, दयावान, श्रद्धालु, शीलवान, प्रत्येकको प्रेमदृष्टीमें देखनेवाले, निराभिमानी, स्वदेश-धर्म-जातीके उत्तेजक, आनंदी, कुनेहसे काम करनेवाले, उद्योगी, विनयी आदि अनेक गुणसंपन्न हैं

जैनभाईयोंकी ओरसें इनकी धर्मसेवाका बहुमान्य होना अवश्य है. हम इनकी दीर्घायु चाहते हैं और आशा करतेहैं कि ये सदा धर्मकार्यमें प्रवृत्त होकर उन्नति करते रहेंगे. !!!

To Veerchand Deepchand of Ahmedabad in the Bombay Presidency Esq

Greeting, Whereas we have thought fit to nominate and appoint you to be a Companion of our said most Eminent Order of the Indian Empire we do by these Presents grant unto you the dignity of a Companion of our said Order and hereby authorise you to have hold and enjoy the said dignity and rank as a Companion of our aforesaid Order to-gether with all and singular the privileges there unto belonging or appertaining

Given at our Court at Osborne under our Sign, Manual and the Seal of our said Order, this first day of January 1898 in the Sixty First year of our Reign.

By the Sovereign's Command
(Sd.) GEORGE HAMILTON

तत्वनिर्णयप्रासाद ग्रंथके सहायक महाशयोंके संक्षिप्त जीवन वृत्तांत और चित्र (तस्वीरें).

जबसे यह ग्रंथ मुझको सर्वाधिकारके साथ श्रीमद्विजयानंदसूरीश्वरजी (आत्मारामजी) महाराजकी ओरसे मिला था तबहीसे मैं इस उद्योगमें था कि पुस्तकको ऐसे ढंगसे प्रकाशित किया जाय कि इसके उत्तम और सस्ते होनेके कारण सब लोग इससे लाभ उठासकें.

इस पुस्तकमें शेठ वीरचंद दीपचंद सी आई. ई जे. पी., रावबहादुर शेठ माणेकचंद कपूरचंद और स्व० शेठ मगनभाई कपूरचंद, रावसाहेब शेठ वसनजी त्रीकमजी जे. पी., तथा स्वर्गवासी शेठ तलकचंद माणेकचंद (कोल पूर्ण नहीं हुआ) से जो २ सहायता मिली है उसकेलिये मैं उन महाशयोंको हार्दिक धन्यवाद देता हूं.

पहिले इस पुस्तकको रु० ५) मूल्य रखकर साधारण रीतपर छपवानेका मेरा विचार था परंतु उक्त महाशयोंकी सहायतासे चिकने पुष्ट कागज, सुंदर सुनहरी जिल्द, बडे अक्षर, ८८० पृष्ठके आकार, २२ अति उत्तम चित्र, रंगीन वंशवृक्ष तथा जीवन चरित्र आदिसे पुस्तकको सर्वांग सुंदर बनानेमें त्रुटि नहीं की गई है, ऐसी दशामें इसका मूल्य यदि रु० ७) भी रक्खा जाता तो अधिक नहीं था, परंतु उक्त महाशयोंकी सहायतासे इसकी न्योछावर सर्व साधारणके सुभीतेके लिये केवल रु० ४) ही कर दीगई है. केवळ इतनाही नहीं वरन साधुमुनिराज, और भंडार आदिमें बहुत प्रति विना मूल्य भेट की गई है इनामके लिये खरीदनेवालेको और गरीब जैनोंको खास कम भावसे दी जातीहै.

साधु मुनिराजोंके फोटोके उपरांत उपरियुक्त जिन महाशयोंसे इस कार्यमें सहायता मिली है उनके और स्व० मी० वीरचंद राघवजी गांधीका संक्षिप्त जीवन चरित्र और चित्र अमेरिका आदिसे बडे व्ययसे प्राप्तकर उक्त महाशयोंकी इच्छा न रहनेपर भी उनसे मिली हुई सहायताके उपलक्ष्यमें दिये गये हैं, जिनसे हम लोगोंको उनका अनुकरण करनेकी शिक्षा प्राप्त हो.

अमरचंद पी० परमार, प्रसिद्धकर्त्ता.

चित्रोंकी अनुक्रमणिका.



सेठ मगनभाई कपुरचंद-पूना (जन्म सं० १८९२)

Supplied by
A P PARMAR



सेठ माणेकचंद कपुरचंद-(मुंबई जन्म सं० १९०८)

रा. व. शेठ माणेकचंद कपूरचंद और स्व. शेठ मगनभाई कपूरचंद.

ये दोनों भाई जिनका गभीर, सयुक्त फोटो सामने दृष्टिगोचर हो रहा है, वीसा ओसवाल जैन ज्ञातिके है, और पूना तथा मुबईमे निवास करते हैं असलमें ये अहमदाबादके है, और इनके पूर्वजोंमेंसे शेठ दीपचदके पुत्र, शेठ कीकाचदको लालभाई और वजेचद दो पुत्र थे. लालभाईका वश अहमदाबादमें है, और लगभग सो वर्ष पहिले शेठ वजेचद पूनामें जाकर आवाद हुवे. जवाहरातके धधेमें अच्छी प्रतिष्ठा प्राप्त करके ये पेश्वा सरकारके जवहरी नियत किये गये, और उन्हींकी सहायतासे एक बडा मकान शनिवार पेठमें बनवाया.

पूनामें सवाई माधवराव पेश्वाके समयमें जब किलेका काम आरभ हुवा, तब नाना फडनवीसकी ईच्छानुसार इन्होंने किलेके बाहर जवहरीवाडा बसाकर व्यापारकी बडी उन्नति की ये प्रत्येक जैनकार्यमें अग्रणी बनते थे, और बहुतसे जैन मंदिर बनवानेमें इन्होंने सहाय दीथी सवत १९०१ में ८८ वर्षकी वयमें इन्होंने स्वर्गवास किया. इसी समयसे यह दूकान शा वजेचद कीकाचदके नामसे आजपर्यत चल रही है. यह दूकान कई वार मरहट्टाओंसे लूटी गई थी.

उक्त शेठ वजेचदको कपूरचद, वमलचद उपनाम बापूभाई और उत्तमभाई तीन पुत्र थे शेठ कपूरचद बहुतही शात प्रकृतिके महाशय थे वे सासारिक कार्यमें बहुधा विरक्त रहते थे, उनको एकातवास बहुत पसद था और वे धर्ममें दृढ श्रद्धावान थे

शेठ बापुभाईने व्यापारादि भली प्रकार चलाकर अच्छा धन और प्रतिष्ठा प्राप्त किया. पूनाकी पींजरापोल पहलेही बनानेमें और उसके निर्वाहके लिये अच्छा प्रबध करानेमें इन्होंने बहुतही परिश्रम उठाया था, और अत समयतक उसके ट्रस्टी थे

उक्त शेठ कपूरचदके बडे पुत्र शेठ मगनभाईका जन्म सवत १८९३ में हुवाथा. यह पूनाहीमें रहकर सराफी और जवहरातका काम करते थे मंदिरोंका कारबार जो पहलेसे इनके घरानेमें है, वह अच्छी तरह चल रहा है, और वह पींजरापोलके ट्रस्टी थे इनके छोटे भाई शेठ माणेकचदका जन्म सवत १८०८ में हुआ था संवत १०१६ मे इनकी दूकान बम्बईमें भी स्थापित हुई और दूसरेही वर्ष शेठ माणेकचद अपनी दूकानपर किर्द्धीदारीका काम करने लगे. शेठ बापुभाईकी शिक्षासे इस छोटीही अवस्थामें इन्होंने बडे होसलेके साथ धन और मान प्राप्त करना प्रारभ किया

सन १८७६ मे सोलापुरके दुष्कालके समयमें हजारों जानवरोकी प्राण-रक्षा करनेमें इन्होंने बहुत परिश्रम कर सब कार्यका भार अपने हाथमें लेकर बहुतही अच्छा प्रबध किया. वणिकबुद्धि, कार्यकुशलता और दीर्घदर्शीसे जो काम ये हाथमें लेते हैं, उसे आप अच्छी तरह पूरा करनेमें कभी कमी नहीं रखते हैं

ये दाग्रुद सासून मिल और पायोनीयर मिलकी एजसी, आढत, जवाहरात, सराफी, इस्टेट, रुई आदिका धंधा सफलतासे करते आये हैं अपनी मीठी जबान, उद्योग और बुद्धिबलसे इन्होंने अनेक मित्र करलिये. किसीके बीचमें टटाबखेडा पडता है तो ये मिटा देते हैं.

संवत १९४८ में बंबईके श्री गोडीजी पार्श्वनाथजीके जैनमंदिरमें ये मेनेजींग ट्रस्टी हुवे. ये मंदिर अव्वल गिना जाता है और वह देवसूर-तप गच्छकी मालकीका है यहांसे बाहरगावके बहुतसे मंदिरोंको सहायता पहुचती रहती है आप वहांका कार्य बहुत भली प्रकार चला रहे हैं और जातिश्रम करके मंदिरका देवद्रव्य और इस्टेटकी अच्छी उन्नति करते हैं इन्हींके समयमें भगवानके मुकुट आदि आभूषण सुंदर बनवाये गये, मंदिरका हिसाब छपाकर प्रसिद्ध करनेका सुधारा अवश्य ये शेठ अंगीकार करेंगे ऐसी आशा है

सं० १९५२ में जब मुंबईमें प्लेगकी बीमारी हुई तब अगुआ होकर इन्होंने एक चंदा करके पहलेही पहले जैन हॉस्पीटल स्थापन किया और सेक्रेटरी मी० अमरचंद पी० परमारकी स्तुतिपात्र सहायतासें सेग्रेगेशन, हास्पीटल आदिका अच्छा प्रबंध प्लेग कमीटीको भी जोर शोर दे कराकर लोकोंकी नासभाग, छिपछिपी, धर्मभ्रष्ट होने आदिकी आपत्ति दूर करा दिया. इनको इस सेवाके उपलक्षमें ता. २१ जुलाई सन १८९७ को जैनबंधु और कपोलकोमकी ओरसें प्लेगकमीटीके चेअरमेन जनरल डबल्यु गेटकरके हाथसें माधवबागमें एक महती सभामें मानपत्र दिया गया मान्यवर गवर्नमेंटने भी आपको दिसंबर सन १८९८ में रावबहादूरकी उपाधि प्रदान की स. १९५६ के भीषण दुकालमें जब प्रतिष्ठावाले घरानेके जैन लोग भी अन्नको तरसते थे तो आपने उनकी सहायता अमेरिकन कौंसल मि. विलियम टी फीके उद्योगसें प्राप्त तथा यहांपर फंडद्वारा तथा निजके धनसें बहुत अच्छी तरह की थी.

शेठ बापुभाईका स्वर्गवास संवत १९३६ में हुवा उनको एक पुत्र और एक पुत्री है पुत्र मी. अंबालालका जन्म सं. १९३३ में, शेठ माणेकचंदके पुत्र मी० नेमकचंदका स० १९३२ में, और शेठ मगनभाईके पुत्र बाबुभाईका स० १९५६ में हुवा शेठमगनभाईको दो पुत्री भी हैं शेठ मगनभाईका स्वर्गवास पूनामें स. १९५० के श्रावण सुदि १८ को हुवा

आशा की जाती है कि भविष्यत्में मी० अंबालाल एक अच्छे अर्थशास्त्री और मी० नेमचंद एक नामी जवहरी होंगे मी अंबालाल जैन कॉन्फरन्सकी इंटेलीजंस, हेल्थ और वॉलंटीयर कमिटीके अध्यक्ष नियत किये गये थे जो कार्य उन्होंने कुशलतासे किया.

यद्यपि ये पूनानिवासी हो गये हैं, तो भी राह रसम अहमदाबादकी रखकर अपनी पुत्रियोका विवाह वहांही करते हैं. सात पीढीतक इनकी प्रतिष्ठा एक समान चली आई है

जैनोंके मुकद्दमें आदि धर्मकार्यमें ये अच्छा लक्ष देते हैं गुप्त द्रव्यद्वारा गरीब जैन कुटुंबोंको और पुस्तकद्वारा मुनिराज और विद्यालयोंको सदा सहायता करते रहते हैं

अहमदाबादमें इनके पूर्वजोंका बनाया हुआ जैनमंदिर है उसके जीर्णोद्धारके लिये आप तयारी कर रहे है, और इनके पूना तथा बंबईके दोनों निवासस्थानमें शोभनीय घर देरासर है.

दूसरी जैन (स्वेतांबर) कॉन्फरन्सकी "मंडप कमिटी" के आप अध्यक्ष नियत किये गये थे और मंडपके और स्थायी फंडके कार्यमें इन्होंने स्तुतिपात्र मदद दी थी

शेठ माणेकचंद स्वभावके बडे नम्र, विचारशील, निराभिमानी, कुटुंबप्रेमी, श्रद्धालु, वचनके पूरे, विनयी और शीलवान है, और मित्रोंको सहायता करने, दीनोंकी रक्षा तथा परोपकारमें सदा तत्पर रहते हैं.

हम इस कुटुंबकी सदा वृद्धि और दीर्घायु चाहते हैं !!



RAO SAHEB SETH VUSSONJI TRICUMJI MOOLJI J P

राव साहेब शेठ वसनजी त्रीकमजी मूल्जी, जे पी

जन्म-सं० १९२२

रावसाहेब शेठ वसनजी त्रीकमजी मूळजी, जे. पी. मुंबई.

अगले पृष्ठके उपर सुंदर चित्र उन महाशयका है कि जिन्होंने बहुत छोटी उहरसेंही ज्ञानवृद्धि और परोपकार वृत्तीमें अपना दिल लगाना आरंभ किया है

शेठ वसनजी कच्छके दशा ओसवाल ज्ञातिके जैन गृहस्थ हैं. कच्छमें सूथरी ग्राम इनकी जन्मभूमि है, परंतु बहुत कालसें ये मुंबईके रहनेवाले हो गये हैं इनका जन्म विक्रम संवत १९२२ के द्वीतीय ज्येष्ट वदि ११ के दिन हुवाथा. भाग्यवान पुत्रके उत्पन्न होनेसें पिताका व्यापार बहुत बढ गया. अंतराय कर्मके उदयसें माता इनको चार दिनका छोडके कालका ग्रास बन गई. इनके पिता और पितामह (दादा) शेठ मूळजी देवजीने बडी होशिआरीके साथ इनका पालन किया. जन्मसेंही पिताके प्रेममें पूर्ण रीतिसें रहनेसें माताका वियोग मालूम न हुआ. दुर्भाग्यसें ८ वर्षकी उमरमें इनके पिता भी स्वर्गवासी हो गये. वृद्ध पितामहके ऊपर पौत्रकी लालन पालनकी चिंता आपडी. पितामहका इनपर प्यार बढत गया. अभाग्यवश पितामह भी संवत १९३२ में इनको १० वर्षका छोडके देवलोकको प्राप्त हो गये, परंतु जन्मसेंही इष्ट वियोगका दुःख सहन करनेका अभ्यास होनेसें दुःखको इन्होंने वश कर लिया इनका धंधा सत्यवादी, निमकहलाल, और अनुभवी मुनीम शा. लखमसी गोविंदजीके हाथमें होनेसें बहुत अच्छी तरह चलता रहा. शेठ वसनजीने जैनशालामें गुजराती भाषाका और कुछ अंग्रेजीका भी अभ्यास कर लिया. कई श्रीमंतके लडके लाडसें और मातापिताके अभावसें अभिमानी, स्वेच्छाचारी, उद्धत और दुर्व्यसनी बन जाते हैं, वैसा हाल इनके मुनीमके पूर्ण अंकुशसें और निजकी बुद्धिसें न होने पाया, वरन बालक सोदागर बने रहे.

संवत १९३४ की सालमें ज्ञातिनायक शेठ नरसी नाथाके कुलकी कन्या खेतबाईसें इनका लग्न हुवा, और प्रेमाबाई और लीलबाई दो पुत्री उत्पन्न हुई. इनकी प्रथम स्त्रीके काल्वश होनेसें उक्त नरसी शेठकी पौत्री रतनबाईसें संवत १९४६ मे इनका दूसरा विवाह हुवा. और संवत १९५१ में मेघजी उपनाम काकुभाई नामक पुत्र उत्पन्न हुवा.

शेठ वसनजी अपने रोजगारमें पूरी उन्नति करते रहे. इनके चेहरे और वर्तावसें नम्रता, सादापन, विनय, गुण, शांति, धर्मप्रेम, निराभिमान, सत्यता, शुद्धात करण और नीति स्पष्ट प्रकट होती है. इन गुणोंसें अलंकृत होकर इन्होंने अपनी प्रतिष्ठा अपनी ज्ञातिमेंही नहीं वरन मुंबईके नामी सोदागरोंमें बहुत बढा ली है. हुबली, धारसी, अहमदनगर, सडवा, धुलीया, आकोला, खामगाम, आसोट, बदराण आदि नगरोंमें इनकी दुकाने हैं, और सेंकडों मनुष्य इनकी बदौलत उदरपोषण कर रहे हैं. इनके मुनीम गोविंदजी नायजीकी नेकी प्रसंशनीय होनेसें भी शेठ वसनजीको बडा सुविधा रहा. यह मुनीम अब कालवश हो गये.

यह महाशय बडे उदार हैं, और इस छोटी उमरमें भी आजपर्यंत अनुमान रु. चार लाख सुकृत और धर्मकार्यमें लगा चुके हैं, और आगेके लिये भी धर्मकार्यमें कटिबद्ध हैं. धर्ममें ऐसे दृढ हैं कि, हुबलीके जैन मंदिरका प्रबंध स्वयं करते हैं, और इनके शुभप्रयाससें बहुत रुपैया भंडारमें जमा होगया है. संवत १९३४ में इनके पिताने सायेरा—कच्छमें जो जैन

मंदिर बनवाया था, उसका प्रतिष्ठा महोत्सव आपने मुंबईमें संघ ले जाकर बडी धूमधामसें कियाथा. और रु १२ हजार खरच कर दक्षिणमें बारसी नगरमें एक जैन मंदिर बनवाया है.

संवत १९४९ में ब्राह्मणोंको भोजन कराने न करानेके विषयमें इनकी ज्ञातिमें दो पक्ष पडगयेथे, उस समय शेठ वसनजी पुरानी रीति भाति और प्रणाली अच्छी समझकर ज्ञाति शेठ नरसीनाथाके पक्षमे रहे थे दोनों पक्षके इसमें लाखों रुपये व्यय हो गये. इस बातको बहुत बुरी समझके इस रगडेको मिटानेके लिये आप ऐसा उद्यम करने लगे कि दूसरे पक्षके समझदार पुरुष भी इनकी प्रशंसा कर रहे हैं. अब झगडा मिट गया.

संवत १९५२ में अपनी ज्येष्ठ पुत्रीका लग्न इन्होने बडी धूमधामसें किया उसी सालमें इतनी छोटी उमरमें इनके शुभ गुणों और परोपकार वृत्तीको देखकर ब्रिटिश सरकारने इनको जस्टीस आफ धी पीस (J P) की सुप्रतिष्टित उपाधि दी. इनकी सादगीकी जितनी प्रशंसा की जाय इतनी थोडी है. यात्रासे वापस आनेपर मानपत्र देनेकी तयारी देखकर इन्होंने यही कहा कि, जो पैसा आप इस कार्यमें लगावें, वो कोई अच्छा कार्यमें लगावें तो उचित है जनहितमें सुवृत्तिको प्रवर्त करना मनुष्यमात्रका कर्त्तव्य है.

अपने ज्ञातिभाईओंका श्रेय करनेके लिये यह सदा तत्पर रहते हैं. सुना जाता है कि, इनका विचार एक जैन सेनिटेरियम (आरोग्य भवन) बनानेका है

संवत १९५२ में जब हिंदुस्थानभरमें दुर्भिक्ष पडा था, तब इन परोपकारी शेठने दुकालके चदोंमें अच्छी सहायता दी, इतनाही नही बरन गरीबोंको सस्ते भावसें अनाज बेचनेके लिये, आपने दुकानें खोल दी, और खरीद भावसें भी बहुत कम दामोंमें अनाज बिकवाते रहे इसी सालमें जब बंबईमें प्लेगका प्रकोप भयकर रुपसें फैला हुआ था, लोगोंमें भागाभूगी तथा धरपकड हो रही थी और सरकारी " प्लेग कमिटी " बीमारोंको सरकारी होस्पीटलमें लेजा रहीथी, उस समय आपने ज्ञातिबंधुओंको ऐसी दुःखी हालतमें देखकर अपने खरचसें ता २७ मारच १८९७ को एक " कच्छी दशा ओसवाल जैन हास्पीटल" स्थापन की जिससें रोगी सरकारी होस्पीटलमें जानेके बदले अपनी ज्ञाति होस्पीटलमें जाने लगे जहांपर बहुतसें आरोग्य होगये, और शेठ वसनजीको धन्यवाद देने लगे. धनका सदुपयोग एसेंही सत्कार्यमें करना उचित है होस्पीटलका प्रबंध ऐसा उमदा रहा कि, प्लेग कमिटी और समाचार पत्रोंने बडी प्रशंसा की थी अनुमान ६००० रुपये इन्होंने निजके खरच किये. कच्छ माडवीकी प्लेगमें और सेंकडों फंडोमें आपने अच्छा चंदा दिया और प्रत्येक अच्छे कार्यमें सहायक होना आप अपना कर्त्तव्य समझते हैं.

विद्यावृद्धिके प्रत्येक कार्यमें शेठ वसनजी मदद देते हैं. "साक्षर सहायक-प्रबोधक मंडली" के यह पेट्रन है. और गरीब विद्यार्थीयोंको, स्कुल फी व दूसरी मदद देते रहते हैं शेठ वसनजी "शेठ तापीदास वरजदास मिल" के डीरेक्टर है और हरेक सार्वजनिक कार्यमें आप प्रसन्नतासें शामिल होते हैं. इनकी उदार वृत्तीसें प्रसन्न होकर ब्रिटिश सरकारने इनको रावसाहेबकी उपाधि प्रदान की.

सहायताके सिवाय इस ग्रंथकी १२५ प्रति इन्होंने मुनिराज और पुस्तकालय आदिको भेट देनेके लिये खरीदी हैं.

हम शेठ वसनजीकी दीर्घ आयु चाहते हैं और देशहित, धर्महित और ज्ञातिहितके और भी अच्छे कार्य आप सदा करते रहें, यही हमारी अभिलाषा है. तथास्तु !!

स्वर्गवासी शेठ तलकचंद माणेकचंद, जे. पी. मुंबई.

शेठ तलकचंद जिनकी सुंदर तस्वीर अगले पृष्टपर है, असलमें सूरतके रहनेवाले थे. डच, फ्रेंच, फिरंगी, इंग्रेज आदिने प्रथम सूरत बंदरमेंही आकर अपनी कोठीएं की थीं.

इनके पूर्वज शेठ नानाभाई गलालचंद डचोंके सराफ थे. उक्त नानाभाईके पौत्र शेठ माणेकचंदके ये पुत्र थे इनकी माता बाई विजयकुंवर बडीही धर्मात्मा थीं इनका जन्म सं १८९९ क वैशाख सुदि १३ को हुवा था उनके चार भाई और तीन बहनोंमेंसे दो भाई और दो बहन विद्यमान हैं, सो भी अच्छे सुखी हैं.

छोटी उमरसेंही इनको विद्यापर भारी प्रीति थी, और उस समयमें भी इंग्रेजी आपने पढ लिया था इनका प्रथम विवाह सं० १९१५ में बाई जीवकोरके साथ हुआथा बारह वर्ष पीछे वह कालवो प्राप्त हो गई. उनसें एक पुत्र मि० सोभागचंद और एक पुत्री हुई. इनका दूसरा विवाह सं १९२८ में चंदनबाईके साथ हुवा था

शेठ तलकचंद मुंबईमें आतेही रुई, जवाहरात, शेर और बेंककी हुंडीकी दलाली आदिमें अच्छा धन और मान, प्रतिष्ठा प्राप्त करने लगे मेसर्स तलकचंद शापुरजीके नामसें धंधा करके इन्होंने लाखों रुपये पैदा किया. मि० शापुरजी एक लायक पारसी महाशय हैं.

पालीताणाके जुलम केसमें, मक्षीजी आदि केसोंमें इन्होंने अपने समय और धनका भोग देके जैन धर्मकी अच्छी सेवा कीथी.

बंबईकी "धी जैन एसोसिएशन आफ इंडिया" के ये सेक्रेटरी, वाइस प्रेसिडंट और अध्यक्ष भी थे. महुवा रीलीफ फंड, गुजरात फीवर रिलीफ फंड आदिके भी ये अध्यक्ष थे, और बंबईकी प्रत्येक कमेटीमें ये मेम्बर नियत किये जाते थे जैन पंचायत फंडका बीज भी इनहींके उद्योगसें रुपाथा, और कई जैन मंदिरके ये ट्रस्टी भी थे

शेठ तलकचंदने बडी धीरतासें Society for the Prevention of Cruelty towards Animals (प्राणि रक्षक मंडली) की स्थापना करवाके उसके खरचेके लिये लागे लगाकर अच्छा प्रबंध करवाया "लेडी साकरबाई दीनशा पीटीट हॉस्पिटल" के यह ट्रस्टी थे बहुतसी कंपनीओंके ये डीरेक्टर थे और मरकंटाईल प्रेस, कुकाबाव प्रेस आदिके एजंट थे बेंक संबंधी कार्यमें इनका अनुभव बहुत ठीक था और अच्छे मनुष्य इनकी सलाहसें चलते थे.

इन्होंने लगभग एक लाख रुपैया धर्मकार्यमें व्यय किया होगा. जैन निराश्रित फंडमें रु पांच हजार दिए थे और सूरतमें अपनी वाडीमें एक जैनमंदिर बनवाया. श्री पालीताणामें एक जैन लायब्रेरी और मुंबईमें अपनी धर्मपत्नीके नामसें "चंदनबाई कन्याशाला" स्थापन की. जैन विद्यार्थीओंको स्कॉलरशीप देते थे और कुलीन गरीब जैन कुटुंबोंकी गुप्त सहायता भी थे. ये मुंबईके जस्टीस आफ धी पीस थे. लगभग पचीस लाख रुपया इन्होंने प्राप्त किया अच्छा धन व्यय करनेके काशी थे. परंतु दैवकी गति विचित्र है नया निलकारसे

आप ता० १२ ... १८९७ को ठेगस चोपाटीके अपने बंगलेमें स्वर्गवासी हो समय इनका ... गया था. इनको दूसरी स्त्रीसें नानाभाई और रतनचंद २ पुत्री हुई. ... सभालमें ये पुत्र अच्छा विद्याभ्यास कर रहेंहें, और इस ... में अच्छा लक्ष देने लगे हैं.

इनकी आत्माको शांति हो! [illegible]

स्वर्गवासी शेठ तलकचंद माणेकचंद, जे. पी. मुंबई.

शेठ तलकचंद जिनकी सुंदर तसवीर अगले पृष्टपर है, असलमें सूरतके रहनेवाले थ डच, फ्रेंच, फिरंगी, इंग्रेज आदिने प्रथम सूरत बंदरमेही आकर अपनी कोठीए की थी इनके पूर्वज शेठ नानाभाई गलालचद इचोंके सराफ थे. उक्त नानाभाईके पौत्र शेठ माणेकचदके ये पुत्र थे इनकी माता बाई विजयकुवर वडीही धर्मात्मा थी. इनका जन्म म १८९९ के वैशाख सुदि १३ को हुआ था उनके चार भाई और तीन वहनोमेंसे दो भाई और दो बहन विद्यमान है, सो भी अच्छे सुखी है.

छोटी उमरसेंही इनको विद्यापर भारी प्रिति थी, और उस समयमें भी इंग्रेजी आपने पढ लिया था इनका प्रथम विवाह स० १९१५ मे बाई जीवकोरके साथ हुआथा बारह वर्ष पीछे वह कालको प्राप्त हो गई. उनमें एक पुत्र मि० सोभागचंद और एक पुत्री हुई. इनका दूसरा विवाह स १९२८ में चदनबाईके साथ हुवा था

शेठ तलकचंद मुंबईमें आतेही रूई, जवाहरात, शेर और बेंककी हुंडीकी दलाली आदिमें अच्छा धन और मान, प्रतिष्ठा प्राप्त करने लगे मेसर्स तलकचद शापुरजीके नामसें धंधा करके इन्होंने लाखों रुपये पैदा किया. मि० शापुरजी एक लायक पारसी महाशय हैं.

पालीताणाके जुलम केसमें, मक्षीजी आदि केसोंमें इन्होंने अपने समय और धनका भोग देके जैन धर्मकी अच्छी सेवा कीथी.

बंबईकी " धी जैन एसोसिएशन आफ इंडिया " के ये सेक्रेटरी, वाइस प्रेसिडेंट और अध्यक्ष भी थे. महुवा रीलीफ फंड, गुजरात फीवर रिलीफ फंड आदिके भी ये अध्यक्ष थे, और बंबईकी प्रत्येक कमेटीमें ये मेम्बर नियत किये जाते थे. जैन पचायत फंडका बीज भी इन्हीके उद्योगसें रुपाथा, और कई जैन मंदिरके ये ट्रस्टी भी थे

शेठ तलकचदने बडी वीरतासें Society for the Prevention of Cruelty towards Animals (प्राणि रक्षक मंडली) की स्थापना करवाके उसके खरचेके लिये लागें लगाकर अच्छा प्रबंध करवाया "लेडी साकरबाई दीनशा पीटीट हॉस्पिटल" के यह ट्रस्टी थे बहुतसी कंपनीओंके ये डीरेक्टर थे और मरकंटाईल प्रेस, तुकाबाब प्रेस आदिके एजंट थे येक सबंधी कार्यमें इनका अनुभव बहुत ठीक था और अच्छे मनुष्य इनकी सलाहसे चलते थे.

इन्होंने लगभग एक लाख रुपैया धर्मकार्यमें व्यय किया होगा. जैन निराश्रित फंडमें रु पांच हजार दिए थे और सुरतमें अपनी वाडीमें एक जैनमंदिर बनवाया. श्री पालीताणामें एक जैन लायब्रेरी और मुंबईमें अपनी धर्मपत्नीके नामसें " चदनबाई कन्याशाळा " स्थापन की; जैन विद्यार्थीओंको स्कॉलरशीप देते थे और कुलीन गरीब जैन कुटुंबोको गुप्त सहायता भी करते थे ये मुंबईके जस्टीस आफ धी पीस थे. लगभग पचीस लाख रुपैया इन्होंने प्राप्त किया और धर्मकार्यमें अच्छा धन व्यय करते थे. परंतु दैवकी गति विचित्र है नया बिल फाटे फटेही आप ता. १२ फरवरी सन् १८९७ को ग्रेगस चोपाटीके अपने बंगलेमें स्वर्गवासी हो गये मरण समय इनका वय ५६ वर्षका था. इनको दूसरी स्त्रीसें नानाभाई और रतनचंद २ पुत्र और ३ पुत्री हुई मी. शापुरजीकी संभालमें ये पुत्र अच्छा विद्याभ्यास कर रहेहैं, और मी. नानाभाई इस छोटी उमरसें भी धर्मकार्यमें अच्छा लक्ष देने लगे हैं.

ऐसे धर्मात्मा पुरुषको धन्य है, इनकी आत्माको शांति हो ! यह हमारी प्रार्थना है !!!

स्व० मी. वीरचंद राघवजी गांधी, बी. ए., एम. आर. ए. एस.

इन वीर पुरुषका जन्म महुवा–काठीआवाडमें ता २५ अगस्त सन १८६४ ई. को हुवा था इनके पिता बडे धर्मात्मा थे इन्होंने भावनगरमें सन १८८० में पहेले नंबर "मेट्रीक्युलेशन" में पास होकर सर जसवतसिंहजी स्कालरशिप प्राप्त की, ये एलिफन्स्टन कॉलेजसें बी. ए. पास करके सरकारी स्कालरशीपके भी भागी बने.

सन १८८५ में जैन एसोसिएशन ऑफ इडियाके ये सेक्रेटरी हुवे सरकारी सोलीसीटरके वहां ये आरटीकल्ड कलार्क हुवे इन्होंने पालीताणा जुलमकेसमें और मखसीजी केसमें भी अच्छी मदद दी थी.

सन १८९१ में समतसीखरके तीर्थपर चरबीके कारखानेके मुकदमेंकी अपीलमें युक्तिके साथ रायबहादूर बद्रीदासजीको सहायता देकर जीत लिया

सन १८९३ में चीकागो–अमेरिकामें जब विश्व प्रदर्शनी हुइथी और वहाकी धर्मसमाज (*Worlds Parliament of Religeons*) में श्रीमद् आत्मारामजीको निमत्रण आया तब जैन धर्मके प्रतिनीधि होकर आप चिकागो गये और अध्यक्ष डा० बॅरोझ आदिकी ओरसें अच्छा मान पाया. धर्मसमाजमें जैनधर्मपर एक सार गर्भित व्याख्यान दिया अमेरिकामें दो वर्ष रहकर बोस्टन, वॉशींगटन, न्युयोर्क, रोचेस्टर, क्लीवलेंड, केसाडेगा, वटेवीया, आदि नगरोंमें फिरकर आपने ५३५ भाषण दिये किसी २ भाषणमें दस २ हजार मनुष्य एकत्र हो जातेथे कई जगह जैन धर्मके अभ्यासके लिये क्लास खोले गये चिकागो और केसाडेगासमाजकी ओरसें इनको पदक दिये गये थे. वॉशींगटनमें "गाधी फीलोसोफीकल सोसायटी" इन्होंने स्थापित की, जिसके अध्यक्ष वहाके पोस्टमास्तर जनरल मी. जोसफ स्टुअर्ट हुए इनके उपदेशसें हजारों मनुष्य मासाहार त्यागी (वेजीटेरीयन) हो गये, कई लोग ब्रह्मचर्यव्रत पालने और नवकार मत्रका ध्यान धरने लगे

सन १८९५ में साऊथ प्लेस चापल और रोयल एशिएटिक सोसायटीमें इन्होंने लंडनमें लॉर्ड रेके अध्यक्षपणेमें भाषण दिये, और ये सोसायटीके मेंबर नियत हुवे फ्रास, जर्मनी होते हुए, आप जुलाइ मासमें मुबई आये विलायतादि विदेशमें ये शुद्ध आहार लेते रहे हजारों विद्वानोंके साथ परिचय करके बडा अनुभव लियाथा बबईमें पीछा आनेपर एक बडे बीर पुरुषके समान इनका आदर हुआ जैनोंकी ओरसे शेठ प्रेमचद रायचदके सभापतित्वमें एक भारी सभामें ता २०–७–९६ को एक "मानपत्र" दिया गया था.

यहां आनेपर इन्होंने सोलीसीटरका अभ्यास पीछा आरभ किया था परतु अमेरिकनोंने इनको वापस बुलाया वो जैनभाईयोंकी ओरसें अच्छा सत्कार और विदाई पाकर ये अपनी स्त्री और पुत्र मोहनको साथ लेकर गये. पंडित फतेहचद लालन भी इनको लंडनमें जा मिले.

अगस्त सन १८९८ में ये वापस आये. स्व० मी. जस्टीस महादेव गोविंद रानाडेके सभापतित्वमें ता. २१ सीतंबरको इनको मानपत्र दिया गया. दूसरेही दिन आप अमेरिकाको प्रयाण कर गये हिंदुस्तानके दुर्भिक्ष पीडित लोकोंके फोटो पेश करके वहांके लोकोंको प्रेरणा करके आपने मकईकी स्टीमरें हिंदुस्तानको भिजवाई थी. हिंदकी स्त्रियोंको शिक्षा दिलानेकी ओर भी इन्होंने वहांके लोकोंका ध्यान आकर्षित कियाथा. आपने कई पुस्तक भी बनवाये हैं

आप बारीष्टरकी परिक्षा पास करके सन १९०१ में मुबई पधारे. आतेही बीमार हो गये और वृद्ध अंधी माता, स्त्री, पुत्रादि कुटुंबको और समग्र जैन समुदायको शोकसागरमें डुबा गये. हाय! धन्य है ये वीररत्नको! एसे पुरुष सदा अमर है!!

मी० अमरचंद पी० परमार. (सिरोही–सूरत–मुंबई.)

इनका जन्म स १९२० के महा सुदी ८ को हुवा था ये मूल इलाके सिरोहीके झाडोली गाम रहनेवाले हैं इनके पूर्वज उदेपुरमे आये थे और ये दसा ओसवाल बालफना (बाफणा) परमार गोत्रके हैं इनके वालकका रक्षण हुवाजिससे बाफणा कहलाये कि इस गोत्रमें सर्पके काटनेसें कोई नही मरा

मा अमरचदके परदादा शा वजाजी राजाजीको चार पुत्र शा पन्नाजी, ठाकरसी, दुर्लभजी ,रणछोडजी और देवन हुए शा. पन्नाजी और रणछोडजीका परिवार सुरतजिल्लेमें है और ठाकरसीका नाणा, मारवाडमें है शा दुर्लभजीके पाच पुत्र शा दाह्याभाई, परागजी, पदमाजी, गोविंदजी और हीराचद ये उनमेंसे तीन भाईयोंके कुटुबमें [illegible], पानाचद, रामचद, भगवान, उमेदचद, पुनमचद, माणेकचद, मगन, दलीचद आदि विद्यमान है

परमाजीको झवेरचद, नरभेई, मूळचद, अमरचद, गुलाबचद ये पुत्र और रामकोर और ककुबाई नामक पुत्री हुई था उनमेंसे झवेरचद, अमरचद और बाई रामकोर विद्यमान है झवेरचदके तीन पुत्र [illegible], रायचद और तळकचद तथा तीन पुत्री है

मा अमरचदके दादाने मारवाडसे आकर सूरतके पास बडोद, भेस्तान आदि ग्रामोंमें निवास करके [illegible] धन प्राप्त किया था इनके पिता बहुतही भोले स्वभावके थे इसलिये उनके दूसरे भाईओंने उनको घरमें कुछ भी दिये विना निकाल दिये थे, और उनको फेरी आदिसे अपना निर्वाह करना पडाथा एकवार [illegible] भी कठिन समय इनपर आ पडा था कि एक पुत्रके जन्मके समय खर्चके रुपयेके लिये उनको घर [illegible] फिरना पडाथा परतु ईश्वर कृपासे फिर उनकी स्थिति अच्छी होगई थी उनके भाई झवेरचदने पिताको [illegible] मदद देकर उनके धंधेको ठीक जमा दिया था और लघुभाईको पिताकी इच्छानुसार सूरतमें जाकर [illegible]शाला आरभ किया था कडोद–गुजरातके रहनेवाले स्व० दळपतराम नथुराम व्यास इनके बालस्नेही थे, दोनों एकही साथ पढते थे दोनोमें ऐसी गाढी मित्रता थी कि साधारणत ऐसा स्नेह देखनेमें आताही नही हैं वह मित्रवर सन १८९९ में इन्हीके मकानपर कालवश हुए, जिसका इनको पूरा रज रहा

इनकी वहन रामकोर छोटी अवस्थाहीसे विधवा होगई थी, परतु उसी समयसे उन्होंने धर्मविद्याका अभ्यास कर धर्मकार्यमें रुचि बढाई और समय २ पर भीड पडनेके समय अपने भाईयोंको अभीतक मदद करती रही मी अमरचद दस वर्षकी अवस्थामें प्रथम गोपीपुरा ब्राच स्कूलमें भरती हुए और चढते नवर पास होकर पारितोषिक और मास्टरोंकी कृपा सपादन करते रहें पढनेमें इनका ऐसा अनुराग था कि एक समय इनके भाई किसी सबधीके विवाहमें जानेके लिये छुट्टी लेनेको मास्टरके पास जाने लगे परंतु इस बातकी इनको खबर मिलतेही इन्होंने अपने मास्टरसे खानगीमें कह दिया कि मेरी छुट्टी स्वीकार मत करना, हुनरका इनको बहुत अनुराग था, इसलिये इसी छोटी वयमें पुस्तकोंकी जिल्द बाधनी, साईन बोर्ड लिखना, ऊन और रेशमके बढिया फूल–वृक्ष बनाना, एनग्रेविंग, ड्राईंग, प्लास्टर, घडी बनाना आदि कई काम देख २ कर सीखलिये थे, और स्कूलके साथी इनको बहुत चाहते थे ये गरीबी और बहुत सादगीमे पढते रहे, यहातक कि पढनेकी पुस्तकें भी उधार लेकर अपना काम चलाते थे. थोडा विद्याभ्यास होजानेपर इन्होंने एक रात्रिशाला खोली और दूसरे लडकोंको खानगीमें पढाकर अपने खरचेका बोझा पितापर नहीं पडने दिया इनके मातापिताको सुख भोगनेका समय नही आया सोळा बरसकी उमरमें इनकी माताका स्वर्गवास होगया और बादमें इनके पिता भी इस ससारको छोड गये

सन १८८२ मे सूरत हायस्कूलमें इन्होंने मट्रीक्युलेशनकी परिक्षा पास की मेसर्स पाठक, मोदक, वाडीआ आदि मास्टरोंकी पूरी प्रीति संपादान की थी स्कूलमें कविशास्त्रका भी अभ्यास करलिया. छोटी उमरसें इनको हिंदुस्तानी कवित्त याद करने और नये बनानेका बडा भारी प्रेम था स्कूलके प्राईस–डिस्ट्रीब्युशनमें सौदा [illegible] गुना देते थे, इन्होंने सूरतके डीस्ट्रीक्ट जज (बादमें हाईकोर्टके जज और कौंसलर) ऑन० डा बर्डवुडकी और मुंबईके ना गवर्नर सर जेम्स फरग्युसनकी भी, कविताद्वारे विशेष कृपा प्राप्त की थी.

फेर इनके विद्याभ्याससे प्रसन्न होकर सचानेके एक श्रेष्ठ गृहस्थ शेठ मानाजीने फर्म्योंके विरोध कर पर भी अपना पुत्री केसरबाईका विवाह स १९३४ मे इनस करादिया तदनतर ये बडोदा कालजमें भरती हुए यहां प्रीवायस्का परीक्षा देकर इनको अपने भाईकी आज्ञानुसार उनके दूसरे विवाहका यत्न करनेके लिये पढना छोडक सिरोही जाना पडा ये प्रथम रु० ४ महावारके नोकर हुवे अपने बुद्धिबळ और कार्यकुशळतासें इन्होंने सिरो दरबारकी पूरा कृपा प्राप्त का महकमे महालमें नोकरी करके पो० एजंट करनल पाऊलेट साहबके पा ये सिरोहीके एजसा वकाल मुकर्रर हुवे जोधपुर, आबू, जेसलमेर आदिके दौरेमें इन्होंने एजट, दरबार आदिक अ छा कृपा संपादन की सन १८८९ में उक्त कर्नेल पाऊलेट साहबने इनको धाणेरावके ठाकुरके ट्रष्ट मुकरर किये इन्होंने मेओ कॉलेजमें कर्नल लोक साहबसें अच्छा कृपा पाई और राजकुमारोंसे दोस्ताना पैद किया इसके बाद जोधपुरके महाराजाधिराज कर्नल सर प्रतापसिंहजीके पास रहकर इन्होंने अच्छा यश पाय और उनकी पूरी कृपा प्राप्त का उनके और था जोधपुर दरबारके विलायतसे आनेपर मुंबईमें उनके सन्मानार्थ बडा सभाका प्रबंध करके मानपत्र दिये ये रायबहादुर मुनशी हरदयालसिंहजी इनको एक सच्चा प्रेमपात्र गिनते थे वे जोधपुरमें कई बार इनको अच्छा पद भी देने लगे थे परंतु धाणेरावके नगरशेठ चेनाजी नरसींगजी उनके साझेमें इन्होंने सन १८८९ में "धी इडीयन एड फारिन एजसी कुपनी" खोली जो विलायती माल और रजवाडोंका काम करके अच्छी तरह चल निकली

बाद इनके उद्योगमे "धी रायन प्रींटींग प्रेस कु०ली०" स्थापित हुई बहुतसे शेर अपने मित्रवर्गमेंही दिये, परतु देखरेखकी कमी, और एजट डारेक्टरोंके कुसपसे वह टूटगइ, जिससे इनको बडा खेद हुआ और नुकसानभी पूरा रहा

मुंबईमें आनेके बाद ये धर्मसेवा और सभा आदि कामोंमें लक्ष्य देने लगे और हरेक धर्मसभामें अगुआ बनते हैं इनका वक्तृत्व और शीघ्र कविता बनानेकी शक्ति प्रसिद्ध है नेशनल कॉंग्रेसमें, प्रोवीन्श्यल कॉनफरन्स आदि सभाओंमें ये बहुधा हिंदी कविता सुनाते हैं जैन युनायन क्लब, हेमचद्राचार्य अभ्यास वर्ग, मेवाड मंदिर जीर्णोद्धार सभा, मुंबईकी जैन प्लेग होस्पीटल, एटावालीसिकशन सोसायटी और कई कमीटीके ये सेक्रेटरी, और जैन तथा दूसरा सभाके मेंबर रहे हैं, और सन १९०० में "गुजरात फॅमिन रिलीफ फड" का प्रबध सेक्रेटरी बनके इन्होंने बहुत सफलतासे चलाके सुवर्णपदक (चांद) प्राप्त किया है जैन मायग्रेशन और हास्पीटलके सबंधा इनोंने बहुत परिश्रम उठाया था गुल अफशान पत्रके ये एडीटर थे और परमारथ्यनाके रमुजी लेखको याद करते हैं मुंबई समाचार और जैन पत्रोंके ये लेखक हैं, तथा ओसवंश, आत्मारामजी चरित्र, अमरकाव्य, जैन तीर्थावली, नियमावली आदि कई पुस्तक भी इन्होंने लिखी है मा वीरचद गाधीके साथ अमेरिका जानेकी इनकी भी तयारी हुई था, परंतु सासारिक विघ्नसे रुक गये

सन १८९९ में इनकी धर्मपत्नि जो पढी लिखी और धर्मिष्ट थी कालवश होगई, जिससे इनको दो पुत्र और दो पुत्री हुवे थे, परंतु अभी एकही पुत्री हाजिरता है इनका दूसरा विवाह सिरोहीमें हुवा

इन्होंने मद्रास कर्नाटक, दक्षिण दिल्ली, आगरा, उत्तर हिंदुस्तान, पजाब, काश्मीर, कांगडा, हिमालय, राजपूताना आदि प्रदेशोंमें बहुत मुसाफरी की है और स्वपराक्रम तथा बुद्धिबलसे हजारोंही मित्र इनके होगये हैं

इनपर कई तरहकी आपदाए आनेसे तत्वनिर्णयप्रासाद ग्रंथ देरसे प्रसिद्ध हो सका परंतु इस ग्रंथको अद्वितीय बनानेमें इन्होंने पूरा परिश्रम किया है, और ग्रंथकी एक अच्छी प्रस्तावना लिखी है

इनमें यह एक बडी बात है और इनका अनुभव हरेक लाइनमें इतना बढा हुआ है, कि कैसाही कठिन काम हो परंतु यह उसको पूरा करहा देते हैं परंतु प्रारब्ध इनकी तरफ कुछ टेढा नजरसे देख रहा है

सन १९०३ के सितंबरमें मुंबईमें दूसरी जैन (श्वेतांबर) कॉन्फरन्स जो भरी गई, उसकी इन्टेलिजंस, हेल्थ, एड वोलटीयर कमिटीके ये सेक्रेटरी मुकर्रर हुवे थे कॉन्फरन्सका काम बहुतही अच्छी तरह इन्होंने बजाया जो इनकी पेश की हुई लबी रिपोर्टसे जाहर होता है प्रेसिडट आदिके पूरे प्रेमपात्री बने वहां हानिकारक रीवाजोंके उपर उमदा भाषण भी दियाथा और २०० वॉलंटीयरकी फोजने अपने कार्य, ड्रेस, और दमामसे सबको चकित कर दिये थे इनको दीर्घायु चहाते हैं कि ये धर्मकार्यमें सदा कटिबद्ध रहें

लेखक—भगु फतेहचद कारभारी (एडिटर, जैनपत्र)— एक सच्चा प्रिय मित्र.



भावाभिवार अमरचंद पी० परमार, प्रसिद्धकर्त्ता तत्वनिर्णयप्रासाद ग्रंथ. मुंबई,(जन्म सं० १९२०)

MR A P PARMAR

फिर इनके विद्याभ्याससे प्रसन्न होकर सचानके एक सद्गृहस्थ शेठ मानाजीने कईयोंके विरोध करने पर भी अपनी पुत्री केसरबाईका विवाह स. १९३४ में इनसे करादिया तदनतर ये बडोदा कालेजमें भरती हुए यहांसे प्रीवायसकी परीक्षा देकर इनको अपने भाईका आज्ञानुसार उनके दूसरे विवाहका यत्न करनेके लिये पढना छोडकर सिरोही जाना पडा ये प्रथम रु० ४ महावारके नोकर हुये अपने बुद्धिबळ और कार्यकुशळतासे इन्होंने सिरोही दरबारकी पूरी कृपा प्राप्त की महकमे महालमें नोकरी करके पो० एजट करनल पाउलेट साहबके पास ये सिरोहीके एजसी वकील मुकर्रर हुवे जोधपुर, आबू, जेसलमेर आदिके दौरेमें इन्होंने एजट, दरबार आदिकी अच्छी कृपा संपादन की सन १८८९ में उक्त कर्नल पाउलेट साहबने इनको घाणेरावके ठाकुरके ट्यूटर मुकरर किये इन्होंने मेओ कॉलेजमें कर्नल लोक साहबसे अच्छी कृपा पाई और राजकुमारोंसे दोस्ताना पैदा किया इसके बाद जोधपुरके महाराजाधिराज कर्नल सर प्रतापसिंहजीके पास रहकर इन्होंने अच्छा यश पाया और उनकी पूरी कृपा प्राप्त की उनके और श्री जोधपुर दरबारके विलायतसे आनेपर मुबईमें उनके सन्मानार्थ बडी सभाका प्रबंध करके मानपत्र दिये थे रायबहादुर मुनशी हरदयालसिंहजी इनको एक सच्चा प्रेमपात्र गिनते थे वे जोधपुरमें कई बार इनको श छा पद भी देने लगे थे परतु घाणेरावके नगरशेठ चेनाजी नरसींगजी उनके साझेमें इन्होंने सन १८८९ में "धी इंडीयन एड फारेन एजसी कुपनी" खोली जो विलायती माल और रजवाडोंका काम करके अच्छी तरह चल निकली

बाद इनके उद्योगसे "धी रायन प्रींटींग प्रेस कु०ली०" स्थापित हुई बहुतसे शेर अपने मित्रवर्गमेंही दिये, परतु देखरेखकी कमी, और एजट डाइरेक्टरोंके कुसपसे वह टूटगई, जिससे इनको बडा खेद हुआ और नुकसानभी पूरा रहा

मुंबईमें आनेके बाद ये धर्मसेवा और सभा आदि कामोंमें लक्ष्य देने लगे और हरेक धर्मसभामें अगुआ बनते है इनका वक्तृत्व और शीघ्र कविता बनानेकी शक्ति प्रसिद्ध है नेशनल कॉंग्रेसमें, प्रोवीन्शयल कॉनफरन्स आदि सभाओंमें ये बहुधा हिंदी कविता सुनाते हैं जन युनायन क्लब, हेमचद्राचार्य अभ्यास वर्ग, मेवाड मदर जीर्णोद्धार सभा, मुबईकी जैन प्लेग होस्पीटल, एज्युकेशनल एसोसियेशन सोसायटी और कइ कमीटीके ये सेक्रेटरी, और जैन तथा दूसरी सभाके मेंबर रहे हैं, और सन १९०२ में "गुजरात फेमिन रिलिफ फड" का प्रबंध सेक्रेटरी बनके इन्होंने बहुत सफळतासे चलाके सुवर्णपदक (चाद) प्राप्त किया है जैन कान्फ्रेन्स और हास्पीटलके सबंध इन्होंने बहुत परिश्रम उठाया था गुल अफशान पत्रके ये एडीटर थे और परमार्थवनके रमुजी लेखको याद करते हैं मुबई समाचार और जैन पत्रोंके ये लेखक हैं, तथा ओसवाल, आत्मारामजी चरित्र, अमरकाव्य, जेन तत्त्वादर्श, नियमावली आदि कई पुस्तक भी इन्होंने लिखी है मा वीरचद गाधीके साथ अमेरिका जानेकी इनकी भी तयारी हुई था, परतु सांसारिक विघ्नसे रुक गये.

सन १८९९ में इनकी धर्मपत्नि जो पढी लिखी और धर्मिष्ठ थी कालवश होगई, जिससे इनको दो पुत्र और दो पुत्री हुवे थे, परतु अभी एकही पुत्री हीरागना है इनका दूसरा विवाह सिरोहीमें हुवा

इन्होंने मद्रास कर्नाटक, दक्षिण दिल्ली, आगरा, उत्तर हिंदुस्तान, पजाब, काश्मीर, कागडा, हिमालय, राजपूताना आदि प्रदेशोंमें बहुत मुसाफरी की है और स्वपराक्रम तथा बुद्धिबलसे हजारोंही मित्र इनके होगये है

इनपर कई तरहकी आपदाए आनेसे तत्त्वनिर्णयप्रासाद ग्रथ देरसे प्रसिद्ध हो सका परतु इस ग्रथको अद्वितीय बनानेमें इन्होंने पूरा परिश्रम किया है, और ग्रथकी एक अच्छी प्रस्तावना लिखी है

इनमें यह एक बडी बात है और इनका अनुभव हरेक लाइनमें इतना बढा हुआ है, कि कैसाही कठिन काम हो परतु यह उसको पूरा करदेते हैं परतु प्रारब्ध इनकी तरफ कुछ टेढी नजरसे देख रहा है

सन १९०३ के सितबरमें मुबईमें दूसरी जैन (श्वेताबर) कॉन्फरन्स जो भरी गई, उसकी रिसेप्शन, हेल्थ, एड वोलन्टीयर कमिटीके ये सेक्रेटरी मुकर्रर हुवे थे कॉन्फरन्सका काम बहुतही अच्छी तरह इन्होंने बजाया जो इनकी पेश की हुई लंबी रिपोर्टसे जाहर होता है प्रेसिडट आदिके पूरे प्रेमपात्री बने वहा, हानिकारक रीवाजोंके उपर उमदा भाषण भी दियाथा और २०० वॉलटीयरकी फोजने अपने कार्य, ड्रेस, और दमामसे सबको चकित कर दिये थे इनको दीर्घायु चहाते हैं कि ये धर्मकार्यमें सदा कटिबद्ध रहें

लेखक—भगु फतेहचद कारभारी (एडिटर, जैनपत्र)— एक सच्चा प्रिय मित्र.



[illegible] अमरचंद पी० परमार, प्रसिद्धकर्त्ता तत्वनिर्णयप्रासाद ग्रंथ. मुंबई (जन्म सं० १९२०)

MR A P PARMAR

तत्वनिर्णयप्रासादग्रंथके प्रथम सहायक ग्राहकोंके नाम.

गुजरांवाला—पंजाब

लाला नानकचंद दौलतराम ५
लाला रामेशाह चेतराम ४
लाला करमचंद मथुरादास २
लाला भवानीयामल ठाकरदास २
लाला गणामल जगनाथ २
लाला मेलुमल भागुमल १
लाला जयदयाल लभुराम १
लाला हुकमचंद फगुमल १
लाला कहानचंद हरीचंद १
लाला इश्वरदास दीवानचंद १
श्री मुनि आत्मारामजी जैनगायनसभा
द्वा लाला कहानचंद प्रमुखाल १
लाला वेलीराम चुनीलाल १
लाला मुलराज कालुमल १
लाला गणेशदास जवींदामल १
लाला मद्दामल माणेकचंद १
लाला गडामल तीरथराम १

रामनगर-पंजाब

लाला अर्जुनमल भीमामल २
लाला हेमराज हरदयाल २

रावलपींडी—पंजाब

श्री जैनधर्म भास्कर सभा द्वा
लाला उत्तमचंद पींडीदास ५
साधु हरभगवानदास १

अप्तु—पंजाब.

लाला देवराज हेमराज ... १
लाला रामचंद रूपातराय १
लाला हेमराज जीवणमल १
लाला बधावामल बोघामल ... १

हुशीआरपुर—पंजाब

लाला गुज्जरमल मेहरचंद दौलामल ४
भक्तजी नथुमल फतुमल सुंदरदास २
लाला गोकलमल अवारमल मेहरचंद २
लाला मानामल सुंदरदास ... १
लाला नथुमाल कँलामल... ... १

लाला छज्जुमल गुजरमल १
लाला बिशुमल हुकमचंद १
लाला बसतामल मेहरचंद १
लाला शावणमल गारामल १
लाला पालामल अमरनाथ १
लाला जमवनराय फेरुमल, टांडा १
लाला रुपनलाल भावडा-गडदीवाला १
लाला रामचंद खरायतीराम,
मीआणी १

जीरा—पंजाब

लाला राधामल इश्वरदास २
लाला लालुमल मेलामल १
लाला जयदयाल लभुराम १
लाला दयाराम प्रभुदयाल १
लाला बख्शिमल हरदयाल १
लाला टेकचंद दीनानाथ १
लाला सुंदरमल देवीदीयाल १
लाला कीरपाराम माघीराम १
लाला मतावमल गिंधुमल १
लाला कीरपाराम धनीराम १
लाला मामराज गणपतराम १
लाला गुलावमल गंडामल १
लाला मिल्खीराम बशवरदास १

शहर अंबाला—पंजाब

लाला नानकचंद गोंदामल २
लाला गंगाराम बनारसीदास २
लाला धमतामल उत्तमचंद २
लाला बजीरमल भक्त ... १
लाला पन्नालाल जीरेवाला १
लाला गिंधुमल मावडा १
लाला जक्तुमल सदाराम ... १
लाला जातिमल खुशमल अग्रवाल १

अमृतसर—पंजाब

लाला फगुमल महाराजमल ५
लाला राधाकिसन पन्नालाल ५
लाला मूलचंद मोतीराम ... १
लाला दित्तामल चुनीलाल ... १

लुधीआना—पंजाब

लाला घोलुमल गोपीमल ४
लाला शिब्बुमल सादीराम हुकमचंद २
लाला प्रभदियाल समुमल २
लाला नंदलाल मिल्खीमल १
लाला शावनमल गोपीमल १
लाला राधामल गणपतमल १
लाला रामदिनामल क्षत्री १
लाला विहारीमल माधाराम ... १

नारोवाल—पंजाब

लाला रलदुमल जगनाथ ४
जीवणमामा फगुहजारी १
लाला ठाकरदास खरायतीमल १
लाला मथुरादास गुरादत्ता उत्तमचंद १
लाला पालामल पजुमल १

जडीआला—पंजाब

श्री संघ जडीआला ज्ञानखाता .१५

पानसतरा—पंजाब

लाला गोपीनाथ अनंतराम १
लाला प्रेमचंद नीरोदरीयामल २
लाला ताराचंद वेलीराम २
लाला नहालचंद रामलाल टांडेवाले १

मालेर कोटला-पंजाब.

श्री भंडारजी १
लाला बसीराम शिवचंद ... १
लाला गैंडराय भगवानदास ... १
लाला देवीचंद रामप्रसाद .. १
लाला मगतराय दित्ताराम ... १
लाला मुनसीराम पन्नालाल . १
पूज्य मोहनरिपजी १
लाला मगतराम मुनशीमल . १
लाला अनंतराम उमरावचंद . १
लाला काह्नेमल पूरनचंद ... १
लाला सरनामल केवलीमल . १
लाला प्रद्युमन मेहेरचंद ... १

मुतफरकात—पंजाब

लाला हीरालाल फगुमल, लाहोर २
लाला रामरतन हरनाममल, शकर
जिल्हा जलंदर... ... ... १

मुनिजी वसावर ऋषि केशर ऋषि, जलधर १
लाला वससीराम वशीलाल, नाभा १

खंभात-गुजरात

श्री खमात जैनशाला .. ४
शा अमरचद प्रेमचद ४
शा पोपटचद मुलचंद दीपचद १
शा दीपचद पानाचद १
शा साराभाइ सोमचद .. १
शा सुखलाल सुखचद १
गांधी गुलाबचद कालीदास .. १
शा बापुलाल खुबचद .. १

पालणपुर-गुजरात

रा रा मेताजी मगलजी इश्वरमाइ २
पारीख अमुलखभाइ खुबचद २
रा रा मेता माणेकचद जवेरचद १
रा रा मेता वाहाल ल्वजी १
शा आवाभाइ कवरा १
पारीख मासुखलाल पानाचद , १
शेठ गांधी नहालचद रायचद .. १

सुरत-गुजरात.

शेठ मगनलाल मलुकचंद ५
शा. कपुरचंद लालभाइ १

शा फुलचद हीरचद १
शा प्रेमचद अभेचद १
शेठ नानचद रायचद १

मुंबई

शेठ तलकचद माणेकचद ५१
बाबु पनालाल पुरनचद १५
शेठ दवजी वरसग १५
शेठ चापसी परवत १०
शेठ फकारचद प्रेमचद १०
झवेरी धमचद उदयचद ५
शेठ जमनाभाई भगुभाइ ५
शेठ मनसुखभाइ भगुभाइ ५
शेठ श्रीमोवनदास पुरुषोत्तम १
शा मोतीचद नयमल १
शा धीरचद डायाचद १
शा मनरुपलाल मछाचद १
शा हरगोवनदास पुनमचद १
शा चेनमलजी नरसींगजी १
शा जेठाभाइ कल्याणजी १

माणसा—गुजरात

शा हाथीभाइ मुलचद शराफ ५

मांडल—गुजरात

शेठ भायचद गोमागचंद १
शा जीवराज डामरसी १

मुतफरकात

शेठ वाभजी हीरजी, कलकत्ता
श्री हरजी जैनशाला-जामनगर
शेठ नगीनदास वर्धमानदास-ड्रा
शेठ मनोरदास सुदरजी-एडन
लाला सुखदयाल शामलाल-सीरा
लाला जवाहीरलाल ओसवाल-ई दराबाद
मा वाडीलाल मगनलाल वजीफदार-सीतापुर
शेठ छीवलाल बादरचद, राधनपुर
मेता हीराचद फुलचद-वला
जवेरी बालाभाइ छोटालाल-पादरा
महेता शातिलाल जेसगभाइ-साणद
शा हीरालाल श्रीमोवनदास-रगुन
शा गोरधनदास पीतांबरदास-जबुसर
शा फुलचद रामाजी-जलालपूर
मुनिराज अमरविजयजी मुनिमाल विजयजी पाठशाला-पुस्तकालय हा शास्त्री खुशाल तीलोकचद १
मुनि महाराज वृद्धिचदजी पुस्तकालय, हा शा गुलाबचद जीवाभाई महेता-वळा १

प्रथम ग्राहकोंके नाम

मुंबई

शेठ मोतीचद देवचद . १०
शेठ शोभागचद तलकचद ५
शेठ तलकचद जेठा २
शेठ चतुभुज गोवरधन २
श्री गोडीजी जैन पाठशाला १
शेठ दीपचद माणेकचद १
शेठ मोहनलाल पुंजाभाइ १
शेठ तुलसीदास मोहनजी १
शेठ केशवजी मामजी १
शेठ विकमसी केशवजी , , १
शेठ भारसी कसुलस १

शेठ धनजी चतुरभुज . १
शेठ झवेरचद गुमानचद १
शेठ रायचद केसरीचद ... १
झवेरी धालचद काशीराम १
शेठ रायचद मानाचद १
शेठ रतनलाल मगनलाल . १
शेठ झवेरचद कल्याणजी १
शेठ रावजी साकलचद १
शेठ हीरजी घेलाकरण १
शेठ छोगालाल प्रेमजी १
शेठ झवेरचद ईदरजी . १
शेठ मदनजी जेचद १

शेठ हीरजी हवराज १
मुनीम मगीलाल छगनलाल १
शा ललुभाई गुलाबचद १
जवेरी भोगीलाल लालजाभाइ १
जवेरी छोटालाल ललुभाइ १
मास्तर केशवलाल वाडीलाल १
शेठ रुपचद रंगीलदास १
मी० हाथीभाइ मूलचद. १
मी हेमचद अमरचद १
शेठ जवेरचद गुमानचद . १

अमदावाद—गुजरात

शेठ जयसगभाइ चुनीलाल... ... ५

शा.भाइ मुलचंद वखतचद . ४
शा रूवचलाल चुनीलाल १
डाक्टर जमनादास प्रेमचद १
शा केशवलाल परशोत्तम १
शा मोहनलाल मगनलाल ... १
शा अमचद परशोत्तमदास १
डाक्टर फुलचद हेमचद . १
शा हरनचद रायचद १
श्री मोतीलाल दोलतराम १
शा परशोत्तमदास जठाभाइ १
शा गीरधरलाल हीराभाइ . १
शा शाकलचद १
शा त्रिकमभाइ आलमचद .. १
शा मनसुखराम नाहानचद १
शा हीराचद वखतभाइ १

सुरत—गुजरात

सुरत जैन विद्याशाला २
झवेरी मोतीचद रुपचद १
श्री नेमीश्वर पुस्तकालय . १
शा गेलाभाइ वखतचद १

भरुच—गुजरात

शा अनुपचद मलुकचद १
शा दलपत दुलभ १
शा धोलदास लालजी १
शा मगनलाल मेलापचद १
शा माणेकचद परभुदास १
शा लखमीचद मेलापचद १
शा नगीनदास वमलचद १
शा नगीनदास उदेचद १
शा बापुभाइ अमरचद . १
शा गुलाबचद हरीभाइ १
शा लखमीचद मोहनलाल . १
शा मोहनलाल नेमचद . .. १
शा. मगनलाल घमलचद १
शा गुलाबचद केशवजी . १
शा अमरचद देवचद .. १
शा रुपचद जवेरचद १
शा रतनचद मगनलाल १
शा सुरचद कशळचद . १
शा चुनीलाल परशोतम . . १
शा माथा वखतचद १

पादरा—वडोदा—गुजरात

आचार्य श्री आत्मारामजी जैनशाला १
शा. ललुभाइ शीवजी... ... ... १

शा देवचद मगनभाइ . .. १
शा तलकदास खीमचद १
शा बापुभाइ हीमचद . १
शा दीपचद पीतांबरदास . १
शा छगनलाल हीमचद १
शा मोहनलाल हीमचद १
शा अमरतलाल वनमालीदास १
शा अमरलाल भाइचद १
शा हरगोवनदास भाइचद १
शा श्रीभोवनदास बापुभाइ १
शा ललुभाइ धीरचद १
शा ललुभाइ शाकरचद . १
शा वरजलाल शाकरचद १
शा कालीदास सुरचद . १
शा कालीदास मुळचद . १
शा पानाचद नानचद १
शा शिवलाल सोभागचद . १
शा मुलचद जयचद १
शा छोटालाल नाहालचद १
शा जेयचद पुजाभाइ १
शा गीरधरभाइ धीरचद १
डाक्टर सैयद आदम १
वकील नदलाल ललुभाइ १
तपशीजी उत्तमचद धनजी १
शा हीराचद मथुभाइ . १

पालणपुर—गुजरात

पारीख नगीनदास ललुभाइ २
दोशी गगल उमेदचद १
रा रा कोठारी सोभागचद वेलचद १
रा मेता चेला हीराचद १
रा मेता गोदड परथीराज १
पारीख मोकमभाइ लखजीभाइ .. १

राधनपुर—गुजरात

शा कुवरजी धनजी . १
शा भुदर वछराज १
शा कमलशी गुलाबचद (खास) १

एडन—अरेबीआ

शेठ मेगजी चांपशी भणशाली . . १
,, प्रेमजी हरजीवन महेता . १
,, मागजी अदरजी १
,, ठाकरशी प्रेमजी भणशाली १
,, माणेकचद लालजी महेता . १

पुना—दक्षिण.

शेठ गगलभाइ हाथीभाइ ५

शा माणेकचद नानचद १
श्री जैन पाठशाला—तलेगाम ... १
शा शामचद केवलचद—तलेगाम १

अहमदनगर—दक्षिण

शा पुनमचद नवलमल १
शा अमेचद रायचद ... १
शा वहालचद अमुलख १

भावनगर—काठिआवाड

जैनधर्मप्रसारक सभा १००
मेसर्स आर एम पी की कुंपनी १
रा रा माधवजी पदमशी .. १
भावसार देवकरण नथुभाइ १
भावनगर जैनसभा १

वलसाड—गुजरात

शा पुनमचद केसुरजी . . . २
शेठ रायचद मोटाजी . १

साणद—गुजरात

श्री जैन बोध बुद्धि प्रकाश सभा . १
महेता देवकरणभाइ अदेकरण १
महेता चुनीलाल कालीदास १

माणसा—गुजरात

श्री माणसा ज्ञानखाता हा शा
हाथीभाइ मुलचद ... १
शा वीरचद कृष्णाजी १
शा नथुभाइ महेचरदास १

पेथापुर—गुजरात

वकील डाह्याभाइ हकमचद १
शा नहालचद नागरदास . १

माडल—गुजरात

शा मगनलाल परशोत्तम . . १

शादरा—गुजरात

वकील छोटालाल ललुभाइ ... १
मी रणछोडलाल छगनलाल . . १
वकील फतेहचद रामचंद ... १

जलालपोर—गुजरात

शा पेमा लालाजी . . १
शा माधाजी फत्ताजी—आट ... १

कलकत्ता.

राय बद्रीदास बहादूर काला काल-
कारासजी १०
शा केठाभाई खेमेद १

आग्रा—हिंदुस्तान

लाला रामलाल छोहनलाल जोहरी ६
शेठ चुनीलालजी खजानची ... १

धुलीआ-दक्षिण-खानदेश.

शा शाखाराम दुलमदास २
शा शीवजी नगशी १

खेडा—गुजरात

शा सोमचद पानाचद २
शेठ रतनशी हरगोवन्दास १

गाअज—गुजरात

शा शीवलाल रणछोड १
शा हरगोवददास अमयाभाइ १

दिल्ली

लाला केसराचद बालमुकुद २
शा खुबचद तुलशीराम जवेरी १
शा जमनादास रायचद १

जायागज

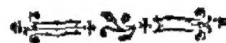
महाराज बाहादुर सिघराय धन
पतसिघजी बाहादुर ५
बाबु इद्रचद नहाता १

पेटलाद—गुजरात

श्री जैन विद्याशाला १
शा मोतीचद फुलचद १
शा चुनीलाल फतेचद १

मुतफरकात

शा नथमलजी धनराज, अजमेर ५
शा रवजीभाइ दीपचद, कोथ ५
श्री जैन पाठशाला, उदेपुर ४
मी लखमीचद गुलाबचद ढढा,
जेपुर ४
शा बेहेचरभाइ शीवदास, आजोल २
शा मोतीचद मानचद मोरवाड २
श्री ज्ञायला भडार, वनथाण २
शेठजी नवलचदजी सामनचदजी,
पाली २
सराफ भवानीराम रतनलालजी
सिकदराबाद २
दोशी जवेर हीराचद जैनविद्याशाला,
धोलेरा २
शेठ मगन चतुर, सीधपुर १
शा मोती पदमाजी, डेगाम १
शा मोती भरनाथजी, गोहमा १
शा हीराजी मनरुपजी, अबाच १
शा पराग धनजी, वाव, कामरेज १
शा फतुरचा पानाजी, परीआ १
शा प्रेमचद कल्याणचद, उमरगाम १
केशरीचद भाणाभाइ, बालीमोरा १
शा पमचद अभचद, गणदेवी १
शा माटा वनाजी, नवसारी १
शा मोतीजीजेचदजी, राता—वापा १
शा परागजी जेताजी, कोपर्ली—वापी १
शेठ नग्याराम दुलभदास जैनलाइब्ररी
महुवा १
श्री चाकणा जैन शाला, चाकणा १
शा बालचद्र इद्रशा, पवला, नासीक १
बाइ रतन उरफ नवा शा मुलचद
जादवजीकी बाधवा, कटोशण १
शा पानाचद कीशोरदास, दधाशान १
शा जेचद कल्याणजी, साधी १
शा व्रजलाल रगजी वृ...
शा इश्वर पाना...
श्री सघ दरावरा
श्री जैन ...
शा केशनजी
शा नेणशी
लखत...
पा ...
शा ...



इन सब महाशयोंका मैं पूरा

अमर